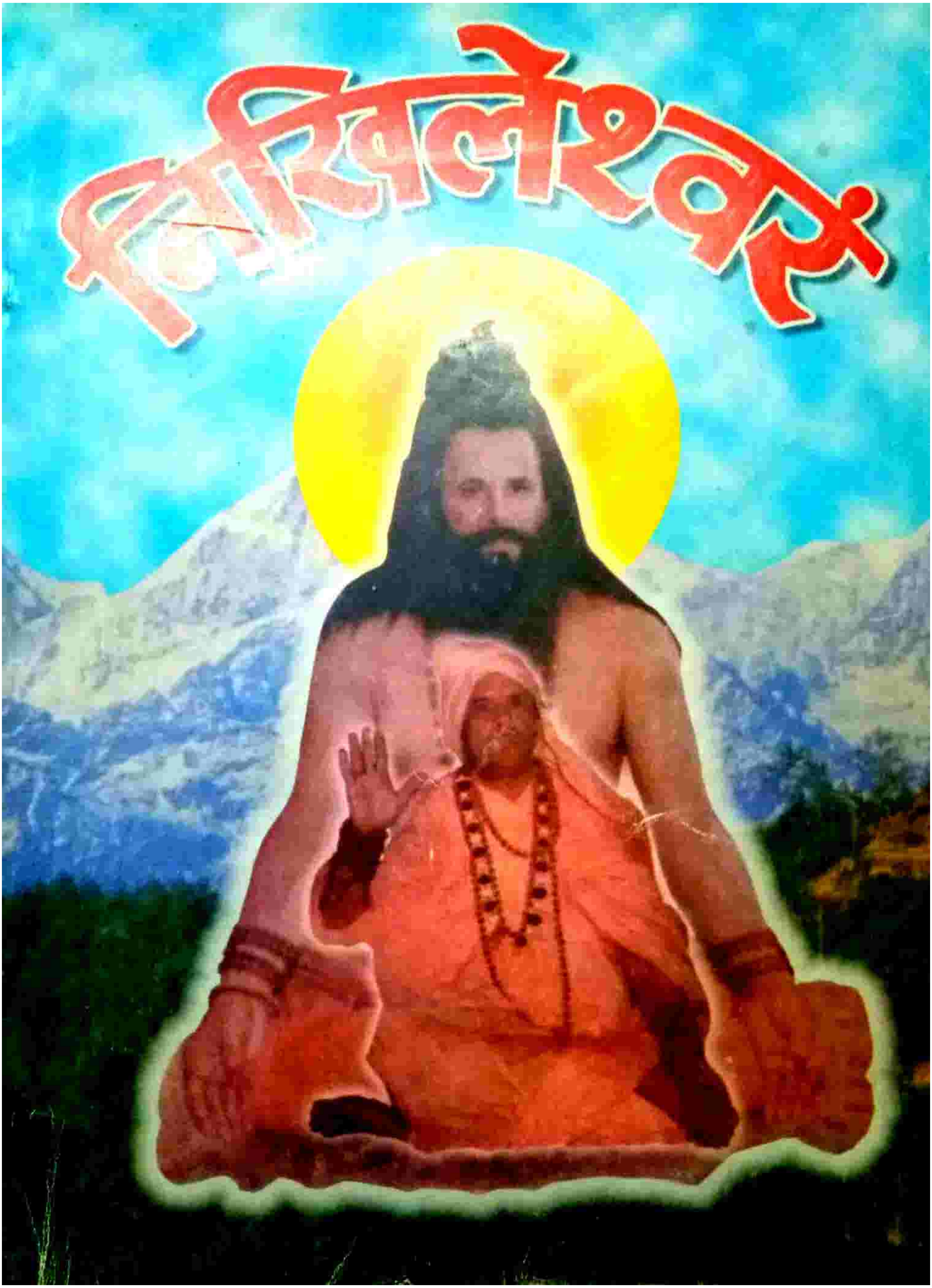

निखिलेश्वर

विषय सूची

निखिल रहस्यम्

भवेत्साहचर्य त्वं विचरति भ्रमेत व्यर्थ इद रं महाकाली लक्ष्मीं भवत भव देवी वर वदै।
शिवौ साक्षात्रूपं जगतपति ब्रह्मा सह शिवौ त्वद ध्यानं ज्ञानं परिमद परिपूर्ण इति च ॥

हे, प्रभु ! मुझे आश्चर्य तो उस समय होता है, जब आपके सम्पर्क में आने के बाद भी लोग किसी देवी देवता की साधना में भटकते हैं, सम्पूर्ण देवी देवताओं का निवास आपके शरीर में पूर्ण रूप से विद्यमान है, आप में एक साथ महाकाली, महालक्ष्मी, और महासरस्वती का सम्पूर्ण रूप से समावेश हैं, यदि सूक्ष्मता से ध्यान मग्न होकर देखें, तो आपके ललाट पर स्वयं भगवान शिव साक्षात् स्वरूप में दिखाई दे जाते हैं, जिन्होंनें आपके अनावृत्त वक्षस्थल को देखा हैं, उन्हें सम्पूर्ण स्वरूप के साथ भगवान विष्णु के दर्शन हुए हैं, जिन्होनें आपको साधना करते हुए आपके कोटि भाग को देखा है, तो उन्हें नाभि प्रदेश में स्वयं ब्रह्मा कमल दल पर विराजमान दिखाई दिये हैं, और मैं स्वयं इसका साक्षी हूं, इन्द्र, वरूण, कुबेर, दिक्पाल, यक्ष और सभी देवियां आपके शरीर में सम्पूर्णता के साथ पूर्ण विग्रह के साथ समाविष्ट हैं, तो फिर अलग-अलग देवताओं की उपासना या पूजा का क्या अर्थ? आपका ध्यान आपका पूजन, और आपका चिन्तन ही सम्पूर्ण देवताओं का पूजन और उनकी सिद्धि हैं ॥

न हं वासं नित्यं त्वद वरद लक्ष्मी शतमिदं त्व पूर्ण त्वं रूपं षट सहस रूपं पर चिति।
भवत्रूपं नित्यं श्रिय प्रिय महो पूर्ण इति च त्वमूढ़ त्वं व्यर्थं जपति दिव मंत्र मह इदं ॥

हे, गुरूदेव ! जब ये मूढ़ सांसारिक साधक आपसे लक्ष्मी साधना प्राप्त करने की इच्छा प्रगट करते हैं, तो बरबस मुझे हंसी आ जाती है, और उनकी नादानी पर तरस भी आता है, लक्ष्मी तो अपनी सम्पूर्ण सोलह कलाओं को लेकर आपके शरीर में साक्षात् सशरीर विद्यमान है, महर्षि मुद्गल ने स्पष्ट रूप से कहा है, कि "स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी" के शरीर में सोलह कला पूर्ण लक्ष्मी पूर्णता के साथ विद्यमान हैं, इस ऋषि की वाणी मिथ्या कैसे हो सकती है? देह सुख, स्वास्थ्य, धन, पृथ्वी-सुख, भवन, कीर्ति-लक्ष्मी, आयु-लक्ष्मी, यश-लक्ष्मी, पुत्र-पौत्र, वाहन, सम्पूर्णता, ऐश्वर्य, भोग और दीर्घायु-लक्ष्मी अपनी समस्त कलाओं के साथ जब आपके शरीर में पूर्णता के साथ विद्यमान हैं, तो ये मूढ़ अलग-अलग लक्ष्मी के मंत्र जप कर कर अपना जीवन और समय व्यर्थ में क्यों बरबाद करते हैं? आपकी साधना ही तो सम्पूर्ण लक्ष्मी की साधना है ॥

प्रवेश



वेदों के आदि ग्रन्थ ऋग्वेद में आया है, जहां ऋषि ने आकांक्षा प्रकट की है कि मैं उच्चकोटि की साधना सम्पन्न कर अपने जीवन काल में सिद्धाश्रम पहुंच सकूं और वहां प्रकृति के उन रहस्यों को जान सकूं जो अपने आप में अद्वितीय अगोचर और रहस्यमय है, इसके वाद पौराणिक काल में भी कई स्थानों पर सिद्धाश्रम का वर्णन आया है, यहां तक कि भगवान श्रीकृष्ण ने भी सिद्धाश्रम की भूरी -भूरी प्रशंसा की है, भीष्म पितामह ने भी मरते समय भगवान श्रीकृष्ण से हाथ जोड़कर गद्‌ग कंठ से एक ही याचना की है कि मैं किसी भी प्रकार से सिद्धाश्रम पहुंच सकूं और उन प्रातः स्मरणीय ऋषियों के और अपने पूर्वजों के दर्शन कर सकूं जो कि अपने जीवन काल में ही, साधना सम्पन्न कर सशरीर सिद्धाश्रम पहुंचे हैं।

आधुनिक काल में भी ऐसे कई सिद्ध योगी हुए हैं, जिन्होंने साधनाएं सम्पन्न कर इस महान पुण्यदायक क्षेत्र में प्रवेश पाया है, और अपने जीवन को सफल बनाया है, स्वामी कृपाचार्य, योगी ज्ञानानन्द, स्वामी विशुद्धानन्द, लाहिडी महाशय और ऐसे अन्य कई सन्यासी और गृहस्थ दोनों ने ही अपने - अपने ढंग से साधनाएं सम्पन्न की हैं और अपने जीवन काल में ही सिद्धाश्रम पहुंच कर अपने जीवन को सफल बनाया है ।

मानसरोवर और कैलाश पर्वत से उत्तर की ओर एक महत्वपूर्ण स्थान पर यह मीलों लम्वा और चौड़ा भव्य अद्वितीय प्रकृति निर्मित आश्रम है, कहते हैं कि श्री ब्रह्मा जी के आदेश से स्वयं विश्वकर्मा ने अपने हाथों से इस आश्रम की रचना की है, भगवान विष्णु ने इसकी भूमि को, प्रकृति को और वायुमंडल को सजींव सप्राण सचेतना युक्त बनाया है, और भगवान शंकर की कृपा से यह अजर और अमर है, इसका तात्पर्य यह है कि इस आश्रम में रहने वाले किसी भी योगी या सन्यासी को जरा अर्थात वृद्धावस्था व्याप्त नहीं होती, वह चिर नवीन चिर सौन्दर्य युवा और यौवनमय वना रहता है, साथ ही साथ अमरता का वरदान होने से इस आश्रम में मृत्यु की काली छाया व्याप्त नहीं होती, यहाँ किसी की मृत्यु हो ही नहीं सकती, इसीलिए इस आश्रम को देवताओं के लिए दुर्लभ और अद्वितीय वताया गया है।

आश्रम का मुख्य द्वार अपने आप में अलौकिक है, यह सम्पूर्ण क्षेत्र आकाश में उड़ कर या वायुयानों से अथवा सूक्ष्म केमरों के माध्यम से न तो देखा जा सकता है न इसकी फोटो अंकित की जा सकती है क्योंकि यह अपने आप में आध्यात्मिक ज्ञान पुंज है, और उच्च कोटि की साधनाओं से सप्राण है। ऐसी साधनाओं के आगे विज्ञान वोना सा बन कर रह गया है, उसमें यह क्षमता नहीं है कि यह अपने प्रयत्नों से इस आश्रम को देख सके, या अंकित कर सके।

इस आश्रम की अनेक विशेषताएं हैं जिसको शब्दों में बांधा ही नहीं जा सकता, वशिष्ट ने कहा यदि मैं अपने पूर्ण ज्ञान से इस सिद्धाश्रम के सौन्दर्य का वर्णन लेखनी के माध्यम से करुं तो ऐसा होना असंभव है, क्योंकि यहां पर पग -पग पर प्रकृति अपने मूल रूप में वियमान है और इस सिद्धाश्रम में एक अत्यन्त आनन्दयुक्त प्रकाश विखरा हुआ रहता है, जो कि अपने आप में प्रफुल्लित एवं आनन्द युक्त हैं ।

इस आश्रम का विस्तार सैकड़ों मील लम्बा और सैकड़ों मील चौड़ा है, जहां पर न तो सर्दी पड़ती है और न विशेष गर्मी, एक मधुर आनन्दयुक्त मौसम वना रहता है, यहां पर न तेज धूप पड़ती है और न रात की अपनी छाया , गोधुली से पहले जो मधुर प्रकाश विखरा हुआ होता है, ठीक ऐसा ही प्रकाश पूरे सिद्धाश्रम में विखर कर सुखद अनुभव देता है।

इस सिद्धाश्रम के मुख्य द्वार से लगभग आधा भाग अन्दर जाने पर तो ऐसा लगता है कि जैसे साक्षात स्वर्ग में ही आ गये हों, बाईं और अत्यन्त विशाल गहरी और निरन्तर प्रवहशील सिद्ध योगा झील बहती है, जिसका पानी स्वच्छं निर्मल और पवित्र है, इस पानी की विशेषता है कि इसमें स्नान करते ही लौकिक जीवन के सभी रोग स्वतः समाप्त हो जाते हैं, और व्यक्ति पूर्ण रोग मुक्त और चिर यौवनमय वन जाता है।उसकी वृद्धावस्था समाप्त हो जाती है, सिर के वाल काले और सुन्दर वन जाते हैं, सारे शरीर की झुरियां और दुख के चिन्ह समाप्त हो जाते हैं, आंखों की रोशनी अपने आप में बढ़ जाती है , और एक प्रकार से देखा जाय तो उसके शरीर का काया कल्प सा हो जाता है।

सिद्ध योगा झील के किनारे स्फटिक की पारदर्शी नौकाएं ओर चम्पू पड़े हुए हैं , जिस में वैठ कर योगी,सन्यासी सिद्ध योगा झील में

दूर-दूर तक विचरण कर आनन्द उठाते हैं, प्रकृति के सौन्दर्य को निहारते है और अपने जीवन को पूर्णता देने का प्रयास करते हैं, कहीं पर सिद्ध योगा झील के किनारे कुछ स्वस्थ यौवनवान सन्यासी साधनारत है तो कहीं सिद्धयोगा झील में स्नान करती हुई यौवनमयी सन्यासिनियां एक दूसरे पर पानी उछालती हुई किलोल करती हुई,हंसी के वातावरण में निमग्न है कहीं पर झील के किनारे ही कुछ सन्यासिनियां सुन्दर वस्त्रों में सुसज्जित सुकुमार मृगछौनों से खेल रही होती है तो कहीं कुछ सन्यासी शास्त्र चर्चा में लीन प्रकृति के महत्वपूर्ण रहस्यों को पहिचानने का प्रयास करते हुए दिखाई देते हैं।

झील के दूसरी तरफ ऊंचे-ऊंचे देवदार के घने पेड़ और उनकी शीतल छाया अपने आप में अलौकिक दृश्य उपस्थित करती है, ऐसा लगता है कि एक ही कतार में देवता लोग खड़े हुए इन सन्यासिनियों का अभिनन्दन कर रहे हों, संसार में जितने तरह के पुष्प है, उससे भी अधिक हजारों प्रकार के पुष्प हमेशा विकसित रहते हैं, सिद्धाश्रम पर मृत्यु की छाया व्याप्त नहीं होती, इसलिए ये अद्वितीय वहुरंगी सुगन्धित पुष्प नित्य खिले हुए रहते हैं ।

थोड़ा सा ही आगे बढ़ने पर सुन्दर पत्तों और हरी भरी घास से आच्छादित अत्यन्त ही मनोहर आश्रम बने हुए हैं, ठीक वैसे ही, जैसे कि हमने पुराणों में पढ़े हैं । इस आश्रम में उच्च कोटि के सन्यासी बैठे हुए अपने शिष्यों को प्रकृति के उन रहस्यों को समझा रहे होते है, साधना की उन ऊंचाइयो को बता रहे होते हैं, जिनकी यहां पर कल्पना भी नहीं की जा सकती, हजारों वर्ष पुरानी आयु प्राप्त ये योगी सन्यासी अपने -आप में ज्ञान साधनायोग के साकार पुंज हैं। यह जीवन का सौभाग्य कहलाता है। इनके चरणों में बैठने से पूर्ण मानसिक शान्ति प्राप्त होती हैऔर इनके द्वारा जो ज्ञान प्राप्त होता है, उसका वर्णन, यह लेखनी कर ही नहीं सकती।

कहीं पर यज्ञ धूम से वातावरण ही सुगन्धित हो रहा है, वैदिक मन्त्रों के माध्यम से यज्ञसम्पन्न करते हुए, सन्यासियों का दृश्य देखते ही बनता है, कहीं पर किसी वृक्ष के नीचे, अत्यन्त ही वृद्ध, महत्वपूर्ण योगी अपनी साधना में निमग्न है और उसके पास ही सैकड़ो प्रकार के पक्षी कलख करते हुए सुनाई पड़ते हैं, कहीं पर स्फटिक पत्थरों से निर्मित आलीशान भव्य भवन है, जहां पर कुछ गृहस्थ साधक अपनी साधनाओं में मग्न है जिसकी जहां पर रुचि हैं वे वहीं पर विश्राम कर सकते है विचरण कर सकते हैं, अवलोकन कर सकते है कहीं पर भी किसी प्रकार का सुराग छिपाया नहीं है। रोक टोक नहीं, छल प्रपंच नहीं है पाखंड, द्वेष कामवासना, लोभ और अहंकार से परे ये सभी साधक-साधिकाएं एक अजीब सी मस्ती में अजीब सी खुमारी, अजीब से वातावरण में मग्न है, मस्ती से भरे है आनन्द से सरोवार हैं।

पर यह आश्रम पूर्णतः सुव्यवस्थित और नियमों से आबद्ध है, अनुशासन युक्त है।इसके संचालक हजारों वर्षो की आयु प्राप्त महायोगी स्वामी सच्चिदानन्द जी है जिनका नाम ही गंगा की तरह पवित्र है और हिमालय की तरह विराट है। इनके दर्शन करने के लिए देवता लोग भी तरसते हैं, जो ज्ञान और तपस्या के साकार पुंज है जिनके रोम-रोम से ज्ञान और आनन्द की, त्याग और तपस्या की लहरियां बिखरती रहती हैं, उनके अनुशासन में यह हजारों वर्षो से आश्रम सुव्यवस्थिति है, संचालित है।

आज भी हम अपनी खुली आंखों से वेदों और पुराणों में वर्णित उन उच्चकोटि के योगियों और ऋषियों को अपनी आंखों से देख सकते हैं, वशिष्ठ विश्वामित्र, कणाद, अत्रि, पुलस्त्य , गौतम, भीष्म, युधिष्ठर और श्रीकृष्ण जैसे योगियों को आज भी अपनी आंखों से देख सकते हैं, उनसे वार्तालाप कर सकते हैं । उनके पास बैठ कर उच्चकोटि की साधनाएँ सम्पन्न कर सकते हैं, इससे बड़ा सौभाग्य और हमारे जीवन में क्या हो सकता है, इस आश्रम में प्रवेश के भी अपने नियम है । कोई भी साधक कोई भी योगी या कोई भी सन्यासी अपनी इच्छा से इस आश्रम में प्रवेश नहीं पा सकता, यद्यपि उन सब का स्वप्न, उन सब का लक्ष्य एक ही है कि सिद्धाश्रम में प्रवेश पा सकें ।इन आश्रम में प्रवेश पाने के लिए अपने गुरु से ब्रह्म ज्ञान की दीक्षा लें। साथ ही ब्रह्म चेतना की साधना सम्पन्न कर पूर्ण कुण्डलिनी जाग्रत करें और समस्त चक्रों का भेदन कर सहस्त्रार दर्शन करें ।

सिद्धाश्रम के संस्थापक - संचालक महान योगीराज स्वामी सच्चिदानंद जी ने पिछले हजारों वर्षों में मात्र तीन ही शिष्य बनाये हैं। क्योंकि उनका शिष्य बनने की कसौटी अपने आप में अत्यन्त कड़ी और दुर्जेय है। ऐसे दिव्य सिद्धाश्रम में आज बहुत हलचल है फूल मानो मन्द-मन्द मुस्करा रहे हैं, वृक्ष और बेलें पवन वेग से नृत्यमय हैं सभी और सन्यासी, साधक,सन्यासिनियां आदि एकत्रित हैं। आज योगीराज स्वामी सच्चिदानंदजी अपने प्रधान तथा अत्यंत प्रिय हृदयस्वरूप शिष्य स्वामी निखिलेश्वरानंद को तत्व दीक्षा देकर पूर्णता देने वाले है और आज वह अपना एक ऐसा निर्णय भी स्पष्ट करने वाले हैं जिसके विषय में सभी असमंजस में हैं। वास्तव में सिद्धाश्रम की यह परंपरा रही है कि जगत में तमान्धकार को समाप्त करने के लिए वहां से श्रेष्ठ ऋषियों को यहां भेजा जाता रहा है जो जगत में आकर दुःख,दैन्य को झेलते हुए अपने को तिल-तिल जलाते हुए ज्ञान के प्रकाश को सर्वत्र फैला देते हैं, ऐसे ही स्वामी हिरण्यगर्भ को जब भेजा गया तो भारत भूमि में उन्होंने भगवत्पाद शंकराचार्य रूप जन्म लेकर भारत भूमि का कल्याण कर दिया और आज जब योगीराज अपने शिष्य को । तत्व दीक्षा दे रहे है तो सभी एकाग्रता के साथ उन्हें सुन रहे हैं । स्वामी सच्चिदानंद जी कह रहे हैं - मुझे अत्यधिक आनन्द और हार्दिक प्रसन्नता है, कि जगज्जननी मां नित्य लीला बिहारिणी की अनुकम्पा से पिछले कई सौ वर्षों बाद मुझे ब्रह्माण्ड की गुढ़ गोपनीय, और परम दुर्लभ तत्व दीक्षा देने का अवसर मिला है। तत्व दीक्षा जीवन की पूर्ण श्रेष्ठतम और सर्वोत्तम दीक्षा होती है, पिछले दस हजार वर्षों में यह तीसरा अवसर है, कि जब मैंने तत्व दीक्षा देने का मानस बनाया है क्योंकि इस दीक्षा को प्राप्त करना कई-कई जन्मों की तपस्या पुण्योदय और साधना के समन्वित स्वरूप से ही

सम्भव है, जब नित्य लीला विहारिणी की कृपा से अणु अणु अपने आप में चैतन्य, प्राणवान, वेगवान और ब्रह्मांड मय होता है, तभी साधक तत्वज्ञान दीक्षा के पथ पर पहला कदम रखता है, जब साधक गुरु की पूर्ण आन्तरिक कृपा और आशीर्वाद प्राप्त कर सम्पूर्ण ब्रह्मांड को अपने हृदय में और मुख में स्थापित करने की क्रिया जान लेता है तभी वह इस तत्व ज्ञान दीक्षा के पथ पर दूसरा कदम बढ़ाता है। और जब साधक अपनी साधना के फलस्वरूप सम्पूर्ण लोकों में सशरीर विचरण करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है, उसके लिए कुछ भी अगम अगोचर नहीं होता तभी वह इस देव-पथ पर तीसरा कदम बढ़ाता है । पिछले दस हजार वर्षों में यह तीसरा अवसर है, मात्र तीसरा व्यक्ति —जो इस दीक्षा को प्राप्त करने का अधिकारी हो सका है। तब यह स्वतः कल्पना की जा सकती है कि यह दीक्षा अपने आप में कितनी गूढ़, एवं जटिल और कठिन है ।

साधनात्मक धरातल अपने आप में अत्यधिक कठिन और तलवार की धार पर चलने के समान होता है, जो व्यक्तित्व सन्यास की उच्च भाव भूमि को जी सकता है जो अपने बलबूते पर सिद्धाश्रम में प्रवेश प्राप्त करता है, जिसके सामने समस्त साधनाएं स्वतः नर्तन करने लगती हैं, ब्रह्म और अक्षर ,शब्द और भाषा पर जिसका जबरदस्त अधिकार होता है, जिसके कंठ में वाग्देवी स्वतः विराजमान होती हैं, और जो अणिमा, आदि अष्ट सिद्धियों को पूर्णता के साथ प्राप्त कर सभी शास्त्र वेदांत, उपनिषद और दर्शन का सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त कर पाता है, जो किसी भी विषय पर धारा प्रवाह अनवरत रूप से गतिशील होने की क्षमता रखता है, जिसे परकाया प्रवेश , ब्रह्माण्ड-भेदन, सूर्य सिद्धांत और नक्षत्र गति सम्यक् सिद्धिया प्राप्त होती है, वही इस तत्व दीक्षा को प्राप्त करने का अधिकारी होता है, जो साधनाओं के क्षेत्र में अलौकिक होते हुए भी सरल, निरहंकार सामान्य बने रहने की प्रक्रिया जानता है, जो सैकड़ों, हजारों सन्यासी ऋषियों का निरन्तर मार्गदर्शन करते हुए उन्हें इस पथ पर अग्रसर करने की क्षमता प्राप्त करता है वही तत्व दीक्षा प्राप्त करने की क्षमता प्राप्त करता है और वही तत्व दीक्षा प्राप्त करने का अधिकारी होता है, जो विपरीत परिस्थितियों में भी हिमालय की तरह अडिग रह कर चुनौतियों के वार अपने सीने पर झेलने की क्षमता रखता है, जो विपरीत परिस्थितियों में भी प्रसन्न चित्त और शान्त बना रह सकता है, जो हजारों सिद्धियों को प्राप्त करने के बावजूद भी सर्वथा सरल, निष्कपट और निःस्वार्थ जीवन जीने की कला जानता है उसी को तत्व दीक्षा दी जाती है ।

और 'निखिल' जो कि मेरे हृदय का आधार और मेरी आत्मा का ही प्रतिबिम्ब है, जिसके कण-कण में मेरी ज्ञान चेतना का स्फुलिंग विद्यमान है, उसे तत्व दीक्षा देते हुए , मैं अत्यधिक हर्षित और आनन्दमय हूँ। पिछले छः हजार वर्षों में यह पहला अवसर है, कि मैंने पुनः किसी व्यक्तित्व को तत्व दीक्षा युक्त व्यक्तित्व माना, मैने प्रत्येक कसौटी पर निखिल को कसा और प्रत्येक बार वह और अधिक तेजस्वी रूप में निखर कर सामने आया, मैनें जितनी बार भी उस-पर प्रहार किये, उतनी बार वह और अधिक सौम्य रूप में मेरे सामने उपस्थित हुआ, कठिन से कठिन साधनाओं को उसने विपरीत परिस्थितियों में भी चुनौती के रूप में स्वीकार करते हुए सिद्धता प्राप्त की, बीहड़ और दुर्गम हिमालय के सुदूर स्थानों पर भेज कर मैंने उसके धैर्य की परीक्षा लेने का प्रयास किया और हर बार वह पूर्ण क्षमता के साथ सफलता पूर्वक अपना शिष्यत्व सिद्ध किया, ऐसी कोई साधना, ऐसी कोई सिद्धि ऐसा कोई योग और ऐसा कोई दर्शन बाकी नहीं है जिसे निखिल ने प्राप्त न किया हो, सन्यास जीवन में उसने सन्यस्त की उच्च भाव भूमि को स्पष्ट किया, एक प्रकार से वह सर्वथा विरक्त और वीतरागी जीवन जीते हुए, अपने शिष्यों का विपरीत परिस्थितियों में भी जिस प्रकार से मार्ग दर्शन किया, वह अपने आप में स्तुत्य है ।

निश्चय ही सिद्धाश्रम ब्राह्माण्ड का सर्वाधिक तेजस्वी और ज्योतिर्मय भू भाग है, जिस पर काल का कोई प्रभाव व्याप्त नहीं होता, जहां पर ऋतुओं का दुखद परिवर्तन नहीं होता, जिसका कण-कण अपने आप में तेजस्विता युक्त है, ऐसें सिद्धाश्रम को भी पूर्णता के साथ संवारने,मनोरम और उच्चतम बनाने में निखिल ने जो कार्य किया है, वह अपने आप में सराहनीय है, एक प्रकार से कहा जाय तो लगभग निश्चेष्ट सिद्धाश्रम की भूमि को उसने अपने जीवन्त प्रयासों से सप्राण और आनंदयुक्त बना दिया है, अब यह सिद्धाश्रम केवल बूढ़े सन्यासियों की साधनास्थली ही नहीं है, अपितु हलचल युक्त आनन्दमय तपो भूमि है, जहां सिद्ध योगा झील की लहर में, उसकी तरंग और संगीत में निखिल का प्रयत्न स्पष्ट सुनाई पड़ता है, चारों तरफ जीवन्तता खिलखिलाहट, उमंग , और आनन्द का जो प्रवाह प्रवाहित है, उसके पीछे एकमात्र निखिल का ही प्रयास स्पष्टता के साथ दृष्टिगोचर हो रहा है, निखिल के प्रयत्नों से ही देव कन्याएं और देव अप्सराओं ने अपनी कलाओं के प्रदर्शन को सौभाग्य माना, निखिल के परिश्रम के फलस्वरूप ही यहां के हजारों वर्ष की आयु प्राप्त सन्यासियों के शरीर में भी वेगमय ऊर्जा प्रवाहित हुई, सन्यासिनियों, देव कन्याओं, अप्साराओ के विचरण, उनकी नुपूर ध्वनियों और उनकी खिलखिलाहटों के बावजूद भी सर्वत्र संयम और अनुशासन बना रह सका,यह सब मात्र एक व्यक्तित्व का ही परिश्रम और प्रभाव है इसे स्वीकार करते हुए, मुझे कोई संकोच नहीं।

पूरे सिद्धाश्रम के योगियों,सन्यासियों, साधुओं, अप्सराओं, सन्यासिनियों और देव कन्याओं की आंखों में निखिल का प्रतिबिम्ब अहर्निश विद्यमान रहता है, उनकी आंखों में हर पल निखिल की छवि विद्यमान है, मैं देखता हूँ कि जब भी वह सिद्धाश्रम में प्रवेश करता है, तो उच्चकोटि के सन्यासी भी उसकी चरण धूलि को लेने के लिए व्याकुल हो उठते हैं, सब की आंखों में एक पुलक, एक थिरकन और एक मस्ती व्याप्त हो जाती है, एक प्रकार से पूरा सिद्धाश्रम मस्ती में झूमने लग जाता है, ऐसे बहुमुखी व्यक्ति को जब मैं स्वतः सिद्धियों के शीर्ष स्थान पर देखता हूँ तो मेरे हृदय में रोमांच और आनन्द का सागर लहराने लग जाता है।

मै इस तत्व दीक्षा देने के साथ-साथ निखिल को संसार की जटिल संघर्ष स्थितियों में भेज रहा हूँ, आज विश्व भौतिकता की विलासिता में आकण्ठ डुब गया है चारों तरफ अन्धकार सा व्याप्त होने लगा है, धर्म और अध्यात्म के प्रति उनकी आस्थाएं न्यून हो गई है, उन्होंने भोग को ही पूर्णता मान लिया है, और साधनाओं तथा सिद्धियों के प्रति उनके मन में संदेह होने लगा है, पूर्वजों के प्रति सम्मान नहीं रहा है, और सन्यासियों, योगियों का मखौल उड़ाया जाने लगा है, भौतिकता की चकाचौंध में धर्म, दर्शन, योग, मीमांसा, ज्योतिष, आयुर्वेद एवं अन्य भारतीय विद्याओं का लोप सा होने लगा है, और यदि यही स्थिति रही तो मैं देख रहा हूँ कि भारतवर्ष से मन्त्र तन्त्र आदि पूर्व विद्याओं का सर्वथा लोप हो जायेगा और पूरा विश्व निश्चय ही मृत्यु के मुंह में काल का ग्रास बन कर रह जायेगा।

ऐसे समय में तेजस्वी व्यक्तित्व की भारत वर्ष को आवश्कता है, जिसमें धैर्य और संयम हो विपरीत परिस्थितियों में भी जूझने और विजय प्राप्त करने की जिसमें क्षमता हो, आलोचनाओं और विरोधियों के बीच भी जो सहिष्णु जीवन जीने की क्षमता रखता हो,मुझे ऐसा व्यक्ति एक मात्र निखिल के रूप में ही दिखाई देता है, और उसे इस संघर्षमय संसार में भेज रहा हूँ, जहां पर यह पुनः भौतिकता पर अध्यात्म को स्थापित कर सके, जो भोग पर साधना की स्थापना कर सके, और जो भारतवर्ष की धरती पर गूढ़ विद्याओं को पुनः जीवित कर जन जन में उसे व्याप्त कर सके।

निश्चय ही यह संक्रमण काल है, पूर्णतः विपरीत और दुर्गम, कठिन और यातनामय परिस्थितियों में, एक प्रकार से आलोचनाओं की धधकती हुई आग में निखिल को धकेल रहा हूँ, परेशानियों और व्राधाओं के सामने उसे बढ़ने के लिए आज्ञा दे रहा हूँ, गालियों, अपमान,आलोचनाओं, के अलावा इस वातावरण में कुछ भी नहीं है, अनास्था और पाखंड के इस घटा टोप अन्धकार में, मैं उसे भेज रहा हूँ, मुझे विश्वास है कि ऐसी विपरीत परिस्थितियो में एक मात्र निखिल ही मेरे स्वप्नों को साकार करने की क्षमता रखता है, और वह निश्चय ही विजय श्री प्राप्त कर सकेगा ।

शंकराचार्य, गोरखनाथ, और विश्वामित्र के समय में भी इतनी विपरीत परिस्थितियां नहीं थी, पर निखिल ब्रह्म तत्व से ऊर्जित व्यक्तित्व है, और वह अपनी जीवन्तता, क्षमता और पौरुषता के साथ स्वयं तो सफल होगा ही, हजारों गृहस्थ शिष्यों को भी पूर्णता, प्रदान कर सकेगा।

मैं अपने हृदयस्थ आत्म स्वरूप निखिल को तत्व दीक्षा देते समय अत्यधिक गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूँ, मेरा और नित्य लीला विहारिणी जगज्ननी का आर्शीवाद प्रत्येक क्षण उसके साथ है।

तत्व दीक्षा प्रदान के पूर्व स्वामी सच्चिदानंद जी ने जब कहा कि सिद्धाश्रम में सभी दिव्य योगियों के प्रिय निखिल, सभी साधकों के साध्य स्वामी निखिलेश्वरानंद सिद्धाश्रम छोड़कर संसार में तिल-तिल कर जलने के लिए जाएंगे तो सभी का हृदय धक से रह गया वहां उपस्थित महर्षि भृगु अपनी पैनी दृष्टि से देख रहे थे जहां सम्पूर्ण सिद्धाश्रम एक बारगी इस निष्कर्ष से हिल गया था वहीं स्वामी सच्चिदानंद जी की जिह्वा भी ऐसा कहते हुए थरथरा रही थी परन्तु फिर भी उनके प्रिय शिष्य निखिल ने पूर्ण धैर्य पूर्वक उनके आदेश को सुना क्योंकि महर्षि भृगु की ही उपस्थिति में जब स्वामी सच्चिदानंद जी ने निखिल से यह कहा था तब शिष्य ने उत्तर दिया था, मैं लौकिक जीवन में गृहस्थ रूप में रह कर आपकी आज्ञा को पूर्णता देने का प्रयास करुंगा परंतु मैंने उस समाज को देखा है, भोगा है, अब वह समाज नहीं रहा जो कभी था, पहले तो एक ही पादपद्म पैदा हुआ था, जिसने शंकराचार्य को जहर देकर मार दिया था परन्तु मेरे पास तो सैकड़ों पादपद्म शिष्य उपस्थित रहेंगे मैं जा अवश्य रहा हूं पर समाज का और शिष्यों का जितना जहर मुझे पीना पड़ेगा वह मैं ही जानता हूँ ।

पूरे सिद्धाश्रम में पूज्य स्वामी सच्चिदानंद जी के इस कठोर आदेश से निस्तव्धता सी छा गई थी, परंतु निखिल निश्चित था। एक दिन अवसर मिलने पर उसने गुरुदेव से निवेदन किया प्रभो! आप मुझे पुनः गृहस्थ में भेज रहे हैं इसके पीछे कोई हेतु होगा, मुझे आपकी आज्ञा शिरोधैर्य है, निश्चय ही मैं आपके जीवन वृतांत को लिपिबद्ध करने का पयत्न करुंगा।

स्वामी जी बोले - निखिल! मेरा जीवन वृतांत कागजों पर नहीं, अपने हृदय पर लिखो वास्तव में ही साधु, सन्तों, महर्षियों की जीवनी कागजों पर नहीं हृदय पर अंकित करने की होती है। मैंने पूछा- तो मुझे क्या करना है ?

गुरुदेव बोले- तुम्हें गृहस्थ में इसलिए भेज रहा हूँ कि देश में और विश्व में ज्योतिष शास्त्र को पुनर्जिवित करो, साधना पक्ष को चेतन करो, मन्त्र शास्त्र के प्रति लोगों की आस्थायें विकसित करो, और --

और प्रभु !

पुस्तकें तो लिखों ही, पर इसके साथ ही सजीव ग्रन्थ तैयार करो, अगर पूरे भारत में से बीस युवक भी ऐसे तैयार कर दिये जो मंत्र-तंत्र, योग साधना, ज्योतिष आदि के उत्थान में जीवन खपाने को तैयार हो, परिश्रमपूर्वक साधना करने में विश्वास रखते हों और तुम्हारे विश्वासों की रक्षा कर सकने में समर्थ हों तो तुम्हारा परिश्रम सफल समझो।

परन्तु प्रभू मैं आश्रम का जीवन जीते -जीते उसका अभ्यस्त हो गया हूँ । और पुनः गृहस्थ में जाने की बात स्मरण करके ही परेशान हो जाता हूँ , गुरुवर! गृहस्थ में दुख बाधाएं, परेशानियां, संकट और कठिनाइयां हैं, यदि कभी जरुरत से ज्यादा दुख और परेशानी आ

जाए तो -स्वामी जी बोले तू कौन है ? तेरी डोरी तो किसी दूसरे के हाथ में है, जरुरत से ज्यादा विपत्ति अनुभव हो तो सब कुछ छोड़ छाड़कर इष्टदेव के चरणों में साष्टांग गिर जाना- बस !

स्वामीजो अपने शिष्य की वेदना को देख रहे थे, समझ रहे थे इसलिए एक दिन उन्होंने स्पष्ट किया पुत्र! सन्यास जीवन एकांगी जीवन है, आज आवश्कता समाज को चैतन्य करने की है आधा शक्ति मां की क्रियाओं तथा भौतिक जगत के स्थूल व्यापारों में संघर्ष की वजह से पाप,क्रोध, छल, धोखा, असन्तोष, विग्रह आदि आसुरी प्रवृत्तियां व्याप्त होने लगी हैं और धीरे-धीरे इस भू पर आसुरी प्रवृत्तियों का विकास बढ़ता जा रहा है, ऐसे समय में एकान्त - भोगी होने से जीवन निर्माण का पूर्ण उद्देश्य अपूर्ण रह जाएगा । इस समय आवश्यकता इस बात की है कि इस स्थूल व्यापार में संलग्न मानव को सही रास्ता दिखाने के लिए प्रयत्न किया जाय और उस आद्य प्रकाश को पुनः स्थापित किया जाए जिससे कि भूतल पर दया, करुणा,प्रेम, स्नेह की अमृत वर्षा हो सके। यह कार्य सन्यास में रह कर संभव नहीं है। यदि गृहस्थ लोगों के बीच कार्य करना है तो गृहस्थ के रूप में रहकर ही संभव है, इसलिए इस जीवन में तुम्हें गृहस्थ में प्रवेश देने के लिए मुझे बाध्य होना पड़ा है, मैं जानता हूँ तुम्हारे जीवन के तुन्तु भोगमय न होकर योगमय ही रहे हैं परन्तु फिर भी मुझे उस जगज्जननी मां के संकेत से तुम्हें पुनः गृहस्थ में प्रवेश देने की कठोर आज्ञा देनी पड़ी है । यद्यपि वत्स ! इससे तुम्हारे चित्त पर कठोर आघात लगा है फिर भी यह प्रकृति के मूल धर्मों के अनुरूप है। तुम्हारे मन में यह दृढ़ संकल्प बना रहना चाहिए कि तुम तभी अपने जीवन में पूर्णता का अनुभव कर सकोगे जब तुम इन विद्याओं को पुनः पल्लवित, पुष्पित कर सकोगे।

गृहस्थ में तुम्हारी पत्नी को तुम पत्नी न समझते हुए आद्याशक्ति के प्रकाश का एक कण अनुभव कर सकते हो। तुम्हारा गृहस्थ-गृहस्थ न होकर उस लीला विहारिणी का एक कौतुक है जो कि समाज के लिए गृहस्थ का पर्याय होगा जबकि मेरे लिए वह एक सुखद कल्पना, एक अनुकूल आश्चर्य और मां जगदम्बा का एक निर्लिप्त प्रकाश बिंदु है। तुम्हें लक्ष्य प्राप्त कर शीघ्र ही मेरे पास बुलाना है और हमेशा के लिए इस सिद्धाश्रम को तुम्हें संभालना है पर इससे पूर्व तुम्हारे कार्य की पूर्णता हो जानी आवश्यक है, मुझे तुम पर अगाध विश्वास है। समय बीतते देर नहीं लगती और फिर आखिर वह दिन भी आ गया जिस दिन सिद्धाश्रम से स्वामी निखिलेश्वरानंद विदा लेने वाले थे। सारा वातावरण बोझिल था ऐसा लगता था जैसे पूरा सिद्धाश्रम शांत हो ऐसे में अश्रुपूर्ण नेत्रों से देखते हुए हिचकियां भरते हुए निखिल ने गुरुदेव से पूछा- गुरुदेव ! आप मुझ भुला मत देना ।

स्वामी जी मुस्कराऐ और बोले - जब तूं मुझे स्मरण रखेगा तो मैं तुझे कैसे भुला सकूंगा ।

उनके इस छोटे से वाक्य में कितना गूढ़ अर्थ छिपा था ।

स्वामी निखिलेश्वरानंद तो जाने के लिए तैयार हो चुके थे पर यह वो व्यक्ति था जिसके कहकहों,मुस्कुराहटों तथा कार्यों से एक हलचल पूरे हिमालय में बनी रहती थी, शिष्य व्यग्र, आतुर और उत्कण्ठ से उनके चारों ओर घिरे रहते, परन्तु सिद्धाश्रम की आज्ञा से जब उस व्यक्तित्व स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी - के पुनः सांसारिक जीवन में जाने का समाचार हिमालय की उपत्यकाओं में गूंजा तो जिसने भी सुना वह सन्न रह गया, ऐसा लगा कि जैसे देह पड़ी रह गई हो, परन्तु उसमें से प्राण निकल चुके हों। सारा वन प्रान्तर खोया - खोया सा बन गया था, सारे शिष्य चलती-फिरती लाशों के समान विचरण कर रहे थे, उन शिष्यों की आंखों के सामने वे सारे बिम्ब एक बारगी ही स्पष्ट हो आये, जब ऊंची चट्टान पर गुरुदेव स्वामी निखिलेश्वरान्द जी बैठे हुए थे और सामने हजारों- हजारों सन्यासी मन्त्र मुग्ध से उनके प्रवचनों को सुन रहे थे, वे सभी से मिलते, बात करते, सांत्वना देते , उनके मन के विचारों को उनके सामने ही प्रकट करते दिखाई दिये,शिष्यों ने देखा कि स्वामी निखिलेश्वरानंद जी एक गुरु ही नहीं, सुख-दुख के साथी भी थे, विपत्तियों में धैर्य बंधाने वाले, उदासी में मुस्कुराहट बिखेरने वाले, मित्र भी थे, ये मार्गदर्शन देते हुए गुरु भी थे, और मन की भावनाओ को स्पष्ट करते हुए सखा भी थे उनके कई रूप थे, और सभी रूपों में वे पूर्णत्व प्राप्त थे, उनके जाने की कल्पनामात्र से ही पूरा शरीर एक अजीव सी उदासी और खामोशी से भर गया था ।

शिष्य समझ रहे थे कि उनका जाना मात्र जाना ही नहीं होगा, अपितु उस स्थान पर एक रिक्तता,एक सूनापन, एक खालीपन सा आ जायेगा, जिसकी पूर्ति निकट भविष्य में सम्भव नहीं है, क्योंकि उन शिष्यों ने अन्य सैकड़ों सन्यासियों और गुरुओं को देखा था, पर कोई ऐसा नहीं था जो एक साथ ही समग्र रूप में मां,बाप,भाई, मित्र, सहायक, गुरु और सखा के रूप में पुंजीभूत हो,जाने को तो यह व्यक्तित्व चला जायेगा, परन्तु उसके बाद उसको देखना ही सम्भव नहीं होगा, जाने के बाद कौन विपत्ति में सांत्वना देकर मार्गदर्शन करेगा, कौन मन की बात समझ कर तदनुकूल उपाय सुझाएगा, अपने शिष्यों के लिए कौन लड़ेगा, और कौन ऐसा होगा जो साधकों, शिष्यों के लिए आंखों से आंसू बहायेगा?

और यह सोच -सोच कर के ही सारा शिष्य समुदाय उदास, व्याकुल और क्लांत था, ऐसा लग रहा था,कि जैसे मछली को पानी से निकाल कर जलती हुई रेत पर डाल दी हो, और जब गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द जी शिष्यों से विदाई लेते हुए आगे बढ़े तो सैकड़ों-सैकड़ों शिष्य मार्ग में बिछ गये,शिष्याओं ने अपनी लम्बी केश राशि खोलकर बिछा दी, उनकी आंखों से अनवरत जल धारा प्रवाहित हो रही थी, गला रुंध

गया था, और सीना हिचकियों से भर गया था, यदि गुरुदेव जाएं तो इन शरीरों पर पैर रखकर ही, हमें कुचल कर ही जाए, अपने जीते जी उनका वियोग, उनसे अलगाव, उनसे बिछोह न तो सहन हो सकेगा और न सम्भव है।

और उपस्थित हजारों-हजारों आसपास के पहाड़ी लोगों ने, योगियों और सन्यासियों ने देखा कि सारा वातावरण खामोश है, बेचैन है, क्लान्त और व्याकुल है, वास्तव में ही बिछोह शब्द कहना सरल है, परन्तु जिसने अपने दिल में जख्म खायें हों वह इस बिछोह के दर्द को समझ सकता है,कसक अनुभव कर सकता है ।

पर झरते हुए आंसुओं और सिसकती हुई चीत्कारों के बीच एक व्यक्तित्व गमगीन और व्याकुल मन से धीरे-धीरे अग्रसर हो रहा था-अग्रसर होता जा रहा था —।

भारत भूमि पर इसी प्रकार समय-समय पर सिद्धाश्रम चैतन्य पुरुषों को भेज कर धर्म की रक्षा करता रहा है । भारत में राजस्थान प्रांत के जोधपुर जिले से ६० किलो मीटर दूरी पर दुन्दाड़ा के पास खरंटिया नामक ग्राम में रहने वाले दंपत्ति श्री मुलतानचंद श्रीमाली तथा उनकी पत्नी श्रीमती रुपादेवी अत्यंत सरल तथा साधु प्रकृति के थे। श्री मुलतानचंद मूलतः, ज्योतिषी थे और वह एक सज्जन, सीधे, सरल और कर्मठ व्यक्ति थे यद्यपि वे क्रोधी स्वभाव के थे तथापि उनके जीवन का मूल मंत्र पुरुषार्थ था वे अपने प्रत्येक क्षण को परिश्रम के साथ व्यतीत करते और न तो स्वयं फालतू समय खोते और न किसी को खोने देते ।

श्रीमती रूपादेवी, सच्चरित्र, भली, धार्मिक एवं सुसंस्कारित महिला थीं, उनके जीवन का अधिकांश भाग पूजा-पाठ तथा धार्मिक, सामाजिक कार्यों में ही व्यतीत होता था। अपने पुरखों पर गर्व, सच्चरित्रता एवं जीवन मूल्यों के प्रति उनकी बड़ी आस्था थी।

एक रात्रि श्रीमती रूपादेवी को स्वप्न में शेषशायी भगवान नारायण ने दर्शन दिये तथा कहा कि मैं तेरे घर में जन्म ले रहा हूं। तुम शिशु का नाम नारायण ही रखना, और इस स्वप्न के ठीक एक सप्ताह बाद २१ अप्रैल [illegible] के दिन प्रातः दस बजकर इक्कीस मिनट के आसपास मधुर मंगलमय मुहूर्त में उनके घर एक बालक ने जन्म लिया। आश्चर्य की बात थी कि बालक के जन्म के समय गांव में वाद्यंत्र बज रहे थे तथा स्त्रियां मंगलगीत गा रही थीं जबकि इसके लिए उन्हें किसी ने प्रेरणा नहीं दी थी।

इस बालक का नाम स्वप्न के आधार पर 'नारायण' ही रखा गया। बालक के जन्म के सत्ताइसवें दिन ही एक अद्‌भुत घटना घटी, बालक खाट पर सो रहा था और मां आंगन में धूप खा रही थी, आधे घंटे बाद जब मां कमरे में आई तो उसके पैरों तले से जमीन खिसक गई, उसका हृदय धक् से रह गया, उसने देखा बालक नारायण सो रहा है और एक काला सर्प फन फैलाये उसके सिरहाने बैठा हुआ है, मां के काटो तो खून नहीं, फिर भी कदम बढ़ाकर हाथ जोड़कर बोली - हे वासुकी ! मेरे बालक की रक्षा कर ।

मां की आवाज सुनकर बालक जाग उठा और मचल पड़ा, इधर वासुकी सर्प भी बिना एक क्षण का भी विलंब किये पलंग से नीचे उतर कर एक तरफ को सरक गया।

हिन्दू मान्यताओं और सिद्धान्तों के अनुसार उक्त घटना इस बात की ओर तो संकेत करती ही है कि बालक में देवत्व का अंश है और आगे चलकर यह बालक अपने देवत्व के बल पर जन-साधारण की चेतना जगाने एवं उन्हें असाधारण बनाने में सहायक होगा ।

बालक नारायण का अधिकांश लालन पालन उसके ननिहाल फलोदी से छः किलोमीटर दूर [illegible] नामक ग्राम में हुआ, मामा रामसुख अत्यंत ही दयालु धर्मपरायण तथा यजुर्वेद के श्रेष्ठ अध्येता थे, अतः उनके संरक्षण में ही बालक की शिक्षा वेदाध्ययन से हुई और मात्र नौ वर्ष की अवस्था में ही उसने पूरे यजुर्वेद का अध्ययन तथा सस्वर उच्चारण सीख लिया था, इसके साथ ही संस्कृत एवं व्याकरण का ज्ञान भी सीख लिया था। स्वयं मामाजी और अन्य लोगों को इनकी कुशाग्र बुद्धि पर आश्चर्य ही रहा था। इस छोटी सी आयु में जितनी तीव्रता और तत्परता से उसने वेदाध्ययन किया था वह अपने आप में सुखद आश्चर्य था।

बालक नारायण बचपन से ही दयालु एवं साधु प्रकृति के थे तथा पूरे गांव के लाडले थे, हमेशा पूजा पाठ करना संध्या - वंदनोपरांत वेदाध्ययन करना सस्वर तथा मधुर कंठ से शिव स्तुति करना उन्हें प्रिय था । किसी को दुख या विपत्ति में तो वे देख ही नहीं सकते थे, जब भी उन्हे ज्ञान होता कि गांव में फलाँ बीमार है या कष्ट में है तो स्वयं जाकर उसकी सेवा सुश्रुषा करते, यथासंभव सहायता करते और सान्त्वना देते, पशुओं और पक्षियों के प्रति तो वे जरुरत से ज्यादा दयार्द्र रहते, घर में जो गौ थी, उसकी अपने हाथों से सेवा करते, भूसा पानी देते, नित्य पक्षियों को दाना, अपंग को भोजन तथा दुखियों की सेवा को अपना धर्म समझ लिया था, इसीलिए गांव में उनका नाम साधु बालक पड़ गया था।

आपके बाल सखाओं में से एक हैं आज के जाने-माने व्यक्तित्व श्री पीताम्बर दत्त जी शास्त्री आपने अपने जीवन में दो ही श्रेष्ठ कृतियां रचि हैं उनमें से दूसरी कृति पूर्णमिदः पूर्णमिदं में उन्होंने नारायण के हाथ और पांव के चिन्हों को लेकर उनका अध्ययन कर ज्योतिष की दृष्टि से उनका सीधा सा अर्थ स्पष्ट किया और वह यह है कि नारायण षोडश कला सम्पन्न व्यक्तित्व हैं ।

नारायण बाल पन में भी अन्य बालकों से अलग ही तरह के थे। जब वह ग्यारह वर्ष के थे तब उन्होंने भारत-पाक विभाजन की भविष्यवाणी काफी समय पहले कर ग्रामवासियों को आश्चर्य चकित कर दिया था ।

बारह वर्ष की आयु में ही उनका विवाह जोधपुर से सत्तर किलोमीटर दूर रोहट ग्राम में प्रतापचंद की सुलक्षणा पुत्री भगवती देवी से हो गया, बालिका भगवती देवी स्वयं छोटी उम्र की होते हुए भी ईश्वरपूजा, भगत स्तुति आदि में जरुरत से ज्यादा रुचि लेती थी और जो उम्र खेलने खाने की होती है उस उम्र में वह घंटों श्रीकृष्ण की पूजा अर्चना करती रहती, तथा अपना ज्यादा से ज्यादा समय भजन - पूजन में लगाती ।

विवाह के बाद कुछ काल के अनंतर बालक नारायण के पिताजी कुछ कारणों से लूनी आकर बस गये, लूनी ग्राम जोधपुर से तीस किलोमीटर दूर है और थोड़ी सी आबादी है । यहां आने के बाद बालक नारायण की इच्छा से इन्हें स्थानीय विद्यालय में पढ़ने के लिये भर्ती कराया, उस समय अंग्रेजी शिक्षा तीसरी कक्षा से ही शुरु हो जाती थी, तीन वर्ष तक लूनी में, फिर एक वर्ष लोर्डिया में, फिर जोधपुर की विद्या शाला स्कूल में एक वर्ष तथा फिर आठवी कक्षा लूनी विद्यालय से पास की इसके बाद दो वर्ष का शिक्षण उन्होंने फलौदी विद्यालय से लिया और अच्छे अंकों से परीक्षा पास की, पर इस पूरे शिक्षण काल में उनका वेदाध्ययन, पूजा पाठ, जप-तप चलता रहा।

इन दिनों एक नई बात अनुभव हुई, एक दिन रविवार को वे स्नान कर पूजा करने बैठे ही थे कि उनकी समाधि लग गई और यह समाधि लगभग साढ़े तीन घंटे रही, इस पूरी अवधि में उन्हें अपने शरीर का कतई भान नहीं रहा, साथ का सहपाठी जो इनके साथ रह रहा था, इन्हें इस प्रकार निश्चल बैठा देखकर घबरा गया, जब समाधि खुली तब उसकी जान में जान आई ।

इसके बाद कई बार पूजा स्थल पर पूजा के पहले या पूजा के बाद नारायण की समाधि लग जाती और घंटों रहती, इस समाधि अवस्था में उसका चेहरा एक अवर्णित प्रकाश से जगमगाता रहता, चेहरे के चारो ओर एक विशेष प्रकार का प्रभामंडल बन जाता।

शिक्षा के बाद नारायण वापिस लूनी जंक्शन आ गया और परिस्थितियों से विवश होकर उसने अध्यापन कार्य प्रारंभ कर दिया क्योंकि यह कार्य सर्वथा उसके लिए अनुकूल था, वह कोई ऐसा कार्य करना चाहता था, जो समाजोपयोगी हो जिससे समाज का निर्माण हो, समाज का हित हो और जिससे समाज के आधारभूत बालकों का चारित्रिक और नैतिक विकास हो सके ।

परंतु इसके साथ ही साथ उसका ध्यान पूजा पाठ आदि का कार्यक्रम भी चलता रहा और अध्यापन कार्य के बाद जो भी समय बचता वह प्रभु चरणों में ही व्यतीत होता, उसकी इस स्थिति को देखकर घर वाले काफी विचार करते, एक दो बार पिता ने फटकारा भी, परंतु इन पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा, इनका कार्यक्रम इसी प्रकार से चलता रहा ।

एक दिन शाम के समय जब वह घूमकर लौट रहा था तो उसे एक स्थान पर काफी भीड़भाड़ और हो हल्ला सुनाई दिया, साथ ही आग की ऊंची - ऊंची लपटें भी दिखाई दी, एक किसान के घर में आग लग गई थी और पास में घास का ढेर होने के कारण आग अत्यंत तीव्रता से फैल गई और समूचे घर को अपनी लपलपाती जीभ में ले लिया, किसान बाहर था, उसकी पत्नी , अपने बच्चों को लेकर बाहर निकली तब तक आग ने प्रचंड रूप धारण कर लिया था, पर इस हड़बड़ी में किसान का एकमात्र आठ वर्षीय पुत्र झोपड़ी में ही रह गया था, और जब किसान की पत्नी को ध्यान आया तो वह चिल्ला उठी, उसका करुणा क्रंदन पूरी भीड़ को झनझना गया, पर उस प्रचंड आग में कौन कूदे ? यह संभव भी कहां था, क्योंकि जो भी उस आग में कूदता, उसे अपने प्राणों से हाथ धोना ही पड़ता, सारी भीड़ किसान पत्नी का करुण क्रंदन सुन रही थी, पर विवश थी एक दो नौजवानों ने आगे बढ़ने की हिम्मत की भी, पर ताप तक जाते-जाते पुनः लौट आये, आग में घुसने की हिम्मत उनकी भी नहीं हुई, सबके चेहरों से यह स्पष्ट प्रतिध्वनित था कि अब तक बच्चा जल गया होगा, समाप्त हो गया होगा - हो सकता है जीवित भी हो, पर आग में कूदे कौन ? बैठे बिठायें मौत से कौन खेले ?

तभी उधर से नारायण निकला, मात्र दो क्षण रुका, परिस्थिति भांपने में उसे समय नहीं लगा और देखते -देखते वह हड़बडा कर आग में घुस गया एक बारगी तो पूरी भीड़ को जैसे सांप सूंघ गया हो, एक जवान नवयुवक फूल सा कोमल बालक इस प्रकार धधकती आग में कूद गया, अब क्या बचेगा वह ? वापिस क्या आ सकेगा ? आग के इस तांडव नृत्य में उसके बचकर आने की उम्मीद करना ही व्यर्थ था - उफ् ---

पर तभी भीड़ ने देखा आग के भीतर एक धब्बा सा प्रकट हुआ, धब्बा कुछ बड़ा हुआ और लोगों ने देखा कि नारायण हाथों में किसान के बालक को उठाये आग की प्रलयकारी लपटों से झूंझता बाहर निकल आया बालक सुरक्षित था, पर इस अग्नि संघर्ष में नारायण का पूरा शरीर झुलस सा गया उसके बाल और जगह-जगह से चमड़ी जल गई और पैरों में फफोले पड़ गये थे, बाहर आते ही लोगों ने लपक कर उसके हाथो से बालक को ले लिया पर इस संघर्ष में नारायण बेहोश सा हो गया था।

इसके बाद लगभग पंद्रह दिनों तक नारायण अस्पताल में पड़ा रहा तब जाकर उसके फफोले और जला हुआ भाग ठीक हो सका,

पर इन पंद्रह दिन में कितनी जलन, कितना दर्द और कितनी वेदना भोगी होगी इसका अनुमान ही लगाया जा सकता है, पर फिर भी उसके चेहरे पर न तो कोई शिकन थी और न व्यथा ही, उसे सन्तोष था कि उसने एक प्राणी की जान बचा दी है,उसे प्रसन्नता था कि एक मां को उसका पुत्र मिल गया है ।

इस घटना से ही बालक की हिम्मत, उसकी मनोवृत्ति और पर दुख कातरता का ज्ञान सहज ही हो जाता है ।

इस अवधि में साधना क्षेत्र के साथ -साथ नारायण में ज्योतिष के प्रति भी रुचि बढ़ी और उसका मन ज्योतिष के गूढ़ प्रश्नों को टटोलने में लगा, यही नहीं, अपितु भावीकाल ज्ञान स्वतः ही होने लगा, कई बार वह किसी साथी को देखकर अनायास ही बता देता कि शाम को तुम्हारे साथ अमुक घटना घटित होने वाली है, और उसी शाम को वह घटना उसी प्रकार से घटित हो जाती किसी परिचित महिला को जब इसके भूतकाल के गोपनीय अंश सुनाता तो महिला दांतों तले उंगली दबा लेती, ऐसा एक बार नहीं सैकड़ों बार हुआ, उसकी कही हुई बातें आश्चर्य जनक रूप से सत्य सिद्ध होने लगी, ऐसा लगने लगा जैसे प्रभू का कोई विशेष आशीर्वाद उसे प्राप्त होगया हो, उसके आश्चर्यजनक परिवर्तन और भविष्य दर्शन को देख घर वाले भी आश्चर्य करते ।

एक बार जब आपकी मां बीमार थीं और अस्पताल में भर्ती थी तब वहां आप भी एक ओर बैठे कुछ सोच विचार में मगन थे, तभी नर्स ने कमरे में प्रवेश किया। बीमार की मैडिकल चार्ट एंटरी की पर ये अपने ध्यान में मग्न रहे, उधर देखा तक नहीं, नर्स को बड़ा आश्चर्य हुआ, बोली – हलो ! अचानक नारायण चैतन्य हुए। नर्स को देखते ही उनके मस्तिष्क मे एक चित्रपट सा घूम गया । उत्तर दिया हलो !

- क्या बात है ऐसा क्या सोच रहे हो ।
- सिस्टर ! आपका नाम —— है न ।
- हां, हां ! नर्स को आश्चर्य हुआ कि इसे मेरे घर का नाम कैसे ज्ञात हो गया ।
- पर सिस्टर तुम अपने प्रेमी के लिए अपने पति के साथ जो विश्वास घात कर रही हो, वह तुम्हारे लिए मंहगा पड़ेगा ।
- उफ , पर ——

पर - वर कुछ नहीं। तुम्हारा प्रेमी तुम्हारे घर में छिप कर बैठा है और तुम्हारे पति की हत्या करना चाहता है। ठीक दो बजे तुम्हारा पति घर पहुंचेगा और तब कुछ भी अघटित हो सकता है। तुम्हारे पति की हत्या भी हो सकती है पर इससे तुम भी बच नहीं पाओगी और हत्या में साथ देने के आरोप में तुम्हें भी जेल जाना पड़ सकता है, चाहो तो घर जाकर इस स्थिति को टाल सकती हो।

नर्स हकी-बकी रह गई । यह युवक उसके जीवन के गोपनीय रहस्य कैसे जानता है और इसे कैसे पता चला कि कल ही हमने सचमुच दो बजे ही हत्या करने का निर्णय लिया था और फिर गिरफ्तार होने तथा जेल जाने के डर से वह सिहर उठी, तुरंत उल्टे पैर वह कमरे से निकल गई और घर जाकर उसने प्रेमी को समझा बुझाकर वापिस भेज दिया और इस प्रकार एक बहुत बड़ी दुर्घटना होते-होते टल गई ।

धीरे-धीरे नारायण की ख्याति बढ़ने लगी और दूर-दूर से लोग अपना भविष्य पूछने के लिए उसके पास आने लगे । नारायण का अध्यापन के अलावा बाकी सारा समय लोगों का भविष्य बताने और उनके दुख दर्द दूर करने में ही व्यतीत होने लगा ।

पर नारायण अपने आप में परेशानी अनुभव करने लगा, इस प्रकार से वह असली साधना से हटने लगा, साधना या पूजा पाठ में जितना समय देना चाहिए, उतना वह नहीं दे पाता ,इससे उसके मन की बेचैनी बढ़ गई और वह कोई ऐसा उपाय ढूंढने लगा जिससे वह अपनी साधना में पूरा समय दे सके । उस समय की मनोदशा कुछ ऐसी है कि मैं बहुत अधिक घुटन महसूस कर रहा हूँ, ठीक है मै खाता हूँ पीता हूँ, विद्यालय जाता हूँ और वे सभी कार्य करता हूँ जो मुझे करने चाहिए पर उत्साह नहीं है, हृदय में एक अजीब तरह की बेचैनी घुमड़ रही है, एक अजीब तड़फ तन-मन में समाई हुई है जो कि जंगलों की ओर जाने के लिए प्रेरित कर रही है, यह भी ठीक है कि ईश्वर कृपा से भविष्य दर्शन ज्ञान स्वतः ही हो गया है और किसी व्यक्ति को देखते ही या उसका फोटो देखते ही उसके भूतकाल और भविष्यकाल के बारे में स्वतः ही चित्र तथा बिंब उभरने लग जाते हैं और मैं जो कुछ भी देखता हूँ वही कहता हूँ और जो कुछ भी कहता हूँ वह सत्य हो जाता है, इसी से भीड़ बढ़ गई है, सुबह से ही लोग आने लग जाते है और रात गये तक लोग अपनी परेशानियों को लेकर आते रहते है। इससे मेरा व्यक्तिगत जीवन नष्ट- सा हो गया है ,घर में भी अव्यवस्था सी हो गई है परिवार का व्यक्तिगत जीवन छिन्न-भिन्न हो रहा है - क्या मेरे जीवन का यही चरम - बिंदु है, क्या मुझे जीवन की पूर्णता यही समझ लेनी चाहिए ? क्या इन लोगों के भविष्य में ही मेरे जीवन की सार्थकता हो पायेगी - नहीं, नहीं यह तो कुछ नहीं - यह तो प्रारंभ है, इसे प्रारंभ ही समझना चाहिये, यह अध्यापन - यह गृहस्थी, यह प्रशंसा, सम्मान, —कुछ भी तो नहीं, मैं ब्राह्मण पुत्र हूँ, मेरे कुल की मर्यादा अज्ञानान्धकार को हटाना है, लोगों को रोशनी देना है, उसे सत्यपथ पर अग्रसर करना है और भारत की लुप्त विद्याओं को खोज निकालना है । लोग आज तंत्र-मंत्र ज्योतिष पर हंस रहे है, इसे पाखंड और ढोंग समझ रहे हैं, मुझे इस क्षेत्र में गहराई के साथ घुसना चाहिए, परखना चाहिए, देखना चाहिए कि इस देश में तंत्र-मंत्र कुछ है भी

या मात्र कल्पना ही है? क्या मन्त्रों में अमोघ शक्ति है ? क्या अब भी मेरे देश में ऐसे ऋषि और साधु हैं जिन्हें इस विद्या का पूर्ण ज्ञान है, मुझे ऐसे विशिष्ट साधुओं को खोजना होगा, उनसे इस विद्या को प्राप्त करना होगा और इस देश के लोगों के सामने पूर्णता के साथ रख देना होगा,उन्हें सही अर्थों में मंत्र-तंत्र बताना होगा कि मंत्रों के माध्यम से असंभव को भी संभव किया जा सकता है, ज्योतिष के उन सूत्रों की खोज निकालना होगा जिनके माध्यम से सही एवं अचूक भविष्य दर्शन संभव हो सकता है, इसके लिए त्याग जरूरी है, कठोर जीवन एवं श्रम जरूरी है, शरीर को तिल-तिल जलाना जरूरी है, आगे के जीवन में सुख आराम तथा भोग विलास को तिलांजलि देना जरूरी है, मुझे कुछ करना चाहिए, इस प्रकार से जीवन बिताना व्यर्थ है, यद्यपि इस समय मुझे सब कुछ प्राप्त है, माता -पिता का स्नेह, पत्नी का प्रेम , पुत्र की किलकारी, मित्रों की हंसी मजाक, बड़े-बूढ़ों का आशीर्वाद लोगों द्वारा सम्मान, उत्तम नौकरी, श्रेष्ठ धन लाभ- पर क्या इसी मायाजाल में उलझकर पड़ा रहूं - निश्चय ही जंगल का जीवन इसके विपरीत होगा,लगी लगाई नौकरी को छोड़ना क्या बुद्धिमानी होगी ? क्या पत्नी को चिरवियोग में डालकर जंगल-जंगल भटकना उचित होगा उफ्-! क्या करूं ? कुछ समझ नहीं आ रहा है, कुछ भी निर्णय नहीं ले पा रहा हूं ?

इस घुटन और मन के अंतर्द्वंद्व में श्रीमाली काफी समय तक रहा, वह किसी एक निर्णय पर नहीं पहुंच पा रहा था । उसके सामने दो मांग थे, एक तरफ गृहस्थ था- पत्नी, पुत्र, माता-पिता, भाई-बहिन थे, दूसरी ओर कुछ करने की छटपटाहट थी, मंत्र शास्त्र को पुनर्जीवित करने की आग थी, इस दुनिया में कुछ करके दिखाने की भावना थी, वह इस जीवन की सार्थकता चाहता था और धीरे-धीरे उसका सम्मान, उसकी विचारधारा, इस दूसरे पथ का अवलंबन ही चाहती थी ।

एक दिन प्रातः काल का समय था, नारायण प्रातःकाल वायु सेवन हेतु भ्रमण कर घर लौट रहाथा, उसके मन में ये ही प्रश्न बार-बार टक्कर दे रहे थे, पूरा मन एवं मस्तिष्क आंदोलित था, और इस मानसिक अंतर्द्वंद्व में वह अपने ही विचारों में बढ़ा जा रहा था कि उसका पैर लिजलिजे जंतु पर पड़ा, चौंककर हटा तो देखा सामने एक काला सर्प फन फैलाये खड़ा है उसकी पूंछ पर अनायास ही पैर पड़ गया था दो क्षण वह फन फैलाकर घूरता रहा और तीसरे ही क्षण वह सीधा सपाट हो एक तरफ को सरक गया ।

डा० श्रीमाली की नजरें ऊपर उठीं तो एक साधु को अपने सामने खड़ा देखा । गौर वर्ण उच्च एवं भव्य ललाट, आकर्षक मुद्रा, ओज एवं कांतिपूर्ण चेहरा , मंद-मंद मुस्कुराता हुआ सा - एक चुम्बकीय व्यक्तित्व, - डा० श्रीमाली के पैर वहीं जड़ से हो गये, वह साधु दो कदम भरकर पास आया, बोला परेशान हो नारायण ?

नारायण कुछ बोला नहीं किसी साधु से भेंट का यह लगभग पहला मौका था और फिर साधु को उसके नाम का पता कैसे चला ?

नारायण यह सोच ही रहा था कि साधु फिर बोला -- परेशान न हो, तुम्हारा जीवन निश्चित हैं, तुम्हारा मार्ग प्रशस्त है, तुम्हारे जीवन का एक एक क्षण की मती हैं, उसे यों सोच-विचार में व्यतीतकरना उचित नहीं है, तुम्हारा जीवन केवल परिवार के लिए ही नहीं है अपितु पूरे देश और विश्व के लिए हैं। तुम्हें हिम्मत करके आगे कदम बढ़ाना है, ज्योतिष को सही स्थान पर स्थापित करना है, मंत्र-तंत्र जो लुप्त हो रहे हैं, उन्हें पुनर्जीवित करना है और संसार को इस क्षेत्र में एक नई दिशा दृष्टि देनी है । इसके लिए कर्म - क्षेत्र तुम्हारा घर नहीं हिमालय है - जितना ही जल्दी इस संबंध में सही निर्णय लोगे उतना ही जल्दी तुम्हारे हक में ठीक रहेगा।

साधु का एक - एक शब्द नारायण के दिमाग में हथौड़े की तरह चोट कर रहा था, उसे रास्ता मिल गया था, उसके मन में जो अंतर्द्वन्द्व चल रहा था, वह एक बारगी ही मिट गया और उसका भावी जीवन अपने आप ही स्पष्ट हो गया ।

नारायण ने साधु के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करने के लिए नजरें ऊपर उठाई तो वहां कोई नहीं था, एक क्षण पहले साधु खड़ा था, बातचीत की है और दूसरे ही क्षण अदृश्य -- नारायण चकित और हतप्रभ रह गया, उसने इधर-उधर देखा पर साधु का कहीं अता -पता नहीं था, पर इससे उसका भावी जीवन स्पष्ट और प्रशस्त हो गया था ।

नारायण घर आया, उसका चेहरा शांत और निर्विकार था इतने दिनों तक हृदय में जो तूफान मचल रहा था वह शांत हो गया था, उसने निश्चय कर लिया कि मुझे हिमालय की गोद में चले जाना चाहिए मुझे भविष्य में जो कुछ भी मिल सकेगा, वहीं मिल सकेगा, और उसने मन में एक तिथि जाने की मन ही मन निश्चित कर ली, तब तक पत्नी को समझाना था, मां के ममत्व से जूझना था, पिता के वात्सल्य से मुक्ति पानी थी ।

गृहस्थ को छोड़ छाड़कर हिमालय की ओर चले जाना जितना आसान समझा था, वास्तव में वह उतना ही कठोर एवं अग्नि परीक्षा के समान हुआ, डा० श्रीमाली ने दो-तीन दिनों में अपने आपको तैयार किया और एक दिन अपनी पत्नी को सारी बात खुलासा कह देना ही ठीक समझा ।

शाम का समय था, खा पीकर डा० श्रीमाली पत्नी के साथ बैठे थे, इधर-उधर की चर्चा हो रहीथी, अचानक बात को बीच में काटकर

श्रीमाली जी बोले - एक बात कहना चाहता हूँ, कई दिनों से मन में घुमट रही है, ऐसा लग रहा है कि जब तक मैं कह नहीं सकूंगा तब चैन नहीं मिल सकेगा ।

पत्नी ने बड़ी -बड़ी आंखे ऊपर उठाई, उसकी आंखों में यौवन की ललाई थी, तारुण्य का ओजथा और पति संग का आह्लाद था, भोले-भाले चेहरे को देखने पर डा० श्रीमोली डगमगा गये,सोचा - इस बेचारी ने अभी तक अपने जीवन में देखा ही क्या है ! बाल्यावस्था की ड्योढ़ी को पारकर तरुणाई के आंगन में कदम रखा ही है, ये ही तो दिन होते हैं जब वह पति - साहचर्य की कामना करती है, हंसने-हंसाने के ये ही दिन है, खिलखिलाने की यही उम्र है, क्या मैं इसकी हंसी खुशी पर ताला लगा दूं ? क्या मुझे अधिकार है कि इसके यौवन की उमंगो पर अंगारे बिछा दूं ? इसकी मुस्कुराहट को कैद कर दूं, और दे दूं – अंतहीन उदासी – लंबी प्रतीक्षा पति वियोग कीमानसिक यंत्रणा और अटूट अश्रुधारा – उफ् ।

क्या हुआ ? आप कभी -कभी कहते - कहते क्यों रुक जाते हैं ? बोलते बोलते क्या सोचने लगजाते हैं ? आधी बात कहकर ही चुप हो जाते हैं ? शायद आप मुझे कुछ कहना चाहते है, और कह नहीं पाते — कोई खास बात हैं क्या ?

डा० श्रीमाली दो मिनट चुप रहे, फिर धीरे-धीरे बोले- हां तुम ठीक कह रही हो, मैं कई दिनों से तुमसे बात कहना चाहता था पर कह नहीं पा रहा था, कहते - कहते मेरी जबान रुक जाती थी, और आज भी मैं कहना चाह कर भी कह नही पा रहा हूँ ।

आप बिना संकोच कहे, आपके सुख में ही मेरा सुख निहित है – आप जो भी कहेंगे , मेरी और आपकी सुख-सुविधा के लिए ही कहेंगे फिर कहने में संकोच क्या और हिचकिचाहट क्या ?

मैं ऐसा सोचता हूं, कि मुझे घरबार छोड़ देना चाहिये, यह जीवन मुझे अनुकूल नहीं लगता, इस जीवन का एक-एक क्षण मुझे डंस रहा है, मैं चाहता हूँ कि मेरी वास्तविक मंजिल जिधर है, उधर ही जाऊं और मेरी वास्तविक मंजिल हिमालय की गुफाएं है, मैं कुछ वर्षो के लिये अकेला हिमालय की तरफ निकल जाना चाहता हूँ, और उन साधुओं तथा ऋषियों के चरणों में बैठकर कुछ सीखना चाहता हूँ, जो इस क्षेत्र में अद्वितीय हों - एक ही सांस में डॉ० श्रीमाली ने अपने मन की बात कह दी ।

दो क्षण पत्नी मुंह ताकती रही, उसे विश्वास नही हो रहा था, कि एक तरूण यौवनवान पुरूष के मन में हिमालय में भटकने की इच्छा हो सकती है, बोली- ऐसा मजाक मत कीजिये, यह उम्र हिमालय के पत्थरों पर सोने की नहीं है -

- पर मै पूरी गम्भीरता के साथ अपने निश्चय को तेरे सामने दोहरा रहा हूँ ।

पत्नी को अपने कानों पर विश्वास नही हुआ सामने पति का चेहरा सख्त, दृढ़ निश्चय सम्पन्न और ओजपूर्ण था, उसकी आंखों में विचारों को साकार करने की दृढ़ता थी, यह सब कुछ देखकर पत्नी की आंखें डबडबा आई और दूसरे ही क्षण दोनों आंखों से अश्रुधार बहने लगी ।

दो क्षण डा० श्रीमाली चुप रहे फिर बोले- क्या तू ऐसा समझती है, कि मुझे इस घर गृहस्थी के चक्कर में ही जीवन बिता देना चाहिए ? क्या मेरे जीवन की उपलब्धि इतनी ही रहेगी ? क्या मेरा कार्य क्षेत्र इतना संकीर्ण रहेगा ? क्या मुझे अपने व्यक्तित्व के परिवेश के व्यापकता नही देनी चाहिए ?

-- ठीक है, आप ठीक कह रहे हैं , पर क्या यह भी उचित है, कि आप इस गृहस्थ जीवन के कर्तव्यों से मुंह मोड़ लो, मैं तो अपनी जवानी के वर्ष आपकी इस झोली में हमेशा-हमेशा के लिए डाल दूंगी, पर क्या मां के प्रति आपका कोई कर्तव्य नहीं है ? मैं तो अपने दिल पर पत्थर रखकर आंसुओं को अन्दर ही अन्दर पी लूंगी, पर इस बच्चे को पिता का दुलार कहा से लाकर दूंगी ? मैं तो इस यौवनकाल में भी सन्यासीवत् जीवन जीने का प्रयत्न कर लूंगी पर बूढ़े पिता की आंखों के आंसू कौन पोछेगा ? इसमें मेरा क्या कसूर है और दुख के आवेग से वह फफक पड़ी ।

डा० श्रीमाली एकबारगी ही हिल गये, वास्तव में ही यह सही कह रही है, इसका क्या कसूर है ? और मुझे यौवन में इसको सन्यासी बनाने का क्या हक है? इसकी भरी पूरी झोली में वेदना अश्रु और सिसकारियां देने का क्या अधिकार है ? उनका मन दो परस्पर विरोधी विचारधाराओं में उलझ गया, भावना और कर्तव्य का परस्पर संघर्ष था, पर इस संघर्ष में कर्तव्य ही विजयी हुआ, डा० श्रीमाली बोले - तुम ठीक कहती हो, मुझे अधिकार नहीं है कि तुम्हारी हंसी को छीनकर उसकी जगह चीत्कार भर दूं, पर यह बता दूं कि मैं यहां रह कर भी सुखी नहीं हो सकूंगा । मेरी आत्मा को चैन नहीं मिल सकेगा, मुझे ऐसा लगेगा कि जैसे मैं तिल-तिल कर अपने जीवन को बरबाद कर रहा हूं

- मुझे ऐसा अनुभव होगा, जैसे इस आमोद - प्रमोद की बलिवेदी पर अपने जीवन के लक्ष्य को बलिदान कर दिया हो, मेरी आत्मा - मेरा देश मेरी आने वाली पीढ़ियां कभी भी मुझको माफ नहीं करेगी ।

पत्नी निर्निमेष दृष्टि से मेरे चेहरे की ओर ताक रही थी, उसके प्रत्येक शब्द बर्छी की तरह थे, पर एक क्षण के अन्तराल में ही उसने निर्णय ले लिया, बोली आप जरुर जाइये, मेरी तरफ से कोई रुकावट नहीं होगी, बड़े कार्य के लिए छोटे-छोटे कई स्वार्थ त्यागने ही पड़ते है, मैं जानती हूँ, आप आराम और मौज-मस्ती की जिंदगी छोड़ कर कठिनाई और संघर्ष की जिंदगी जीने जा रहे हैं जो भी दुख वियोग और कष्ट होगा उसे मैं हंसते-हंसते झेल लूंगी - और कहते-कहते उसकी आंखों में एक विशेष प्रकार की चमक आ गई थी।

डा० श्रीमाली के लिए एक घाटी पार हो गई थी, पर अभी एक और बाधा थी, वह थी मां की स्वीकृति । वह मां, जिसके लिए नारायण सब कुछ था जो थोड़ा बिलम्ब से आता तो उसका कलेजा धक से रह जाता है । पर जब इस बात का मां को पता चला, तो सारा गुड़ गोबर हो गया, उसने दिन भर भोजन नहीं किया, उसे ये समझ में नहीं आ रहा था, कि इतने ऊंचे स्तर की नौकरी, और इतनी श्रेष्ठ तनख्वाह होते हुए यह क्या सूझी कि लगी-लगाई नौकरी छोड़ दे, अराम छोड़ कर जंगलों में भटके ।

दूसरे दिन डा० श्रीमाली ने मां के सामने सारी बात खुल कर स्पष्टता के साथ रख दी, और यह भी प्रार्थना की कि मुझे रोका नहीं जाय, केवल मां के ममत्व की कीमत पर मेरे भावी पथ को धूमिल नहीं किया जाय, निश्चय ही मेरे जीवन में मां की सेवा से बढ़ कर दूसरा कुछ नहीं है, और यदि आप स्वीकृति नहीं देगी तो मैं नहीं जाऊंगा, पर वे होने पर मेरा शरीर ही तुम्हारे आस-पास विचरण करेगा, मेरी आत्मा यहां नहीं होगी, और मुझे विश्वास है, एक भारतीय माता की तरह आप मुझे मेरे कर्तव्य की ओर बढ़ने में सहायक होगी । मेरी इच्छा है कि एक बार तंत्रों-मंत्रों को परख लूं , ज्योतिष की लुप्त कड़ियों को पहचान लूं । यह बात अलग है कि मुझे इस समय अच्छी तनख्वाह मिल रही है, जो इस उम्र में विरलों को ही मिलती होगी, श्रेष्ठ मकान है, सुविधा है, ऐश आराम पर यह तो सब कुछ नहीं है, इसके आगे भी तो कुछ है, और उसी को पहचानना आवश्यक है । और फिर मैं कोई गृहस्थी छोड़ तो नहीं रहा हूँ,साधु तो नहीं बन रहा हूँ, भभूत लगा कर वैराग्य धारण नहीं कर रहा हूँ। काफी कुछ कहने सुनने के बाद मां ने अपने कलेजे पर पत्थर रख कर उसे जाने की स्वीकृति दे दी।

यही भारतीय परम्परा थी, एक भारतीय युवक आराम और मौज-मस्ती की जिंदगी छोड़ कर पत्थर-पत्थर भटकने के लिए निकल पड़ा था, रजाईयों और पलंगों पर सोने वाला नवयुवक धरती के बिस्तर पर सोने के लिए चल पड़ा था, आराम को छोड़ कर संघर्षों की राह पकड़ ली थी। खाने पीने को छोड़ कर भूख-प्यास को गले लगाने को उतावला हो गया था - और इस त्याग ने - इन संघर्षों ने ही नारायण को 'नारायण' बनाया, डा० श्रीमाली को ' गुरु जी' बनाया और आज के युग में मंत्र शास्त्रों के अध्येता के रूप में प्रतिस्थापित किया, ज्योतिष के क्षेत्र में अभिनव वराहमिहिर सिद्ध किया।

डा० श्रीमाली का लक्ष्य था, मंत्र-तंत्रों के बारे में पूर्णता प्राप्त करना, उस लुप्त ज्ञान को जनता के सामने रखना जिसे भुला दिया गया है या जिस पर से विश्वास उठ गया है, यह ज्ञान उन्हीं साधुओं, महर्षियों एवं ज्ञानियों के पास था जो मोह माया, ममता से दूर हैं, जिन्हें संसार से कोई लेना देना नहीं है, जिनका पूरा जीवन अरण्य में बीता है और इस प्रकार के साधु या विशिष्ट व्यक्तित्व हिमालय के गर्भ में ही संभव हैं।

और एक दिन दो धोती, दो कुरते और एक लोटा लेकर मै घर से निकल पड़ा एक अनजान पथ पर— एक अनचीन्हे रास्ते पर — एक दुर्गम क्षितिज की ओर — मन में दृढ़ संकल्प, हिम्मत एवं सफलता का विश्वास लेकर ।

और आज जब मैं इन पंक्तियों को लिखते वक्त अपने जीवन की ओर पीछे मुड़ कर देखता हूँ,तो पाता हूँ कि मेरा निर्णय सोलह आने सही था । यदि मैं उस क्षण वह कदम नहीं उठाता, तो जीवन भर के लिए पश्चाताप बना रहता, ।

घर से निकलते समय मैंने यह निश्चित कर लिया था, कि घर से किसी भी प्रकार का सम्पर्क नहीं रखूंगा, न पत्र-व्यवहार द्वारा और न व्यक्तिगत रूप से ; क्योंकि जब घर के बारे में,सर्दी बुखार के बारे में कोई समाचार मिलते हैं, तो मन व्यथित हो जाता है और लक्ष्य -सिद्धि में बाधा पहुंचती हैं ।

लगभग तीन चार महीने मैं निरुद्देश्य भटकता रहा । कुछ साधु मिले भी, पर उनसे मन नहीं भरा, उनके पास सतही ज्ञान था — करीब चार साढ़े चार महीने बाद स्वामी पूर्णानन्द जी से साक्षात्कार हुआ गुजरात में - वे जंगल में ही रहते, मात्र एक लंगोटी ही पहनते , और बाकी सारा शरीर नंगा रहता। मैं उनके पास करीब सात दिन रहा, पर उन्हें न तो भोजन करते देखा और न पानी पीते ही । मैं प्रातः - सांय पड़ोस के गांव में जाकर आटा ले आता, तथा जंगल में स्वयं पाकी बन, पानी के साथ रोटी गले के नीचे उतार देता । उनसे मुझे इस सम्बन्ध में प्रारम्भिक ज्ञान हुआ ।उनके विचार थे, किसी साधु या गुरु से सीखने के लिए चार गुणों की नितान्त अनिवार्यता है —

१- हठ, दुराग्रह, छल एवं कुतर्क को छोड़ देना ।

२- साधु या गुरु के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण ।

३- अपनी व्यक्तिगत मान्यताओं एवं विचारो का गुरु के विचारो में लय ।

४- पूर्ण एवं निश्छल श्रद्धा ।

ये चारो ही गुण आगे के समय में ज्ञान प्राप्त करने में अत्यधिक सहायक रहे । स्वामीजी गायत्री उपासक थे, और कई पुरश्चरण कर दिये थे । मैंने उनके बिना खाये पीये रहने की बात उनके सामने चलाई तो वे हंस कर टाल गये — मैं कुछ जानना चाहता था, पर उन्होंने इस सम्बन्ध में पूर्णतः मौन व्रत धारण कर रखा था, या जब भी ऐसा प्रसंग चलता, वे प्रसंग बदल देते । मैं समझ गया ये देने में समर्थ नहीं है या अभी मुझमें पात्रता नही आ पाई है। मैं आठवें रोज उनके चरण छू आगे के लिए अनिश्चित लक्ष्य की ओर बढ़ गया । स्वामी पूर्णानन्द जी के पास से जाने के बाद एक अघोरी अनाम साधु के साथ रहने का अवसर मिला ।

बड़ा विलक्षण एवं विचित्र व्यक्तित्व था अघोरी बाबा का - लंबा - चौड़ा डीलडौल, उन्नत एवं उभरा हुआ ललाट, तेजस्वी चेहरा और उस पर दिपु - दिपु- करती धधकती हुई दो आंखें, जिसके डोरे हर समय लाल सुर्ख बने रहते, विशाल वक्षस्थल , रोमयुक्त हाथ - पैर और नंग धड़ंग शरीर -जो एक बार देख ले तो गश खा जाय, मुंह से निरंतर बड़बड़ाते हुए - मैंने जब उन्हें देखा तो विश्वास नहीं हुआ कि ऐसा भी खुरदरा व्यक्ति हो सकता है, बोलता तो जैसे फटे बांस की आवाज आ रही हो, गालियों का तो एक पूरा खजाना भरा हुआ था इस औघड़ के पास ऐसी चुन -चुनकर गालियां देता कि सुनने वाला सन्न रह जाता ।

पहली बार में जब मैंने उन्हें देखा तो यही भान हुआ कि इसके पास रहने में खतरा ही खतरा है, लाभ तो कुछ भी नहीं हो सकता, पर शायद विधाता को कुछ और ही मंजूर था, जो मुझे निरंतर इसी पथ पर ठेल रहा था, जो ऊबड़-खाबड़ डरावना और तकलीफों से भरा हुआ था ।

मुझे देखते ही वह चिल्लाया - आक् हा । आ गया ! तू ठीक आया, मजा आ गया, और फिर जाघ पर हाथ मार-मार कर चिल्लाने लगा— आ जा -- आ जा अब कुछ हुआ - कुछ दिन आराम से बीतेंगे - फिर जोरों से इस प्रकार से हंसने लगा मानो रुकने का नाम ही नहीं लेगा, और इस प्रकार उसने मुझे डरा ही दिया ।

मैं इस औघड़ से लगभग चालीस कदम दूर था, मेरी आगे बढ़ने की हिम्मत ही नहीं हो रही थी, मैं लौटना ही चाहता था कि वह आगे बढ़ आया, मैं उसको अपनी ओर आते देख रहा था, पर मेरे पैर जड़वत हो गये थे, चाहते हुए भी न तो मैं मुड़ पाया और न लौट ही सका, ऐसा लगा जैसे मुझे कीलित कर दिया हो, सुना था कि अजगर की आँखों में एक कशिश, एक आकर्षण एक खिचाव होता है जो शत्रु को अपनी ओर जबर्दस्ती खींच लेता है, मुझे भी उस समय वहऔघड़ अजगर के समान ही लगा, मैं समझ गया कि मेरी मृत्यु सन्निकट है, पर इस प्रकार इस स्थिति में मृत्यु हो जायेगी, ऐसा नहीं सोचा था ।

धीरे-धीरे कदम भरता हुआ वह मेरे पास आया और मुझे धरती पर बिठा कर पास में ही जमीन पर बैठ गया, मैं तो यंत्र-चालित सा खड़ा था, उस समय मुझे अपना भान था ही नहीं, लगभग दस मिनट ऐसे ही बीत गये, ये दस मिनट मेरे लिए दस वर्षों के समान लंबे लग रहे थे ।

इन दस मिनटों में वह बराबर मेरी आंखों में ताकता रहा, मैं जड़वत उसकी आंखों में बराबर झांक रहा था, धीरे-धीरे उसकी आंखों में भाव बदले, पहले घृणा, जुगुप्सा फिर आश्चर्य और बाद में स्नेह के रंग तैर गये, जो आंखें आग बरसा रही थीं अब उनमें स्नेह झलक रहा था ।

इसके साथ मैं लगभग चार महीने रहा और इन चार महीनों में इसने मुझे तंत्र साधना का प्रारंभिक ज्ञान दिया, यद्यपि यह औघड़ तंत्र- क्षेत्र में विशिष्ट था तथा उच्चतम साधना से दीप्त था, परंतु मैं इस क्षेत्र में नौसिखियां था, अतः उच्च साधना के योग्य न था, शायद इसीलिए मुझे उच्चस्तरीय साधना नहीं दे रहा था, बाद में लगभग छः - सात वर्षों बाद इससे फिर मुलाकात हुई थी, तब इसने तांत्रिक क्षेत्र में वे साधनाएं और अमूल्य सिद्धियां सिखाई थी जो दुर्लभ कही जा सकती है ।एक दिन रात्रि के लगभग आठ - नौ बजे होंगे औघड़ मुझसे बोला - चल । आज श्मशान जगावें ।श्मशान जगाना जैसा शब्द पहली बार सुना था, उत्सुकता थी ही, मैंने हां भर दी, लगभग ग्यारह बजे वह औघड़ और मैं श्मशान गये ।

श्मशान बिल्कुल शांत और भयावह सा लग रहा था, हवा सांय-सांय चल रही थी जिससे भयानकता और बढ़ गई थी, औघड़ ने श्मशान के बीचो-बीच लकड़ी से एक घेरा खींच लीया और उसमें मुझे बिठाकर खुद भी बैठ गया, कुछ समय बाद उसने मंत्र पढ़ना शुरु किया तो देखा कि चारों तरफ रंग-बिरंगे कपड़े पहने सैकड़ों नर-नारी नाच रहे है, जो कि आम भाषा में भूत कहे जाते है, सभी के चेहरे अजीब और विकृत थे कुछ समय तक तो मैं देखता रहा, पर प्राणों में भय का संचार बढ़ गया,शरीर थर-थर कांपने लगा और दांत बजने लगे। औघड़ ने जब मेरी यह स्थिति देखी तो चिन्ता लगी कि कहीं यह बालक इन डरावने दृश्यों को देखकर मर न जाय, अतः तुरन्त उसका समापन किया और मुझे लेकर अपनी झोपड़ी में आ गया, इस भयावह दृश्य को देख कर लगभग तीन दिनों तक मैं बुखार की हालत में पड़ा रहा पर इससे

आगे चलकर मुझे अधिक लाभ हुआ और मेरा भय हमेशा -हमेशा के लिए जाता रहा, बाद मे तो श्मशान साधना भी उस औघड़ ने मुझे सिखा दी ।

उन्होंने रुकने का काफी आग्रह भी किया, पर मेरा लक्ष्य कुछ और था मैं आगे बढ़ गया ।वहां से घूमते -घामते उन्हीं दिनो आबू पहुचा। अभी तक मैं राजस्थान और गुजरात के आस-पास ही चक्कर लगा रहा था । आबू की नक्की झील, बाजार आदि उन दिनों मेरे आकर्षण की वस्तु नहीं थे।

मैं गोमुख से नीचे उतरकर वशिष्ठ आश्रम तक गया । वहां चौबीस घंटो के लगभग रहा। वहीं चार-छः साधु ठहरे हुए थे । उन्होंने बताया, कि वसिष्ठ आश्रम के नीचे उतरना खतरे से खाली नहीं है । आगे हिंस्र-पशु हैं, छोटी-छोटी पगडंडियां हैं पर सांपों से भरी हुई । उनमें से एक ने बताया, कि इस आश्रम से आगे लगभग दो मील पर एक कुटिया है तथा वहां एक पहुचे हुए तपस्वी योगीश्वरानन्द जी रहते है पर उनके दर्शन दुर्लभ हैं । बिरला ही वहा तक पहुंच पाता है और पहुंचकर दर्शन कर पाता है ।

दूसरे दिन प्रातः ही सन्ध्या -वन्दनादि से निवृत्त होकर वशिष्ठ आश्रम से नीचे योगीश्वरानन्दजी की कुटियां की ओर चल पड़ा।वस्तुतः यह रास्ता अत्यन्त कंटकाकीर्ण , ऊबड़-खाबड़ एवं जन शून्य है । बिना दृढ़ निश्चय के उधर पांव बढ़ाना खतरे से खाली नहीं। मै ईश्वर -कृपा से लगभग ग्यारह बजे उस कुटिया तक पहुंच गया, यद्यपि सामान्य जूते होने के बावजूद भी पद रक्तमय हो गये थे।

कुटिया के पास पहुंचा, पर मुझे कोई दिखाई नहीं दिया। कुटिया का द्वारा बन्द था। मन सशंकित था कि द्वार खोलूं या नहीं । खड़ा रहा और फिर जूते उतार आगे बढ़कर कुटियां के द्वार खोल दिए, पर आश्चर्य - कुटिया में कोई नही था ।

मैंने इधर -उधर ताका, कुटिया के पास पीछे की और ताका, मुझे कोई व्यक्ति नजर नहीं आया। तभी मुझे कुटिया के भीतर से हूंकार सुनाई दी, और धीरे-धीरे कोने में पुरुषाकृति उभरने लगी। कुछ ही क्षणों में एक पूर्ण पुरुषाकृति पालथी मारे उस कुटिया के कोने में स्पष्ट हो गई, यह था पुण्य स्मरणीय स्वामी योगीश्वरानन्दजी का मुझे प्रथम दर्शन ।

मैं कुटिया के द्वार पर ही खड़ा रहा । नमस्कार की मुद्रा में वे एकटक मुझे ताक रहे थे । विशेषता यह थी, कि उनकी पलकें झपक नहीं रही थीं । बाद में मुझे लगभग महीने भर स्वामीजी के चरणों में रह कर उनकी सेवा करने का अवसर मिला, तब ज्ञात हुआ कि स्वामीजी ब्राह्मण शरीर थे, तथा उस समय उनकी आयु लगभग १८० वर्ष की थी । इतनी अधिक वय होने पर भी उनकी दृष्टि तीक्ष्ण थी, बिना पलक झपकाए निर्निमेष वे घंटों एक बिन्दु पर ताकते रह सकते थे; तथा दृष्टि इतनी तीक्ष्ण थी कि वे दो-तीन फर्लांग दूर के वृक्ष तथा उस पर चलती हुई चींटी तक को देख लेते थे।

उनका पितृवत् स्नेह मुझ पर रहा । उन अट्ठाईस - तीस दिनों में जब वे इहलोक में होते - कई विषयों पर चर्चा चली, जिनमें मुख्य हैं ध्यान, जप एवं तपस्या। उनका विचार था कि प्रारम्भ में इष्ट-मूर्ति का ध्यान मूर्ति को सामने रखकर ही करना चाहिए अन्यथा ध्यान बंट जाने का भय रहता है।

पर साथ - ही साथ उनका यह भी कथन था, कि सच्चा ध्यान तभी सम्भव है जबकि इष्ट देवता के दर्शन हो जायें । जब तक सही रूप में दर्शन नहीं होंगे, तब तक सही ध्यान हो भी कैसे सकता है ।ध्यान देखी हुई वस्तु का ही हो सकता है, कल्पित ध्यान अपने-आपमें पूर्ण ध्यान नहीं कहा जा सकता ।

स्वामीजी का अधिकांश समय ध्यान में बीतता मैंने देखा कि अधिकतर वे वायवीय ही रहते थे। अभी-अभी देखा और अभी-अभी गायब - वे अपने आपको वायु से भी हल्का कर लेते थे, फलस्वरूप उनकी उपस्थिति आभासित ही होती थी, चाक्षुष नहीं। कई बार मैं उन्हें बातें करते-करते ही अदृश्य होते देखा है, और कई बार अदृश्यावस्था में ही उनसे बातचीत होती रही है, आदेश प्राप्त होते रहे हैं ।

स्वामीजी के इष्टदेव शालिग्राम थे। एक छोटी सी काली शालिग्राम की मूर्ति वे अपनी दाहिनी आंख में रखते । कई बार वे प्रसन्न होते तो मेरे सामने अपनी दाहिनी आंख की कोर से अपने इष्टदेव की मूर्ति निकालते, हथेली में रखते, तथा घंटों उसे ताकते रहतें, न मालूम क्या बुदबुदाते रहते ।

उनके पास रक्तिम वस्त्र की एक झोली थी । मैंने पूरी कुटिया में उस झोली व स्वामीजी के लंगोट के अतिरिक्त कोई तीसरी वस्तु नहीं देखी। वह झोली हरदम उनकी बगल में पड़ी रहती, झोली आकार में एक फुट लम्बी व एक फुट चौड़ी थी। परन्तु मैंने जरुरत की सभी चीजें उस झोली में से निकलती देखी। सुबह-शाम भोजन के वक्त स्वामीजी उसी झोली में से स्वादिष्ट व्यंजन निकालते यहां तक कि नमकीन व पापड़ भी। स्नान करते वक्त लोटा भी उसमें से निकलता, तथा एक बार मेरी फटी हुई धोती पर उनकी दृष्टि पड़ी तो नई धोती भी उसी झोली में से निकाल कर दी, जबकि उस झोली के आकार से एक लोटा कठिनता से उसमें समा सकता था, या ज्यादा से ज्यादा दो धोती वस्त्र समा सकते थे। एक बार डायरी में लिखते वक्त मेरा पैन टूट गया, तो नया सुन्दर चमचमाता पैन भी उसी झोली में से निकाल कर मुझे दे दिया था, जो कि आज तक यादगार के रूप में मेरे पास सुरक्षित है।

मंत्रों पर उनका असाधारण अधिकार था। वायवी मुद्रा पर उनका जबरदस्त अधिकार था जिसके फलस्वरूप वे अपने शरीर को इतना हल्का कर अदृश्य कर सकते थे। संकल्प -शक्ति के वे धनी थे । संकल्प -शक्ति से वे किसी भी वस्तु का निर्माण कर सकते थे। उनका अनुभव था, कि सच्चे योगी को संकल्प -विकल्प शून्य होना चाहिए, और विकल्प - शून्य संकल्प ही सत्य संकल्प कहलाने का अधिकारी होता है । जब विकल्प ही नहीं होगा तो संकल्प अर्थमय होगा ही , और अर्थमय संकल्प वास्तविक सृष्टि करने में समर्थ है । स्वामीजी अपनी झोली से जो मनोवांछित पदार्थों को निकालते थे, वह इसी विकल्प शून्य संकल्प का परिणाम था । संकल्प मात्र से किस प्रकार वस्तुओं का निर्माण होता है, इसे कई बार मुझे देखने का अवसर मिला ।

यह मेरा सौभाग्य है कि साधना के प्रथम चरण में ही इतने महान् एवं अलभ्य योगी के चरणों में बैठकर कुछ सीखने व समझने का अवसर मिला । वायवीमुद्रा का ज्ञान भी उन्हीं से प्राप्त हुआ और आगे के वर्षों में साधा भी, आज भी इच्छा होती है कि एक बार फिर प्रकृति की गोद में बैठ जाऊँ ।पूर्वाग्रह से मुक्त एवं वायवी मुद्रा साधन कर लूं - पर देखें ईश्वर कब अवसर देता है - कई बार यह भी इच्छा होती है कि किसी योग्य शिष्य को यह सब कुछ सिखा जाऊं पर योग्य शिष्य भी बिना भाग्य के मिलना संभव कहां है ?

स्वामीजी ने ही पहली बार कुंडलिनी जागरण के बारे में मात्र दर्शन दिया था । उन्होंने ही एकस्थ ध्यान -मुद्रा सिखाई थी । उन्हीं की कृपा से मैं विकल्प - शून्य संकल्प पथ पर बढ सका था और आज भी उनका यह ज्ञान मेरे लिए वरदान - स्वरूप है, मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

लगभग महीने भर बाद वे बोले - नारायण ! अब चले जाओ- तुम्हारे पथ का यह प्रारंभ है, अन्त नहीं है । तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल हूँ- मुझसे ऊंचा व्यक्तित्व तुम्हारा आह्वान कर रहा है । अब तुम्हें चले जाना चाहिए, और न तो इस संबंध में किसी से जिक्र करना चाहिए, और न तुम्हें लौट कर इधर आना चाहिए ।

पहली बार- संभवतः पहली बार मैं. यह सुनकर हुबक-हुबक कर रोया था। एकबारगी ऐसा लगा था, कि जैसे स्वामीजी मुझे ब्रह्मलोक से नरक में धकेल रहे हैं - पर वे त्रिकालदर्शी थे, अपने से ऊंचे व्यक्तित्व के बारे में उन्होंने जो कहा था, वह आगे चलकर स्वामी सच्चिदानन्द का स्नेह पाकर सत्य सिद्ध हुआ । उनकी आज्ञा थी, रुकने का कोई प्रश्न ही नहीं था। मैंने स्नान किया, उनकी परिक्रमा की, और भरी आंखों से अंजली पसारकर उनके सामने बैठ गया । अपने पूर्ण शरीर को समर्पण मुद्रा में आकार देकर - उनका दाहिना हाथ मेरे सिर पर था, और आंखें — निर्निमेष । उनका व्यक्तित्व मेरी आंखों के माध्यम से हृदय में उतरता जा रहा था, फिर झोली में से शालिग्राम की सुन्दर मूर्ति निकालकर मुझे दी इष्ट देवता के रूप में - और अन्तर्धान हो गये । उन क्षणों में न तो वे कुछ बोले - और न ही मैं कुछ बोल सका था, पर फिर भी मौन संभाषण के रूप में वे सब कुछ कह गये थे।

स्वामीजी द्वारा प्रदत्त शालिग्राम -मूर्ति मेरे पास है- अद्भुत वरदायक - आश्चर्यजनक सफलता युक्त ।

इसके करीब सात साल बाद - सर्दियों में, स्वप्न में उनके दर्शन हुए थे, जैसे वे मुझे बुला रहे हो । मैं प्रातः उठा और आबू जाने की तैयारियां करने लगा। पत्नी ने आश्चर्य प्रकट किया । सर्दियों में आबू - तबीयत तो ठीक है - मैं क्या कहता - एकान्त में जाकर समझाया । ट्रेन निकल गई थी, बस में बैठा - और सायंकाल आबू पहुंच गया । रात्रि को ही यात्रा प्रारंभ कर दी । लगभग रात के एक बजे मैं वहां पहुंचा जहां स्वामीजी लेटे हुए थे। कुटिया के बाहर -पास में कोई नहीं था ,- मेरे पहुंचते ही बिना गरदन घुमाये लेटे- लेटे ही पूछा - आ गये !

- जी —

- अभी प्रभूपाद भी आता होगा ।

मैं पूछ न सका, कि प्रभुपाद कौन ? तभी भगवे वस्त्र पहने तीस-बत्तीस की वय का तेजस्वी नवयुवक आता दिखायी दिया । उसने आते ही स्वामी जी के चरण छुए - स्वामीजी बोले नहीं ।

नवयुवक पालथी मारकर चरणों की ओर बैठ गया । मैं भी पास में जा बैठा - नवयुवक को मैं पहचान नहीं पा रहा था, पर वह संभवतः मुझे पहचानता था, बोला - नारायण !

हूं !

स्वामीजी की समाधि भंग हुई - शायद वे शरीर त्यागने का उपक्रम कर रहे थे, बोले - दोनों मेरे दायें - बायें बैठ जाओ । मैं दाहिनी ओर जा बैठा । उन्होंने कहा - मेरे प्राण छूट नहीं रह हैं -चार दिन से संघर्ष कर रहा हूँ, अब इस जर्जर काया को छोड़ना चाहता हूं । मैं अन्तर्दृष्टि ज्ञान ' गुह्यनी ज्ञान ' तुम दोनों को देना चाहता हूँ। अपने साथ इस ज्ञान को नहीं ले जा सकता -और सारी रात वे इस ज्ञान को देते रहे - समझाते रहे। अपने सामने साधना का प्रथम चरण कराया। दूसरा और अंतिम चरण उनकी भस्मी के सामने बैठकर करना था -

और सूर्योदय का भूमि- स्पर्श होते ही वे ब्रह्मलीन हो गये। मेरा आहत हृदय क्रन्दन कर उठा। हम दोनों बिलख पड़े, पर प्रभुपाद वज्र हृदय था, अपने आन्तरिक दर्द को छुपाए रखा - स्वामीजी की आज्ञा नुसार ही प्रभुपाद ने दाह -संस्कार किया। साधना का द्वितीय चरण पूर्ण किया और उनकी भस्मी को मानसरोवर में विसर्जित करने के लिये प्रभुपाद वह भस्मी लेकर पांचवे दिन रवाना हो गया । उस के बाद प्रभुपाद से पुनः मिलना संभव न हो सका पर आज भी स्मरण करने पर स्वामीजी द्वारा संकेत प्राप्त हो जाते है- यह उनकी असीम कृपा है ।

खैर ! काफी बाद की बात कह गया । इससे पहले उन्हीं दिनों स्वामीजी से आर्शीवाद प्राप्त कर मैं हरिद्वार चला गया, और लगभग पन्द्रह दिनों पूज्या भागीरथी के सम्पर्क में रहा। ऋषिकेश आदि घूमता रहा - पर मन उद्विग्न था - शांन्ति नहीं मिल रही थी ।

इन्हीं दिनों मैं प्रातः लक्ष्मण झूले के पास स्थित श्री राम-मंदिर के दर्शन कर बाहर आ रहा था,कि मुझे सामने आते हुए धवलकेशी सन्त दिखाई दिये । बाद में पता चला कि उनका नाम किंकर बाबा था । वे दर्शन कर जंगल की ओर मुड़ गये, मैं उन के पीछे हो लिया। लगभग मील-भर दूर ही उनकी कुटिया थी - वृद्ध होते हुए भी उनकी चाल तेज थी, और मुझसे बराबर उतनी ही दूरी पर बने रहे जितने चलते वक्त थे । जब वे कुटिया पर पहुंचे, तो संकोच के साथ सात-आठ मिनट बाद मैं भी कुटिया पर पहुंच गया। कुटिया मिट्टी से बनी, ताजी लिपी हुई, शुद्ध, स्वच्छ व पवित्र थी। वहां जाते ही ऐसा लगा जैसे किसी पूर्ण आध्यात्मिक क्षेत्र में आ गया हूँ। मन प्रसन्न हो गया ,सारी थकावट जाती रही ।

मैंने अपने जीवन का उद्देश्य बताया। अपने बारे में संक्षिप्त परिचय दिया, और भावी मार्गदर्शन चाहा । स्वामीजी लगभग पचहत्तर - अस्सी वर्ष के थे, पर शरीर पुष्ट था, मुंह में बत्तीसी दांत थे और आंखों में चमक थी - मेरे कह चुकने पर वे कुछ देर तक तो बोले नहीं, फिर धीरे - से कहा, मैं तो साधारण मनुष्य हूँ ।

— मुझे भी आपसे शतांश ही सही — आप-सा साधारण मनुष्य बना लें, यही इच्छा है ।

स्वामीजी हस्तरेखा, ज्योतिष व आयुर्वेद के प्रकांड पंडित थे । सही अर्थों में ज्योतिष व हस्तरेखा के माध्यम से वे त्रिकालदर्शी थे। ऐसा कहूं तो कोई अतिशयोक्ति न होगी । उनकी साधारणवेशभूषा, रहन-सहन देखकर कोई अनुमान भी नहीं लगा सकता कि इस साधारण वेशभूषा में ज्योतिष का अथाह सागर ठाठें मार रहा है ।

यह मेरा सौभाग्य था कि उन्होंने कुटियां में रहने की मुझे स्वीकृति दे दी, पर मेरे भोजन आदि के लिए किसी व्यवस्था की स्वीकृति न तो उन्होंने दी, और न मैंने इस संबंध में उन्हें कष्ट दिया । प्रातः सूर्योदय तक वे नित्य - पूजा से निवृत्त हो जाते, तब तक मैं भी सन्ध्यावंदन से निवृत होकर उनके चरणों में बैठ जाता । भारतीय ज्योतिष के हजारों श्लोक उन्हें कंठस्थ थे, जो किसी भी पुस्तिका में न तो संगृहीत हैं और न संकेतक भी। उन्होंने महीने भर में सैंकड़ों श्लोक मुझे लिखाये, जो फलित ज्योतिष के आधारसूत्र हैं । जन्म-कुंडली से ही गर्भ शोधन कर सैकंड तक के जन्म समय को शुद्ध करना उन्होंने ही सर्वप्रथम मुझे सिखाया, गर्भ कुंडली तथा बीज - कुंडली का निर्माण उन्होंने ही मुझे बताया। उनके अनुसार जन्म कुंडली स्थूल है - सूक्ष्म है, गर्भ- कुंडली। जिस क्षण माता-पिता का संगम होकर बीजारोपण होता है, वह बीज क्षण ही सही फलित की प्रथम सीढ़ी है। इसके बाद जिस क्षण उस मांसपिंड में प्राण-संचार होता है (माता के गर्भ में ही) उस क्षण का भी जीवन के फलादेश के लिए काफी महत्व है, अतः सूक्ष्म भविष्यफल के लिए गर्भ - कुंडली, प्राण -कुंडली एवं जन्मकुंडली तीनों का ही महत्व है, और जन्म -कुंडली से ही गर्भ-कुंडली एवं प्राण-कुंडली का निर्माण किया जा सकता है, यह विधि भी उन्होंने ही सबसे पहले मुझे समझाई ।

उन्होंने जो श्लोक मुझे लिखायें, बाद में काफी ढूंढने पर भी वे श्लोक मुझे किसी भी प्रकाशित -अप्रकाशित ग्रंथ में नहीं मिले। पर वह एक-एक श्लोक अपने- आपमें भविष्यफल के गहरे अर्थ संजोये हुए हैं, उनके द्वारा लिखाये गये सवा पांच सौ श्लोक अद्भुत हैं, आश्चर्यजनक है, फलित ज्योतिष के कीर्तिमान हैं - मुझे सही भविष्यवाणी करने एवं फलित ज्योतिष के क्षेत्र में जो किंचित् यश एवं सम्मान मिला है, उसके मूल में पूज्य स्वामीजी का आर्शीवाद , उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञान एवं वे श्लोक हैं, जो उन्होंने मुझे लिखाये हैं, इस संबंध में मैं पूज्य स्वामीजी का चिर-ऋणी हूँ, और रहूंगा ।

अगर ईश्वर ने चाहा, और स्वास्थ्य ने साथ दिया तो अवश्य इन श्लोको, इनका अन्वय व अर्थ कर पाठकों को भेंट करुंगा, और यह भेंट ज्योतिष-जगत के लिए मेरी मूक श्रद्धाजलि होगी ।

मेरे जीवन से हजारों हस्तरेखाविद् निकले हैं, पर इन स्वामी जी के पास हस्तरेखा -ज्ञान का असीम भंडार था, छोटी-से छोटी रेखा तक का नामकरण था, और इन रेखाओं के परस्पर संयोग आदि योगों की नामावली थी । जितने सुन्दर तरीके से उन्होंने इस ज्ञान का कुछ अंश मुझे दिया, वह मेरे जीवन की अमूल्य निधि है । उनके पास एक अद्भुत विधि थी, मात्र मध्यमा उंगली से जन्म -तिथि निकाल लेना, जन्म-समय स्पष्ट कर देना और अक्षांश- देशान्तर के माध्यम से जन्म - स्थान का उल्लेख कर देना । गुरु-भेंट के रूप में उन्होंने वह ज्ञान मुझे दिया और इसके लिए मैं आज भी उनका कृतज्ञ हूँ - इसके काफी वर्षों बाद मेरे प्रिय ऐषा के श्री जयप्रकाश श्रीवास्तव ने भी एक बार

बताया था, कि उन्हें चित्रकूट में एक साधु मिले थे, जो मध्यमा उंगली से जन्म तारीख निकाल लेते हैं, और उन साधु से उसने सीखने का भी प्रयत्न किया था ।

एक दिन प्रातः जल्दी में भगवती भागीरथी के स्नान को गुरु आज्ञा से चला गया था । सूर्योदय होते -होते जब मैं कुटिया के द्वार पर आया, तो देखा कि स्वामी जी बिल्व-वृक्ष के नीचे ध्यानस्थ बैठे हैं, और उनके मुंह से मधुर मंद घोष से सौन्दर्य - लहरी का श्लोक प्रस्फुटित हो रहा था -

गतेर्माणिकात्वं गगन मणिभिः सान्द्र घटितं किरीटं ते हैमं हिमगिरि सुते कीर्तयति यः ।

स नीडेयच्छाया च्छुरणश बलं चन्द्र शकलं धनुः शौनासीरं किमित न निबध्नातिधिषणाम् ।।

धनोतु ध्वान्तं नस्तुलित दलितन्दीवर वनं घनस्निग्धं शलक्षणं चिकुर निकुरलम्बं तव शिवे ।

शदीयं सौरम्यं सहज मुपलब्धुं सुमनसो वसन्त्यस्मिन्मन्ये बलमथन वाटी पिटपिनाम् ।।

पूरा वातावरण प्रकृति सुख से पूरित हो गया। इतना मधुर स्वर, उस शान्त प्रकृति में सहज सौम्य रूप से सुनना - बिना भाग्योदय के संभव नहीं । तभी एक वृद्ध व्यक्ति कुटिया से वाहर आता दिखाई दिया । मैंने इस नवागन्तुक को पहचाना नहीं, पिछले बीस दिनों में भी मैंने उसे वहां देखा नहीं था । मैं स्वामीजी के पास पालथी मारकर वैठ गया और अजस्र प्रवहमान काव्य - रसधारा को सुनता रहा । वह वृद्ध व्यक्ति भी मेरे पास आकर विनीत भाव से वैठ गया । अब मैं ने उसे ध्यान से देखा -

लगभग साठ- पैंसठ वर्ष का वृद्ध व्यक्ति , मगर फिर भी सीधी कमर कर चलने वाला, आंखों में चमक, पर चेहरे पर वृद्धता की छाप एवं सलवटें, हाथों पर भी झुर्रियां पड़ने लग गई थी; ऐसा लगता था जैसे उस व्यक्ति ने काफी कुछ भोगा था - वह शान्त था ।

करीब पन्द्रह - बीस मीनट बाद स्वामीजी ने आंखें खोली। वृद्ध को देखते ही वे खिल उठे - कहो शंकर - प्रसन्न हो ।

वृद्ध ने उठकर स्वामी जी के चरणों में सिर रखा, आर्शीवाद लिया, और मौन पुनः अपने स्थान पर वैठ गया ।

क्यों ! शंकर , पूरे आठ साल बाद मिल रहे हो । वृद्ध कैसे हो गये हो, चेहरे पर झुर्रियां कैसे पड़ गई हैं - बाबाजी तो प्रसन्न हैं न

वृद्ध व्यक्ति ने पहाड़ी भाषा में उत्तर दिया, जिसे मैं पूर्णतः तो नहीं समझ सका, पर इतना आशय अवश्य समझ गया, कि वह वृद्ध व्यक्ति स्वामीजी को लेने आया है, बाबजी ने बुलाया है । ज्ञात करने पर पता चला कि बाबाजी स्वामीजी के गुरु हैं - तथा मिलने के लिये बुलाया है। वे काफी दूर हिमाच्छादित पहाड़ों में रहते हैं, वह वृद्ध व्यक्ति बाबाजी का सेवक है ।

पर शंकर ! तुझ पर वृद्धत्व हावी हो रहा है, आज ही मैं तेरा कायाकाल्प करुंगा । आज तू बाटियां और दाल बनायेगा, हम दोनों भोजन करेंगे । सामग्री कुटिया में पड़ी है - मैं-बाहर जा रहा हूँ, लगभग दो-तीन घंटों में लौटूंगा , और कहते-कहते स्वामी जी उठ खड़े हुए और सवेग एक ओर बढ़ गये ।

शंकर अत्यन्त मितभाषी था । इस पर समस्या यह भी थी कि उसे पहाड़ी बोली के अतिरिक्त दूसरी कोई भाषा आती नहीं थी। संकेतों से ही बाबाजी के बारे में जितना जान सका - जान सका ।

आज्ञा -पालनार्थ उसने कुटियां के बाहर चौका लगायां, कंडे बीनकर खे लगाई तथा गेंहू का आटा मथकर गोल-गोल बाटियां बनाई एक अलग पत्थर के चूल्हे पर मूंग - चने की दाल चढ़ाई ।

लगभग साढ़े ग्यारह बजे स्वामीजी आये, तब तक बाटियां एवं दाल बन चुकी थी । स्वामीजी के हाथ में लगभग ९-१० इंच लम्बी कोई पहाड़ी जड़ - सी थी- तीनों के लिए अलग-अलग भोजन परोसा । एक कटोरे में शंकर के लिए जो दाल डाली थी, उसमें वह जड़ घुमाते रहे - और जड़ गलती हुई दाल में मिलने लगी -- दाल का रंग पीला हो गया था -- जड़ लगभग चार इंच घिस चुकी थी, बाकी जड़ स्वामीजी ने पीछे की तरफ फेंक दी और वह दाल स्वामीजी ने शंकर को खाने के लिए दे दी ।

दाल में बाटिया चूर कर शंकर वह सब दाल खा गया । हम भी भोजन कर चुके - बरतन साफ कर कुटिया में रख दोपहर को ही स्वामीजी के संकेत पर वन में घूमने निकल पड़े । लगभग चार घंटे निरुद्देश्य घूमते रहे - पता नहीं स्वामीजी का क्या प्रयोजन था, सम्भवतः भोजन के बाद शंकर के लिए चलना आवश्यक था, तभी वह जड़ असर करती, या और कोई बात होगी - पर मेरे जीवन का महान् आश्चर्य, कि चार-साढ़ेचार घंटे बाद जब हम कुटिया पर आये तब तक शंकर के चेहरे की सलवटें मिट चुकी थीं,हाथों की झुर्रियां ढूंढने पर भी दिखाई नहीं दे रही थीं, सिर के तथा भौहों के बाल पूर्णतया सचिक्कण काले हो चुके थे, और पूरे शरीर पर वृद्धत्व का कोई चिन्ह बाकी नहीं रहा था

- एक प्रकार से पूरा कायाकल्प हो चुका था । उसके शरीर की सुस्ती समाप्त होकर वह चुस्ती अनुभव करने लगा था। चेहरे पर ललाई आ गई थी और एक विशेष प्रकार की दमक शंकर के चेहरे पर स्पष्टतः देखी जा सकती थी ।

शाम को लगभग छः बजे स्वामीजी शंकर के साथ चलने को तैयार हो गये। मैं अभी तक दो -चार महीने स्वामीजी के साथ रहना चाहता था पर वे स्वयं जा रहे थे । मैंने साथ चलने की हठ की, पर स्वामीजी ने मना कर दिया, कि बिना गुरुजी की आज्ञा के मैं तुम्हें वहां नहीं ले जा सकता, मुझे आशीर्वाद दिया, और शंकर के साथ चल पड़े ।

मैं अकेला रह गया । उनके कायाकल्प का प्रयोग अद्‌भुत था । मैने उस बची हुई जड़ को ढूंढने का प्रयास किया, पर वह नहीं मिली । उस रात मैं उसी कुटिया के बाहर सोया। दूसरे दिन चार -छः घंटे उस जड़ के टुकड़े को खोजने में विताये पर वह टुकड़ा नहीं मिला, सो नहीं मिला -स्वामीजी ने कोई दूर भी नहीं फेंका था - पर भाग्य बिना नर पावत नाही - मैं उस टुकड़ को प्राप्त न कर सका, न स्वामीजी से इस बारे में पूछ सका । मुझे विश्वास है कि यदि स्वामीजी का दो-तीन महीने और सत्संग मिलता, तो निश्चय ही वे इस कायाकल्प का रहस्य भी मुझे समझा देते — पर शायद वह मेरा सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण दिन था, जिस दिन मैं स्वामीजी से बिछुड़ा था।

निश्चय ही भारतीय जड़ी बूटियां अद्‌भुत हैं । यह घटना मेरी आंखों के सामने गुजरी है । भारतीय वैद्यों-चिकित्सकों के लिए यह चुनौती है, कि वे इस जड़ की खोज करें ।यह गंगातट से बीस पचीस मील से दूर की वस्तु नहीं - दाल में घुलती है, और दाल का रंग पीला हो जाता है यह इसका संकेत है ज्योतिष एवं सामुद्रिक शास्त्र में उन्होंने जो मुझे ज्ञान दिया, वह अलभ्य है । मेरा रोम-रोम इसके लिए स्वामीजी का कृतज्ञ है ।

स्वामीजी की कुटिया से चलकर मैं पुनः हरिद्वार आ गया और लगभग दस दिनों तक यहां रहा ।गंगाघाट पर सायं एक महात्मा का प्रवचन चल रहा था । मैं नित्य प्रवचन में जाता, पर मन को शांति नहीं मिल रही थी । बार-बार हृदय में कचोट उठती, कि एक हीरा भाग्य से हाथ लगा था, वह भी निकल गया —।

एक दिन शाम को अनमना - सा मैं गंगातट पर घूमते-घूमते काफी दूर निकल गया, थक गया था, अतः एक पत्थर- शिला पर बैठ गया । कुछ ही समय बाद क्लांत सा थककर वहीं लुढ़क गया और नींद आ गई, न मालूम कितनी देर तक मैं सोता रहा । जगा तब आकाश में तारे छिटक आये थे । हाथ पर बंधी घड़ी पर दृष्टि डाली , तो लगभग रात्रि के दो बज रहे थे ।

नींद में ही मुझे स्वप्न आया था, और अब मैं जाग्रतावस्था में उस स्वप्न के फलितार्थ पर ही विचार कर रहा था । स्वप्न में मैंने देखा कि एक भगवे वस्त्र पहने साधु मुझे गंगा के उद्‌गम की ओर चलने के लिए प्रेरित कर रहा है, और मैं कुछ कदम उसके साथ चला भी, पर ठोकर खाकर गिर पड़ा । वापस उठा तो देखा कि वह साधु बीस-पचीस कदम आगे खड़ा अपने पीछे आने का संकेत कर रहा है - और मेरी आंख खुल गई । पास में मेरी थैली थी, जिसमें दो वस्त्र थे,दो वस्त्र पहने हुए थे, थैली में लोटा था । उठा, शीतल गंगा के जल से लोटा भरा, मुँह धोया -स्नान करने की इच्छा हुई, कपड़े खोलकर मल-मलकर नहाया, और काफी देर तक गंगा के जल में बैठा रहा, मन को शांति - सी मिली । कपड़े बदले मस्तिष्क में अभी तक स्वप्न घूम रहा था, और मैंने गंगा के उद्‌गम की ओर जाने का निश्चय कर लिया - ध्यानस्थ हुआ , और जब अन्तर्मन ने आज्ञा दे दी , तो उठकर उसी समय अजाने पथ पर चल पड़ा - बिना हिचक के, बिना भय के — निडर — निर्द्वन्द्व — निर्भय — ।

मार्ग में मैने कभी भी किसी गृहस्थ के यहां से पका पकाया अन्न ग्रहण नहीं किया । जब भी एक या दो रोज में भूख लगती और क्षुधा तीव्र हो जाती तब मैं एक या दो स्थानों से आटा स्वीकार करता, और गांव के बाहर आकर एक या दो रोटी पकाता,तथा प्रभु - प्रसाद समझ कर ग्रहण कर लेता ।

कई बार ऊलजलूल विचार दिमाग में आते- कहां फंस गया हूँ, अच्छी तरह से खाता -कमाता था, गृहस्थ में था, बच्चे थे, — मां थी और उन सबको छोड़कर इस प्रकार जंगल -जंगल भटकना क्या अनुकूल है । सारी दुनिया आनन्द में मग्न है, फिर मैं ही क्यों भटक रहा हूँ - तभी पत्नी का चेहरा आंखों के सामने घूम जाता, उसके शब्द नई प्रेरणा देते - जीवित तो लाखों - करोड़ों हैं - फिर इस प्रकार जीवित रहना भी क्या कोई जीवन है --आपका पृथ्वी पर जन्म केवल जिन्दगी जीकर मर जाने के लिए ही नहीं है, कुछ करके देने के लिए है, समाज को कुछ सौंपकर जाने के लिए हैं — आपका लक्ष्य होना चाहिए और उस तरफ निरन्तर बढ़ते रहना चाहिये फिर भले ही कोई जरुरी नहीं, कि आप अपने लक्ष्य तक पहुंच ही जाए । ईमानदारी के साथ लक्ष्य की ओर कदम बढ़ाते रहना ही मनुष्य का कर्तव्य है - और उसकी ये बातें मुझे कर्तव्य बोध करा देती और मैं पुनः आत्मा में जोश भरकर आगे बढ़ जाता ।

हरिद्वार तथा गंगोत्री के बीच से जरा हटकर एक गांव है, मंडेणा या मंडेतणा । गांव के बाहर ही एक शिवालय है मैं वहीं ठहर गया । इसी शिवालय में एक नंगे बाबा रहते थे - आयु होगी लगभग ८० से ज्यादा । सारे शरीर में भभूत रमाई हुई - वे वहां नंगे बाबा के नाम से ही विख्यात थे । ऊपर से दिखने में साधारण मानव लग रहे थे , पर उनकी आंखों की चमक इस बात की साक्षी थी, कि वे सिद्ध बाबा हैं । आसपास उनके बारे में सद्‌विचार थे, यह मैंने बाद में जाना ।

मैं उसी शिवालय में ठहर गया । गांव से बाहर एक मील दूर यह शिवालय था, पास ही पक्का कुआँ था । मैं जब पहुंचा हूँ, उस समय लगभग सूर्यास्त हो रहा था । रात्रि को गांव के कुछ लोग वहां सत्संग के लिए आते । ग्रामीणों द्वारा प्रश्न पूछने पर वे मैं या अत्यन्त संक्षिप्त - सा - उत्तर देते हुए कम बोलते , तथा अहर्निश धूनी लगाये रहते ।

इनका वास्तविक नाम मालुम नहीं हो सका । लोग इन्हें साधारण साधु ही समझते थे, पर थे ये दिव्य विभूति - अपने अखंडानंद में ये मग्न रहते।

मैने जब शिवालय में ठहरने की इच्छा प्रकट की, तो आंखों के संकेत से इन्होंने ठहरने की अनुमति दे दी।

रात्रि को दस - बारह लोग आये। बाबजी धूनी के पास बैठे थे, इधर-उधर बातें चलती रहीं । ग्रामवासियों ने मुझे शंका की दृष्टि से देखा । एक ग्रामीण ने कहा भी - ध्यान रखना, बाबा के यहां से कुछ भी चोरी चला गया, तो हम तुम्हें जीता नहीं छोड़ेंगे । बाबाजी कुछ नहीं बोले, मात्र हंस दिये ।

रात को मै सो गया । प्रातः उठकर स्नान सन्ध्यादि से निवृत्त होकर बाबा के चरणों में प्रणाम किया । नागा बाबा ने आशीर्वाद तक न दिया, सजग निश्चल बैठे रहें - मैं भी पास बैठा रहा — बैठे-बैठे लगभग एक बज गया, धूप तेज हो गई, पर न तो बाबा वहां से उठे, और न मुझे कुछ कहा - मैं पुनः प्रणाम कर उठा, गांव से कुछ आटा ले आया, भोजन पकाया, बाबाजी से भोजन के लिए आग्रह किया, पर न तो उन्होंने स्वीकृति दी और न अस्वीकृति ही — एक बार फिर भोजन के लिये आग्रह किया, तो उन्होने मना कर दिया । मैने भोजन किया, शिवालय को स्वच्छ किया, धोया, तथा शिव पर अजस्र जलधार गिराते हुए अभिषेक किया। लगभग तीन बजे के आसपास बाबाजी उठकर शिवालय के बाहर गये, और दो घंटे के बाद लौटे । आकर एक वृक्ष के नीचे लेट गये । दिन बीत गया, पर उनसे किसी भी प्रकार की कोई बात नहीं हुई ।

इस प्रकार पांच दिन बीत गये । पांच दिनों में उनसे एक बार भी बात नहीं हुई थी । मैं बुरी तरह ऊब गया, शायद वे मेरे धैर्य की परीक्षा ले रहे थे, पर इसकी भी हद होती है । मेरे लिए समय की कीमत थी, और समय इस प्रकार निरुद्देश्य बीतता गया, तो फिर क्या फायदा ?

एक दिन प्रातः शिवार्चन कर मैं शिवालय में बैठा सस्वर चन्द्रशेखराष्टक का पाठ कर रहा था –

रत्न सानुशरासनं रजताद्रिश्रृंग निकेतनं, सिंजनी कृत पन्नगेश्वर मच्युतापनसायकम् ।
क्षिप्रदग्ध पुत्रयं त्रि दिवालयै रभिवन्दितं, चन्द्रशेखर माश्रये ममकिं करिष्यति वे यमः। ।
पंच पादप पुष्पगन्ध पदाम्बुज द्वय शोभितं, भाल लोचन जात पावक दग्ध मन्मथ विग्रहम् ।
भस्म दिग्घ कलेवरं भव नाशनं भव मव्ययं, चन्द्रशेखर माश्रये मम किं करिष्यति वे यमः ।।
मत्तवारण मुख्य चर्म कृतोत्तरीय मनोहरं , पंकजासन पद्मलोचन पुजिताघ्रिसरोरुहम् ।।
देव सिन्धु तरंग सीकर सिक्त शुभ्र जटाधरं, चन्द्रशेखर माश्रये मम किं करिष्यति वे यमः।।
यक्षराज सखं भगाक्षहरं भुजंग विभूषणं, शलराज सुता परिष्कृत चांरुवाम कलेवरम् ।।
क्ष्वेड नील गलं परश्वध धारिणं मृगधारिणं, चन्द्रशेखर माश्रये मम किं करिष्यति वे यमः ।।
कुण्डलीकृत कुंडलेश्वर कुण्डलं वृषवाहनं, नारदादि मुनीश्वर - स्तुति वैभवं भुवनेश्वरम् ।।
अन्धकान्धक माश्रिता मर पादपं शमनान्तकं, चन्द्रशेखर माश्रये मम किं करिष्यति वे यमः ।।
भेषजं भव रोगिणा मखिलापदामपहारिणं, दक्ष यज्ञ विनाशनं त्रिगुणात्मक त्रिविलोचनम् ।
भुक्ति मुक्ति फलप्रदं सकलाघसंघ निबर्हणम्, चन्द्रशेखर माश्रये मम किं करिष्यति वै यमः।।
भक्त वत्सल मर्जित निधि मक्षयं हरिदम्बरं, सर्वभूतपति परात्परम् अप्रमेय मनुत्तमम् ।
सोम वारिद भू हुताशन सोमपानि लखाकृति, चन्द्रशेखर माश्रये ममकि करिष्यति वै यमः।।
विश्वसृष्टिविधायिनं पुनरेव पालन तत्परं, संहरन्त मपि प्रपंचम शेष लोक निवासिनम् ।।
क्रिडयन्तमहर्निशं गणनाथ यूथ समन्वित। चन्द्रशेखर माश्रये मम किं करिष्यति वै यमः।।
मृत्युभीत मृकण्डुसूनु कृतस्तवं शिव-सन्निधौ। यत्र कुत्र च यः पठन्न हि तस्य मृत्युभयं भवेत् ।।

पूर्णमायुर रोगितामखिलार्थ सम्पदमादरं। चन्द्रशेखर एव तस्य ददाति मुक्ति प्रयत्नतः ।।

चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर पाहिमाम्। चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर रक्षमाम् ।।

मैंने आंखे खोली तो देखा, सामने ही शिवलिंग के पास नागा बाबा बिराजे हैं, प्रसन्नमुद्रा में – मुझे चुप होते देख बोले —वाह ! सुन्दर — अति सुन्दर —– एक बार फिर गाओ– तृप्ति नहीं हुई ।

मैंने पुनः आंखे बंद कर लीं, और चन्द्रशेखराष्टक का एक बार पुनः पाठ किया वे उसी अतृप्त श्रोता की तरह राग-रस पीते रहे —थोड़ी देर बाद उनकी आंखें खुली, बोले — क्या नाम है तेरा ?

—– नारायण — संक्षिप्त - सा उत्तर दिया ।

मुझे ज्ञात है, उठ, बाहर आ – और मेरा हाथ पकड़ कर शिवालय के बाहर उसी स्थान पर ले आये, जहां एक दिन पहले वे लेटे थे —

तूं यहां क्या कर रहा हैं ? देख तेरी मां बीमार है और तूं यहां भटक रहा है — इधर- आ —–

मैं उनके पास जा बैठा । वे नख - दर्पणादि खंड विभूति में निष्णात थे – उन्होंने दाहिने हाथ का अंगूठा मेरे सामने कर दिया, अंगूठे का नख दर्पण की भांति चमक रहा था, और मैं उस दर्पण में देख रहा था —

मेरा घर -– मां चारपाई पर लेटी हुई है, बुखार में तप रही हैं, मेरी पत्नी पैरों की तरफ बैठी पांव दबा रही हैं,पास में ही मेरा पुत्र खड़ा है उदास - सा ।

कानों में आवाज सुनाई देती है - कैसी तबीयत है दादी अम्मा —– । यह स्वर मेरे पुत्र का है ।

एक अस्फुट - सा स्वर मां के मुह से निकलता है - नारायण ।

— उफ । मैं घबराकर आंखे बंद कर लेता हूं । ऐसा प्रतीत होता है , जैसे मां की इस प्रकार की अवस्था का जिम्मेदार मैं हूं । मेरे विछोह में ही मां की हालत ऐसी हो गई है, क्षण-क्षण में मेरे चेहरे पर रंग बदले हैं – नागा बाबा एकटक मुझे घूर रहे हैं —.?

– क्या देखा ?

मेरी आंखों में ऑसू छलछला आये, गला भर आया......बा....बा....जी...... ।

- क्या निश्चय किया ? बाबा का घनघोर स्वर गूंजा ।

- मैं आज ही चला जाऊंगा घर ....इसी क्षण.......इसी वक्त... क्या होगा इस प्रकार भटकने से-मैं उठ खड़ा हुआ ।

-बैठ जाओ बाबा का स्वर उभरा ।

-मैं यंत्र चालित-सा बैठ गया, जैसे किसी ने कंधों पर दबाव देकर मुझे बिठा दिया हो ।

- बस । बुझ गये एक ही फूंक में ...... क्या सोचकर निकले थे घर से ....क्या यह रास्ता इतना सरल है, कि सहज ही तुम्हें सब-कुछ मिल जायेगा, बिना त्याग-बलिदान किये कहीं कभी कुछ प्राप्त हो सकता है .... ।

पर मां की बलिवेदी पर मुझे यह सब कुछ नहीं चाहिए .....मातृ-ऋण भी तो मुझ पर है, उसे भी तो चुकाना पुत्र का कर्तव्य है, मां मेरा नाम ले-लेकर तड़प रही है, और मैं यहां आपके पास बैठा हूं,सीखने के लिए ....आज छः दिन हो गये, तब बोले हो पहली बार .....।

बाबाजी खिलखिला पड़े ....बस रे ! तेरी मां मरेगी नहीं, उसका कष्ट मैं भोग लूंगा, अब तो बस ...तू घर से निकल ही पड़ा है, तो प्रभु का कोई विशेष हेतु है ... और अभी तो तुझे आगे अलभ्य गुरू मिलने वाले हैं ....स्वामी सच्चिदानंद.....उनसे मैं ही मिलाऊंगा तुझे ...उनकी आज्ञा है....और कहते-कहते वे लेट गये....मेरा ध्यान रखना....घबराना मत....इस बात की चर्चा भी किसी से मत करना..... ।

मेरा सिर तप गया था । कुएं पर चला गया और घंटे भर तक नहाता रहा, तब जाकर दिमाग कुछ शान्त हुआ, पुनः शिवालय आया, तो देखा कि बाबा जी उसी प्रकार लेटे हुए हैं, हाथ लगाकर देखा तो पूरा शरीर तप्त तवे की भांति जल रहा था.....अनुमानतः बुखार होगा । एक सौ तीन-चार डिग्री ।

शाम को मैंने भोजन नहीं किया, उदास सा ।

शंकर के सामने बैठ गया,...आंखें बंद कर...उसी क्षण स्वप्न में जैसे नागा बाबा दिखाई दिये, बोले प्रकृतिस्थ हो, तेरी मां ठीक है, कल तक पूर्णतः ठीक हो जायेगी, उसका सारा कष्ट तो मैं भोग रहा हूँ,मुझे उठाकर शिवालय से संलग्न कुटिया में सुला दे ।

मैं चैतन्य हुआ । बाबाजी उसी तरह पेड़ के नीचे लेटे हुए थे । उन्हें दोनों हाथों से उठाया, और कुटिया में लिटा दिया । मैं पास ही बैठ गया ।

शाम को एक ग्रामीण लगभग दो किलो दूध ले आया । बाबाजी के बुखार को सुन उनमें से एक बोला- बाबा वृध्द हैं, कई बार इसी प्रकार बुखार से पीड़ित हो जाते हैं । हमने कई बार पहनने-ओढ़ने को दिया, पर यह तो पहनते ही नहीं ...मर जायेगें किसी दिन ...भगवान जाने क्या जिद है इनकी भी ...बेचारे ग्रामीण...कितने अज्ञानी थे वे लोग...वे क्या जाने बाबाजी कितने ब्रह्मज्ञानी थे, पहुंचे हुए सन्त थे, त्रिकालदर्शी थे ...अस्तु ।

मैं रात भर जागता रहा । प्रातः उठकर स्नान-संध्यादि से निवृत्त हुआ, बाबाजी का बुखार उतर गया था, वे नदी-तट की ओर चले गये थे....लौटे तो प्रसन्न थे बोले-नारायण । तेरी मां स्वस्थ है, देख ले मृत्यु निश्चित थी, पर मैंने उसे तीस वर्ष और दे दिये हैं ... और उन्होनें अंगुष्ठाग्र मेरे सामने कर दिया, और मैं आश्चर्यचकित था, मां की स्वस्थता पर....मां आंगन में बैठी थी, प्रसन्न ...बाद में चार साल बाद जब मैं घर लौटा, तथा मां की बीमारी के बारे में बात चलाई, तो पता चला बात सही थी, पर घर वाले तथा सभी डाक्टर आश्चर्यचकित थे, कि एक ही रात में इतना काया पलट कैसे हो गया, एकदम से रात-रात में ही स्वस्थता, पूर्ण ताजगी तथा रोग का नामोनिशान तक नहीं....तब से इन पंक्तियों को लिखते वक्त तक मां को एक दिन भी बुखार तो क्या सिरदर्द भी नहीं हुआ है ।

मैं बाबाजी के चरणों में गिर पड़ा । पहली बार उन्होनें आशीर्वाद दिया- तुम अपने लक्ष्य में सफल हो....और उसी दिन उन्होनें वहीं बैठे-बैठे मुझे 'नख दर्पणादि खण्ड विभूति' ज्ञान सिखाया, मंत्र बताया, इसकी साधना जरा दुर्गम है, पर उन्होनें तीन दिन रात जगकर अपने सामने इस साधना को पूर्ण कराया-यह उनकी ओर से मुझे पहला दान था ।

इस साधना के बल पर त्रिकाल गोपन नहीं रहता, दूर से दूर स्थान को नख में देखा जा सकता है, किसी भी व्यक्ति के भूत को भी, वर्तमान को भी, और भविष्य को भी- इसके बाद तो मैं जब भी इच्छा होती, अपने घर को देख लेता, हालचाल ज्ञान लेता, आश्चर्य इस बात का है, कि अंगुष्ठाग्र में बाल के बराबर सामान्य वस्तु भी देखी जा सकती है....यहां तक कि सिर के बाल भी ।

इस साधना के लिए जरूरी है कि 'नख दर्पणादि खण्ड विभूति' मंत्र का नित्य-नियमित पाठ हो,अस्तु !

मैं नागा बाबा के पास लगभग दो महीने रहा । एक दिन दोपहर को मैं उनके पास बैठा हुआ था । वे श्वास-साधना क्रिया समझा रहे थे । उनके मतानुसार श्वास-प्रश्वास नियंत्रण ही अखण्डानंद की अनुभूति है, उनकी श्वास-प्रश्वास-क्रिया अत्यन्त ही सरल थी और चार छः घंटों में ही प्रयत्न करने पर मैं सीख गया । श्वास-प्रश्वास-क्रिया पर नियंत्रण करने पर वस्तुतः एक अनिर्वचनीय, आनंद की प्राप्ति होती है जो लिखना और समझना संभव नही, वह आनन्द तो अनुभव ही किया जा सकता है ।

उनके अनुसार मानव-जीवन की पूर्णता रसास्वादन में है, पर यह पूर्ण रसास्वादन न तो साधु कर पाता है, और न गृहस्थी ही । ब्रह्मचर्य के कठोर नियंत्रण में भी यह संभव नहीं और अधिक भोगविलास से भी इस रसास्वादन का अनुभव नहीं किया जा सकता ।

मानव का वीर्य ही उसका जीवन है । इस वीर्य पर ही उस की रस-साधना एवं रसास्वादन-साधनासंभव है । इड़ा-पिंगला के साथ जिस बिन्दु का उल्लेख मिलता है, वह बिन्दु यही शुक्रात्मक वीर्य है, जो तेजोमय है, परन्तु शुक्रवाहक नाड़ी अवस्थाद्‌भुत होने पर वीर्य को बाहर निकाल देती है । यही क्रिया-स्खलन क्रिया कहलाती है, यह स्खलन-क्रिया ही मृत्यु-क्रिया है ।

पर एक अन्य कौशल भी है, जिससे शुक्र या वीर्य को धारण करने के पूर्व ही वायवीय बनाया जा सकता है, जब वह वायवीय हो जायेगा, तब फिर पतन या स्खलन का प्रश्न ही नहीं उठता, और इस प्रकार मानव अपने तेजोमय स्वरूप को सुरक्षित रख सकता है।

यही वायवीय शुक्र-वीर्य में परिवर्तित किया जा सकता है, और पुनः उर्ध्वमुख कर उसे संजोया जा सकता है, यह ऊर्ध्वरेतावस्था ही दिव्यावस्था कहलाती है ।

मुझे यह बात असंभव सी लगी, और अपना सन्देह उनके सामने प्रकट भी किया, वे कुछ तमतमा-से गये, बोले-उठ । वह बाल्टी ला.... ।

मैनें उठकर बाल्टी लाकर उनके सामने रख दी । उन्होनें आंखे बंद कर लीं, दो मिनट बाद ही उनका निर्जीव-सा रहने वाला लिंग दृढ़ हुआ...मिनिट दो-मिनिट बाद ही तनकर कठोर हो गया बाबाजी ने उसका मुंह बाल्टी के सिरे पर लगा लिया, और उसमें से शुभ्र, अगंध, पारदर्शी श्वेत रजतसम वीर्य अजस्त्र रूप से गिरने लगा.....अनवरत.....लगभग पन्द्रह मिनिट में बाल्टी आधी भर गई, वीर्य इकट्ठा हो गया होगा लगभग तीन-साढ़े तीन किलो.... ।

बोले-देखा । यह वायवीय वीर्य का तरल रूप है । साधारण मानव क्या इस प्रकार कर सकता है-यही बिन्दु है, मानव का तेजोमय रूप है

मेरे सामने रहस्य की परतें उघड़ती जा रही थीं । वे पन्द्रह मिनट बाद रूक गये, अपने लिंग को और बढ़ा दिया, संभवतः उस समय उसकी लम्बाई डेढ़ फुट होगी....लिंग का अग्रभाग वीर्य में डुबो दिया,....और पन्द्रह मिनिट में ही उस वीर्य को लिंग से पुनः सोख लिया....बाल्टी खाली थी ।

उन्होनें 'गुह्य क्रिया' द्वारा लिंग को तीन गज तक लम्बा करके भी दिखाया, जिससे कि उनकी कमर में दो बार लपेटा गया । ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो रस्सी कमर में दो बल से लपेटी हुई हो ।

-बोले-यह शक्ति-रहस्य का बीज-रूप है, जो कि श्वास-प्रश्वास-साधन से ही संभव है....उन्होनें कमर से लपेटे हुए लिंग को स्वतः सीधा किया ....मैंने देखा लिंग में से भंवरे निकल रहे हैं....भ्रमर गण...भ्रमरावलि ...यह बीज-रूप का प्रणव-साधन है, आधे घ्ण्टे में मैंने देखा, कि सैकड़ों भंवरे लिंग में से निकले, और पुनः उसी में प्रश्वास-साधन से समा गये । इसके बाद उन्होनें पुनः लिंग का संकोचन प्रारंभ किया, और दो मिनट में ही लिंग सिकुड़कर निर्जीव-सा चार अंगुल का रह गया था ....मैं विस्मयाभिभूत हुआ उनके चरणों में गिर पड़ा ।

श्वास-प्रश्वास-साधन सबसे पहले मैने नागा बाबा से ही सीखा था । इसके बाद इसका उच्च ज्ञान मैने पूज्य गुरू सच्चिदानंद महाराज से भी प्राप्त किया था, अस्तु ।

नागा बाबा के पास अलौकिक सिद्धियाँ थी । दूसरों के मन को पढ़ पाना उनके लिये सरल था एक दिन जब मैं और नागा बाबा सायं गंगा - तट पर गये, तो बोले - तुम एक कागज पर कुछ भी लिखकर जेब में डाल लो । मैनें कागज पर लिखा था - क्या मुझे इस जन्म में सच्चे गुरू मिल सकेंगे -उनकी आज्ञा से मैने उस पत्र को समेट गोल गोली- सी बना कर जेब में डाल दिया । उन्होने बता दिया कि मैने पत्रे पर क्या लिखा है । मैने कहा 'त्रिकाल साधन मंत्र' से यह संभव है, इसे मैं पहले सीख चुका था, तो वे बोले, इस बार फिर कुछ लिखो ।

मैने दूसरे कागज पर लिखा - मुझे गुरू कब मिलेंगे और उनका नाम क्या होगा ? इस कागज को भी मोड़-तोड़कर गोली-सा बना दिया । उन्होंने कहा, इस कागज की गोली को दूर गंगा में फेंक दो - मैने वह कागज की गोली काफ़ी दूर गंगा में फेंक दी । उन्होने एक मिनट बाद ही गंगा के जल में हाथ डालकर मेरा कागज मुझे सौंप दिया, आश्चर्य यह था कि वह कागज मेरा ही था, उस पर मेरी ही लिखावट थी, और उसके नीचे अलक्तक से लिखा था - तीन महीने बाद ही......सच्चिदानंद केरूप में ...... ।

आश्चर्य तो यह था कि वह कागज सीधा सपाट था, और कही से भी किंचित् भी गीला नही था, जबकि बाबाजी ने मेरे सामने गंगा के जल से निकाला था ।

एक दिन प्रातः मैं गंगा - स्नान कर लौट रहा था, कि मार्ग में एक पहाड़ी काले सांप ने मुझे डस लिआ । थोड़ा -थोड़ा अंधेरा होने के कारण मैं देख नहीं सका था, पर काटते ही मेरे मुंह से आह निकल गई — सांप सरसराता हुआ एक तरफ भाग गया ।

वह स्थान जहां सांप ने डसा था भयंकर रूप से जलने लगा , मैं भागा — और बाबाजी के सामने आकर सांप कहकर संज्ञा शून्य सा हो गया था । उन्होने अपने दायें हाथ का अगूंठा मेरे मुँह में दे दिया, जिसे मैं चूसता रहा, पन्द्रह -बीस मिनट बाद ही मैं स्वस्थ्य हो गया था और विष का प्रभाव पूर्णता जाता रहा था ।

बाबाजी सहज शून्य थे, एक आसन पर, एक ही मुद्रा में वे घंटों बैठे रहते, उस समय संभवतः वे ब्रह्मानन्द में लीन होते थे — एक दिन मैंने सहज उत्सुकतावश पूछा —— बाबा! आप किसके ध्यान में लीन रहते हैं — यह कौन सा आनन्द है ।

बाबा बोले —— ब्रह्मानंद ।

मैंने कहा – क्या मैं इस ब्रह्मानन्द रस का पान कर सकता हूं ।

बाबा ने हुमक कर मेरी छाती में लात मार दी —— ऐसा लगा जैसे मै ऊर्ध्वलोक में उड़ा जा रहा हूं चिन्ताओं से परे —— एक अनिर्वचनीय लोक में - जहां सर्वत्र शांति थी, स्निग्धता थी —— पवित्रता थी —

दो मिनट बाद ही मेरी आंख खुल गई, बाबा बोले कुछ देखा —— ?

हाँ बाबा, कुछ अनुभव किया, जो वर्णन से परे हैं — पर ——— ।

बस । इससे ज्यादा पाने के अभी तुम अधिकारी नहीं हो —— जब समय आयेगा, देखा जाएगा ।

मैं मन मसोसकर चुप रह गया ।

बाबा के पास लगभग मैं तीन महीने रहा – एक दिन चित्त में अत्यंत बेचैनी बढ़ गई — ऐसा लग रहा था, जैसे संडासी से पकड़कर कोई प्राणों को खींच रहा हो – मैं ने अपनी व्यथा बाबाजी के सामने रखी —— बाबाजी गंभीर हो गये, बोले –– तुम्हें गुरु बुला रहे हैं —— अभी यहां से रवाना हो जाओ। ।

—— पर किधर ? किस दिशा की ओर ?

बाबा हंसे — पानी अपने - आप उधर बढ़ जाता है जिधर लक्ष्य होता है — गंगोत्तरी की तरफ बढ़ जाओं और मुझे अपने पास से उठा दिया ।

मैं आज्ञा स्वीकार कर उठ खड़ा हुआ। वे ही दो वस्त्र और जलपात्र थैली में डाले और अश्रुपूरित नेत्रों से उठ खड़ा हुआ ——।

बाबा कि आंखे नम हो आई —— गंगातट पहुंचाने आये, उस समय दोपहर के ढाई बजे थे, बोले — जाओं, शीघ्र ही मैं तुमसे एक बार फिर मिलूंगा ।

मैंने बाबाजी के चरणों की धूलि सिर पर लगायी और गंगा के किनारे अजाने पथ पर भरे हृदय तथा अश्रुपूरित नेत्रों से बढ़ चला — बाबा सवेग पुनः शिवालय की ओर लौट पड़े ।

बाबा से बिछुड़ने के बाद मैंने कई दिनों तक यात्रा की, मार्ग में किसी गांव में ठहर जाता —इस बीच काफी अनुभव हुए — पर वे सब लिखने व्यर्थ हैं, इसके बाद मेरा सम्पर्क मां भैरवी से हुआ था ।

मां भैरवी बाल विधवा थीं, मैंने उनके दर्शन किये तब उनकी आयु सत्तर वर्ष के लगभग थी — गांव में एक काली का मंदिर था और उसी मंदिर में वे रहती थीं। मां काली की वे भक्त थीं, और उस क्षेत्र में मां भैरवी की काफी प्रसिद्धि थी ।

मैं गांव में एक ब्राह्मण - परिवार के यहां ठहर गया, तथा प्रातः सायं नित्य मां भैरवी के सत्संग में जाता, और वे जो भी उपदेश देती उसे ग्रहण करता ।

इनका विवाह ग्यारह वर्ष की अवस्था में ही हो गया था, और विवाह के कुछ दिनों बाद ही इन्हें वैधव्य - दुख भोगना पड़ा, इससे इनके चित्त में वैराग्य हो गया । ये बंगाल शरीर थीं, इन्होंने अपने गुरु से तंत्र-शास्त्र में भारी ज्ञान प्राप्त किया था, और इसी वजह से काफी दूर-दूर से लोग इनके पास आते थे । पिछले बीस बाईस वर्षों से इन्होंने अन्न छोड़ रखा था, मात्र फल-दूध ही सेवन करती थीं।

एक दिन सत्संग के बीच रुककर मुझसे बोलीं — तुमने अभी गुरु नहीं बनाया —ऐसा लग रहा है——

मैंने स्वीकार किया, और कहा कि —— मैं योग्य गुरु की खोज में हूं– चाहता हूं, शीघ्रातिशीघ्र यह कार्य सम्पन्न हो जाय —

वे हंसी — बोली — गुरु के खोजने में देर क्या — अबेर क्या —

मैं उस समय तो चुप रह गया — सचमुच गुरु खोजने में देर क्या — अबेर क्या –मानसिक घुमड़न से मैं त्रस्त हो गया ।

सत्संग समाप्त हो गया — सब उठकर जाने लगे, मुझे उंगली के इशारे से रोक दिया, बोली – मन अशान्त हैं — ?

— हां, मां । वास्तव में मेरा जीवन अकारथ जा रहा है , लगभग दो वर्ष हो गये और अभी तक गुरु - प्राप्ति संभव न हो सकी मैंने जिज्ञासा की – गुरु कैसे प्राप्त करुं ?

वे हंसी , बोली – शिष्य बन जाओ — शिष्य बनते ही गुरु – प्राप्ति हो जायेगी ।

मुझे आश्चर्य हुआ। बात लपेटकर कही थी । मैंने कहा समझा नहीं मां ।

उन्होने कहा गुरु मिलना तो सहज सुलभ हैं, पर शिष्य बनना- अपने में शिष्यत्व उत्पन्न करना अत्यन्त कठिन हैं –और शिष्यत्व गुण के विकास में कई वर्ष बीत जाते हैं, जिस दिन तुममें शिष्यत्व के पूर्ण गुण विकसित होंगे, गुरु लाभ उसी क्षण हो जायेगा ।

मैने जिज्ञासा की , शिष्यत्व के गुण क्या हैं ?

बोली – शिष्यत्व का एक ही पहला और अन्तिम गुण है – सर्वात्म- भावेन गुरू में लीन हो जाना .... गुरू में लीन होने पर स्वयं के विचार, स्वयं की भावनाएँ, स्वयं का काम, क्रोध, मोह आदि सब तिरोहित हो जाते है, गुरू की आज्ञा ही सर्वोपरि हो जाती है ....उसमें न विचार होता है न तर्क–

मेरा अबोध मन संतुष्ट न हुआ .... बोला – अगर गुरू कुएं में गिर जाने को कहे तो...........?

— गुरू ऐसा कहेंगे ही क्यों ।

— अगर कह दें तो............?

तो फिर आगा - पीछा कैसा, विचार - तर्क कैसा ? गुरू-आज्ञा-पालन में देरी कैसी ? गुरू-आज्ञा-पालन का तात्पर्य ही यह है कि शिष्य का एक मात्र लक्ष्य गुरू-आज्ञा-पालन ही होना चाहिये............।

गुरू की आज्ञा -पालन कोई मामूली बात नही............इसमें न आगे - पीछे का विचार होता है..........न ऊँच-नीच का.........भविष्य के प्रति चिंता करना गुरू का कार्य है, शिष्य का नही......।

मैने कहा — संभवतः मुझसे ऐसा न हो सकेगा ।

— तो गुरू प्राप्ती भी संभव नहीं......और वे उठ खड़ी हुई तथा साधना-कक्ष में चली गई ।

मैं दस-पन्द्रह मिनट वहीं बैठा रहा — शिष्यत्व का एक नया अध्याय मेरे सामने खुल गया था —वस्तुतः किसी से प्राप्त करना सहज सरल नहीं – जब तक हम कुछ दें नहीं , तब तक प्राप्त करने की आशा भी तो कैसे की जा सकती है — और हमारे पास देने के लिए है भी क्या —तन —— मन —— ।

मुझे दुःख और ग्लानि हुई कि मैं अभी तक शिष्यत्व के गुण अपने-आप में एकत्र न कर सका – फिर मैं क्यों उम्मीद करूं कि मुझे गुरु मिल जाये , कमी तो अभी तक मुझ में ही है— और ग्लानि से मेरी आंखों से टप-टप आंसू गिरने लगे ।

मैं उठ खड़ा हुआ । निवास - स्थान पर आया , और सो गया – सिर भारी हो गया था – वस्तुतः मां ने मेरी त्रुटि की ओर संकेत कर दिया था, जिसे में अभी तक भुला बैठा था ।

दूसरे दिन मैं सत्संग में जा नहीं सका ।

तीसरे दिन मां का बुलावा आया, कि मेरी साधना - कुटिया में तीन बजे के लगभग आकर मिलो ।

मैं तो उस दिन जाने का उपक्रम कर रहा था, आदेश पाकर रुक गया।

दोपहर को नियत समय पर पहुंचा — साधना कक्ष से ध्वनि आ रही थी --

सुर ललना तत थेयि तथेयि तथाभिनयोत्तट नृत्यरते, हास विलास हुलासमयि - प्रणतार्त जने मित प्रेम भरे
धिमि कट किकट धिकट धिमिध्वनि घोर मृदंग निनाद रते, जय जय हे महिषासुर मर्दिन रम्य कपर्दिनि शैलसुते ।
जय जय जप्य जय जय शब्द परस्तुति तत्पर विश्वनुते, झण झण झिंझिमि भिकृतनूपुर सिंजित मोहित भूतपते
नटित नटार्थ नटी नट नायक नाटित नाट्य सुगान रते, जय जय हे महिषासुर मर्दिनी रम्य कपर्दिनि शैलसुते ।
सहित महाहव मल्ल मतल्लिक तरल्ल कमल्ल रते, विरचित वल्लिक पल्लिक मल्लिक झिल्लिक झिल्लिक वर्गवृते ।
सितकृत फुल समुल्ल सितारुण तल्लज पल्लव सल्ललिते, जय जय हे महिषासुर मर्दिनी रम्य कपर्दिनी शैलसुते ।।

मैं सम्मोहित सा सुनता रहा, कुछ ही क्षणों वाद आदेश हुआ – अन्दर आ जाओं ।

मैं साधना - कक्ष में चला गया -- कक्ष छोटा सा था, पर धूमायित था -- मैं शिशुवत् उनके बिछे आसन पर विनम्र भाव से बैठ गया ।

बोलीं --- मैं पहले दिन ही तुम्हारी आंखें देखकर जान गई थी, कि तुम किसी विशिष्ट की खोज में हो --- और यह भी कि अब उसमें ज्यादा देर नहीं है। उन्होंने मुझे आंखे बंद कर ध्यान ऊर्ध्वस्थ कर देने को कहा ।

मैं अक्षेपासन कर बैठ गया, और कुछ ही क्षणों के उपरान्त ध्यान को ऊर्ध्वस्थ करने में सफल हो गया।

उनका हाथ मेरे सिर पर और फिर मेरी आंखों पर लगा --- ऐसा प्रतीत हुआ जैसे एक ज्योति सिमटकर मेरे अन्दर समा गई है -- ध्यानस्थ होने पर भी सब कुछ तीव्र आलोकमय हो गया --चराचर विश्व प्रोद्भुत होने लगा -- ऐसा प्रतीत होने लगा जैसे मैं सर्वत्र व्याप्त हो गया हूं --- और सब कुछ मुझमें प्राप्त हो गया है ---- यह स्थिति कुछ क्षणों तक रही -- उनका हाथ हटते ही सब कुछ पूर्ववत् हो गया -- मेरा ध्यान टूट गया, नेत्र खुल गये।

बोलीं --- कुछ देखा।

हां, मां ।

यही प्रकृत्यात्मक है, साधना का द्वितीय चरण है, तृतीय चरण तुम्हें गुरु सिखायेंगे - और फिर उन्होंने प्रकृत्यात्मक स्थिति प्राप्त करने का मार्ग सुझाया ।

मेरे लिए यह अद्भुत था ---- इसके बाद मैं वहां लगभग पन्द्रह दिन रहा --- साधना से,अभ्यास से, मैं इस स्थिति को आध घंटे से ज्यादा समय तक रखने में सफल हो गया था, अंतिम दिन मैंने उनके सामने, उनकी आज्ञा से करके दिखाया भी -- मां अत्यन्त प्रसन्न हुई,और उन्होंने कृपापूर्वक सर्वात्मभाव विश्वरुपात्मक दर्शन करने की विधि भी सुझाई जो कि कठिन होने के साथ - साथ अद्भुत एवं विस्तृत है, जिसे प्रकाशित करना उचित नहीं । अन्तिम दिन मैं उनसे विदा लेने गया --- सत्संग -- समाप्ति के बाद मुझे रोक दिया । बोलीं -- गुरु-दक्षिणा नहीं दोगे ?

मै खड़ा था । उनके सामने ही प्रणिपात लेट गया ---- पूरा शरीर --- मन ---समर्पित था ---और गुरु- - दक्षिणा देता भी क्या ?

उन्होंने कंधा पकड़कर उठाया --- स्कंध पर उनके हाथ का स्पर्श होते ही कुंडलिनी विराट् शून्य पर झटका लगा , और मैं तुरन्त समाधिस्थ हो गया --- लगभग घंटे भर तक यह स्थिति रही --- स्वतः ही --- अप्रयास ही --- आंखें खुली तब वे सामने बैठी थी --- मंद-मंद हास्य बिखर रहा था ---ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानो विराट् शून्य में जगज्जननि मुस्करा रही हो -- मैं आनन्दातिरेक से पुलकित हो गया ।

सामने 'पूज्यखंड' से उठाकर एक मणि मुझे दी --- अद्भुत --- सिद्धिप्रद --- यह तो बाद में गुरु-कृपा से ही ज्ञात हो सका, कि वह मणि कितनी अद्भुत शक्ति - सम्पन्न फलप्रद एवं साधनमय है-- सम्पूर्ण विश्व का वैभव उसके सामने तुच्छ है --- नगण्य है --- । मुझे जीने का संकेत हुआ, मैं मणि लेकर उठ खड़ा हुआ, मां का वरद हस्त मेरे सिर पर पड़ा --- और मुझे जाने की आज्ञा देकर वे वहीं ध्यानस्थ हो गई ।

मैं ब्राह्मण कुमार (मेरे आतिथेय) के घर गया । उससे विदा ली और आगे के लिए बढ़ गया -- उस समय दिन के चार बजे थे। शान्त, मनोहर प्रकृति मेरे साथ थी और था मां का आशीर्वाद --उनके द्वारा प्रदत्त अमूल्य मणि और प्रभु की असीम कृपा ।

अब मै हिमालय के दुर्गम पहाड़ी प्रदेश में विचरण कर रहा था, जिस गांव के आसपास रात होती ---वहीं ठहर जाता सहजाश्रम पहुंचने से पूर्व कई अनुभव हुए ।

ऐसे में वास्तव में ही काठमांडु भव्य और दर्शनीय स्थान है, तांत्रिक - साधना का तो यह गढ़ रहा है, यहां का दक्षिण काली का मंदिर अपने आप में सिद्धिप्रद है, तथा पशुपतिनाथ का मंदिर तो विश्व विख्यात है ही, उनका किन शब्दों में वर्णन किया जाय ।

मेरे लिए सर्वाधिक आकर्षण था, भूर्भुआ बाबा से मिलना, जिनके बारे में न मालूम कितना सुन रखा था मेरे गुरु भाई ने बहुत अधिक आग्रह किया था, कि मैं जीवन में एक बार अवश्य बाबा से मिलूं और हो सके तो सिद्ध-सूत के बारे में ज्ञान प्राप्त करुं यद्यपि गुरु भाई ने आग्रह कर दिया था कि भूर्भुआ बाबा शायद ही सिद्ध सूत के बारे में बतावें, परन्तु फिर भी उसने आग्रह जरुर किया था, कि ऐसे उच्चकोटि के साधक के दर्शन अवश्य हों, महान पुरुषों के दर्शन से ही आधी समस्याएं मिट जाती है ।

काठमांडु पहुंचने पर मेरा प्रथम और मुख्य कार्य भूर्भुआ बाबा के दर्शन करना ही था । अतः प्रातः उठकर वाघमती नदी में स्नान कर भगवान पशुपति नाथ का शिवार्चन किया और वाघमती के उस पार पुल से जा पहुंचा, वाघमती के उस पार उन दिनों काफी घना जंगल था । दिन को भी उधर जाने की हिम्मत नहीं होती थी, गुरु भाई जब भूर्भुआ बाबा से कुछ वर्षों पूर्व मिला था, तो बड़ी कठिनाई से उनकी

कुटिया को पा सका था, अतः आते समय उसने पेड़ों पर एक विशेष प्रकार के निशान चाकू से बना दिये थे, जो अमिट हो गये थे, गुरु भाई ने वे गुप्त चिन्ह मुझे बता दिये थे, जिसके सहारे मैं आसानी से बाबा की कुटिया तक पहुंच सकता था ।

प्रातः काल का समय था, मैं जब जंगल की ओर बढ़ा तो एक दो ग्रामीण बुजुर्गों ने मुझे उधर जाते देख टोका भी, और बताया कि इस तरफ एक भयानक नरभक्षी शेर है, जो एक बाबा जी का पालतू शेर है, इस तरफ जो भी मनुष्य गया वह वापिस नही लौटा, अतः अब इधर वर्षों से कोई जाने की हिम्मत नहीं करता, आप इधर आकर क्यों अपने प्राणों के साथ खिलवाड़ कर रहे हो ?

मैंने उन ग्रामीण भाइयों की बातें सुनी अवश्य, पर शेर और संत का रहस्य मैं समझ रहा था, अतः मुस्कराकर आगे बढ़ गया ।

वास्तव में काफी घना जंगल था, पर प्रसन्नता थी कि मुझे गुरु भाई द्वारा बताये हुए चिन्ह पेड़ों पर मिल गये थे और उसके सहारे-सहारे मै आगे बढ़ रहा था, लगभग ग्यारह बजे मैं कुटिया के पास पहुंचा ।

कुटिया सामान्य सी थी, दो पेड़ों के बीच के स्थान को घास-फूस से ढक कर झोपड़ी सी बना दी थी , और ऊपर भी कुछ ऐसी ही व्यवस्था कर दी थी, धूप-छांह का अजीब सम्मिश्रण उस झोपड़ी में आ रहा था।

मैं जब कुटिया के पास पहुंचा तो हृदय में अजीब - सी चिंता , अजीब - सा उत्साह और दुविधा थी, कुटिया का द्वार खुला था और अन्दर एक कृशकाय पर तेजस्वी वृद्ध समाधिस्थ था, कमर से नीचे एक छोटा सा वस्त्र लपेटा हुआ था, बाकी पूरा शरीर नंगा था, और उसकी छाती की एक-एक हड्डी गिनी जा सकती थी ।

मैंने बाहर से कुटिया के भीतर झांका और मन ही मन प्रणाम कर एक तरफ बैठ गया, यह घटना प्रातः साढ़े ग्यारह बजे के लगभग की है। और इस प्रकार मुझे बैठे-बैठे शाम के साढ़े पांच बज गये, न तो उनकी समाधि खुली, न मैं उस स्थान से हटा, मन में विचार आया- बाबा निश्चय ही उच्चकोटि के साधक हैं, और जिस समाधि में रत है उसको देखते हुए समाधि दस मिनट बाद भी खुल सकती है, और दस दिनों बाद भी खुल सकती है - सोच - समझकर मैंने श्रांग विद्या द्वारा उनकी समाधि तोड़ने का निश्चय किया । श्रांग मंत्र या श्रांग विद्या सामने वाले की समाधि को खोलने या समाधि न लगने देने के लिए प्रयुक्त की जाती है, इसका प्रयोग इससे पूर्व भी मैंने किया था, पर इसमें खतरा यह होता है, कि सामने वाला समाधि खुलने पर क्रोधावस्था में श्राप दे सकता है या कुछ भी विपरीत कर सकता है - फिर भी मैंने इस खतरे को सोच - समझ कर उठाने का निर्णय कर लिया।

ज्यो ही मैंने 'श्रांग मंत्र' जपना शुरु किया और निश्चित बिन्दु पर पहुँचा कि बाबा की समाधि खुल गई, उनकी आंखें फटाक से खुल गई— बड़ी -बड़ी लाल सुर्ख आंखे — रक्तिम और दहकते हुए —मैंने दो क्षण उनकी ओर देखा फिर आंखे नीची कर लीं - अपराध मुझसे ही हो गया था — पर वे दो क्षण भी मुझे दो कल्प की तरह लगे - उनकी आंखे अब भी मेरे चेहरे पर लपटे दें रही थी, उसकी आंच से मैं बराबर झुलस रहा था - बोला नहीं , सिर नीचे किये बैठा रहा ।

कुछ समय बाद उनके कंठ से हूं घोष निकला जिसने आस-पास के वातावरण को रोमांचित कर दिया, उस हूं ध्वनि से मेरा अन्तर तक हिल उठा। मैं बोला नहीं, उनकी भेदिनी दृष्टि अभी तक मुझे घूर रही थी ।

क्रोधातिरेक में अचानक चीखे — कौन है तू ? क्यों आया है यहां ? अभी शेर आ गया तो चीर फाड़कर फेंक देगा — भाग यहां से — पर मैं तो जैसे जमीन से चिपक गया था — जाने के लिए तो आया ही नहीं था - आया था रहने के लिए - कुछ सीखने के लिए - समझने के लिए — ।फिर बोले - बताया नहीं, कौन है तू ? मेरी समाधि तूने तोड़ी - क्यों ? कहां से सीखा यह सब?

— अपराध हो गया है, मुझसे प्रभु । मेरा आप परिचय क्यों पूछ रहे हैं? मेरा क्या सब कुछ गोपनीय है, आपके सामने ? आपको तो सब कुछ पता है कि मैं — ।

—— बाबा कुछ शांत हुए - बोले , यह सब कुछ सत्यानन्द ने तुम्हें बताया होगा —फिर कुछ रुककर बोले — तेरा तो गुरु भाई है न ? बड़ा प्यारा बच्चा है पर भाग्यहीन ।

मैं चुप रहा । हकीकत ही यही थी, कि मेरे गुरु भाई सत्यानन्द ने ही इन बाबा का पता दिया था,और पेड़ों पर जो संकेत - चिन्ह बताये थे, वे उसी ने बनाये थे ।

मैंने नजरे ऊपर उठाई, उनकी आंखों में रोष तो अभी तक था, पर क्रोध नहीं था, धीरे-धीरे नेत्रों की दहक करुणा में परिवर्तित हो रही थी।

— तो सत्यानन्द ने तुझे भेज ही दिया, स्वर्ण बनाने की विधि सीखने के लिए - वह भी महीने भर तक यहां सिर फोड़कर गया। - और तू भी जायेगा कोरा का कोरा — ।

मै क्या कहता ? यहां तो सिर मुंडाते ही औले पड़े अभी तो मैंने कुछ कहा ही नहीं है, तब तक तो मेरे आने का मन्तव्य ही बता दिया कि मैं विद्या प्राप्त नहीं कर सकूंगा, कोरा का कोरा वापिस जाना होगा ।

मैं बोला - अगर आप आज्ञा देंगे तो मैं निश्चय ही चला जाऊंगा अगर मेरे भाग्य में आप से कुछ भी सीखना नहीं बदा है, तो विवशता है मेरे भाग्य रूपी किवाड़ बंद हैं, मुझे भरोसा था, कि आपकी कृपा प्रहार से ये किवाड़ अवश्य ही खुल जायेंगे पर - ।

— बड़ा चतुर है रे तू — बातें तो बहुत अच्छी बना लेता है — ठीक है, रुक जा — मैं समाधि में जा रहा हूं- पर इस बार श्रांग मन्त्र का प्रयोग मत करना — और मेरे उत्तर देने से पहले ही वे समाधि में रत हो गए ।

सांझ हुई, सांझ से रात और फिर प्रातः हो गया, चिड़ियां चहचहाने लगी, उषा प्राची से झांकने लगी- सारी रात जागते बीत गई थी, न तो जाने के लिए कहा था, और न सोने के लिए रात्रि - जागरण से आंखे उनींदी हो रही थी — बाबा जी अभी तक समाधिस्थ थे। मैं उठा , पास में ही बाघमती नदीं कलकल बह रही थी, नित्य क्रिया से निवृत्त हुआ, स्नान किया और संध्या वंदनादि से निवृत्त होकर जब मैं कुटिया पर आया तब भी बाबा जी उसी आसन में उसी प्रकार समाधिस्थ थे ।

मैंने जल से कुटिया को लीपा और उसके बाहर झाड़ू लगाकर सफाई की, बाहर भी जल छिड़काव कर कुटिया को सुरम्य बनाने का प्रयास किया इस सारी क्रियाओं में लगभग ग्यारह बज गये,बाबा जी अभी तक समाधिस्थ थे ।

मैं वापिस कुटिया में पहुंचा और सामने बैठ गया । 'श्रांग मन्त्र' प्रयोग करने को मना कर दिया था, अतः विवश था — काठमांडु में मै जिस सज्जन के यहां ठहरा था, उन्हें दो चार घंटों में आने का कह आया था,और रात को भी वहां नहीं जा पाया था, निश्चय ही वे चिन्ता करते होंगे और बाबा कब समाधि खोले, क्या कहा जा सकता था, 'राजा जोगी अगन जल इनकी उलटी रीत' इस छोटे से कार्य या स्वार्थ के लिए गुरुजी को स्मरण करना या उन्हें कष्ट देना उचित नहीं समझ रहा था, बड़ी विषम स्थिति थी ।

धीरे-धीरे चार बज गये - अभी तक उनकी समाधि टूटने का कोई क्रम नजर नहीं आ रहा था, और इसके बाद सांझ, सांझ से रात और रात के बाद वापिस दिन निकल गया, दो रात्रि जागरण से थक सा गया था, उठा बाघमती में आध पौन घंटे नहाता रहा, तब जाकर जड़ता और थकावट कुछ दूर हुई, संध्यापासना कर जब वापिस कुटिया पर आया तब भी बाबाजी उसी प्रकार निश्चित समाधिरत थे, एकासन, ध्यानस्थ, समाधिस्थ ।

मैने एक बार फिर 'श्रांग मन्त्र' जपने का निश्चय किया, यद्यपि यह आज्ञा का उल्लंघन था पर और कोई उपाय नहीं था, गुरुस्मरण कर 'क्श्रांग मन्त्र'-साधना प्रारम्भ की और दस मिनट भी नहीं बीते होंगे, कि उनकी समाधि टूट गई, आंखें खुल गई, मुंह से विस्फोट हुआ - दुष्ट - फिर तूने यह क्या किया ?

मैं खड़ा हो गया था, नत — नयन — विजड़ित — बोला — अपराध फिर हुआ, पर आप की बात सुने अड़तालीस घंटे से भी ज्यादा व्यतीत हो चुका हैं, मैं तो साधारण प्राणी हूँ, — इतने लम्बे समय तक एकाकी बैठे रहना - और फिर जब कोई आज्ञा नहीं कोई वाणी नहीं - कोई उपदेश नहीं - तो बाल हठ से यह जो कुछ भी हो गया है - जितना भी अपराध हो गया है, आप ताड़ना दें —मैं तो स्वीकार करुंगा ही — ' कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ' ।

बाब हंस दिये — देख रहा था रे तेरे धैर्य को, थोड़ा और धैर्य रखना था । मैंने सोचा — और कितना धैर्य रखूं — पर क्या कहता — बोला नहीं ।

बाबा हंसे, बोले — पूछ ! क्या जानना चाहता है ?

मैंने अपनी सारी स्थिति स्पष्ट कर दी और संक्षेप में घर छोड़ने से लगाकर उस कुटिया में पहुंचनेतक की सारी बातें सारी घटनाएं स्पष्ट कर दी,यह भी बता दिया कि मैं किस उद्देश्य से आया हूँ, क्या चाहता हूँ और किसने पता बताया था आदि - आदि !

बोले — और यह सब सुनने के बाद भी यदि स्वर्ण बनाने की विधि या सिद्ध सूत बनाने की प्रक्रिया न बताऊं तो ?

निवेदन किया — मैं तो अपनी झोली फैलाकर खड़ा हूं, यह मेरे भाग्य और दाता की इच्छा पर निर्भर है, कि वह मुझे भिक्षा दे या न दे —

बाबा मूड में थे — बोले - जा ! कुछ सूखी लकड़ियां चुन ला ।

मैंने आज्ञा पालन में तत्परता दिखाई और सीधे कडे व छोटी -छोटी सूखी लकड़ियां लाकर ढेर कर दी ।

बोले - आग लगा दे इसमें - माचिस है तेरे पास ?

मेरे पास माचिस कहां से होती, और बाबाजी के पास तो होने का प्रश्न ही नहीं था - पूरी कुटिया में वस्तु नाम पर केवल बाबा जी और कमर से बंधा हुआ हाथ भर कपड़ा था ।

बाबा जी ने मुझे अर्थ पूर्ण नजरों से ताका – मैं समझ गया और रावणकृत आग्नेय मन्त्र से उन सूखे कंडों व लकड़ियों में आग लगा दी ।

बाबा जी मुस्कुराए - आसन से उठकर बाहर आये और अग्नि के सामने बैठ गये – बोले लोहे को सोने में परिवर्तित देखना चाहता है ? सिद्ध सूत देखना है ?

मैंने हां भरी, तो बोले - मेरे आसन के नीचे जो कांच की शीशी पड़ी है, वह उठा ला ।

मैं कुटिया में गया और आसन के नीचे पड़ी शीशी को उठा लाया - शीशी में लगभग पाव भर सफेद चूर्ण सा था ।

बाबा बोले – लोहे की कोई वस्तु है तेरे पास ?

मैं इधर-उधर ताका वहां लोहा कहां से आता ? फिर अचानक स्मरण आया कि मेरे जनेऊ में घर के बक्से की चाबी बंधी हुई थी, जो कि घर से रवाना होते वक्त भूल से बंधी रह गई थी, मैंने जनेऊ से बंधी चाबी खोलकर बाबा जी के हाथ में दे दी ।

बाबा जी ने वह लोहे की चाबी जो कि लगभग सौ ग्राम वजन की थी, आग में रख दी, कुछ समय बाद वह लाल सुर्ख हो गई, बाबा जी ने दो लकड़ियों की सहायता से लाल सुर्ख चाबी को बाहर निकाला और उस शीशी में से एक तिनके पर लेकर मामूली सा 'सिद्ध सूत' उस चाबी पर डाला -धीरे - धीरे चाबी पर पानी डाला, लोहे की चाबी सोने में परिवर्तित हो चुकी थी ।

बाबा जी ने वह चाबी उठा कर मुझे दे दी और बोले – सोने की है न !

मैंने कहां – हाँ बाबा जी ।

बोले – अब काठमांडू चला जा – शाम को पांच बजे आ जाना, अभी मैं किसी कारण से अकेला रहना चाहता हूं।

मैंने उनके चरण स्पर्श किये – और प्रदक्षिणा कर उनकी आज्ञा से रवाना हो गया, चाबी मेरी जेब में थी ।

काठमांडू पहूंचा तो आश्रयदाता की जान आई, वे चिन्ता कर रहे थे, जो कि स्वाभाविक थी - इधर -उधर की बात्चीत के बाद मैंने वह चाबी उनके सामने रखी और कहा कि किसी ऐसे सुनार के पास ले चलों जो इसे परखे, मैं यह बेचना चाहता हूँ ।

हम दोनों उनके एक स्वर्णकार मित्र के पास पहुंचे और चाबी उनके सामने रख दी, उसने अच्छी तरह से परख कर कहा कि चाबी असली सोने की है, और शुद्ध तेजाबी सोने की बनी हुई है, अगर बेचना चाहों तो अभी दाम दे दूं ।

मैंने चाबी उठाकर अपनी जेब में रख ली, बोला - बेचनी नहीं है, मालूम ही करना था ।

हम दोनों घर आ गये और आश्रयदाता को कहा कि मैं बाहर जा रहा हूँ। शायद कल सुबह आ जाऊंगा या तीन चार दिन बाद, तुम चिन्ता न करना ।

शाम को पांच बजे के लगभग मैं कुटिया पर जा पहुंचा, बाबा जी कुटिया में नहीं थे, मैंने कुटिया साफ की, आसन को झटक कर पुनः बिछाया, आसन के नीचे सिद्ध सूत की वह शीशी ज्यों की त्यों पड़ी थी, इसके अलावा भी छोटी-छोटी तीन - चार शीशियां और पड़ी थी, जिनमें कुछ द्रव्य पदार्थ से थे ।

मैं कुटिया के बाहर आया, बाबा जी सवेग एक तरफ से आ रहे थे, पास आकर बोले – आ गया तूं !

हाँ प्रभू !

बाबा बोले नहीं, चुपचाप बैठ गये चिन्तनपूर्ण चेहरे पर कुछ पीड़ा और उदासी के भाव थे ।

सांझ के धुंधलके में बाबा ने मौन तोड़ा - बोले तू अपने घर जा, बेकार यहां समय नष्ट मत कर -कोई फायदा नहीं, यह सब सीख साख कर — – और बाबा कुटियां में जाकर सो गये ।

मैं तो सन्न रह गया, मुझे तो ऐसा भरोसा ही नहीं था, कि बाबा जी मना कर देंगे - अब रुकना भी व्यर्थ था – बाबाजी की हठ के बारे में मैं भी सुन चुका था, कि एक बार जो कह देते हैं, टस से मस नहीं होते ।

मैं भी कुटिया में पहुंचा, बाबा सो रहे थे – मैंने पैर दबाने का विचार किया और पास में बैठकर पैर दबाने लगा, बाबा बोले नहीं।

धीरे-धीरे अंधेरा घिर आया, रात हो गई, कलाई घड़ी में देखा तो रात के ग्यारह बज रहे थे, मन में तूफान मचल रहा था, कितने अरमानो से मैं यहां आया था, क्या भूल हो गई मुझसे ? या मेरे भाग्य में ही यह विद्या सीखनी नहीं बदी है क्या बाबाजी के पास स्वर्ण में परिवर्तित करने के लिए जितना सिद्ध सूत है, उससे तो हजार मन लोहे को सोने में परिवर्तित किया जा सकता है।

और उसी समय किसी कुत्सित अन्न के प्रभाव से मेरे मन में विचार उठा , यदि उस शीशी को ही उठाकर ले चलू तो - इससे जीवन भर स्वर्ण बनाया जा सकता है ।

बाबा खर्राटे भर रहे थे, एक क्षण के लिए विचार आया कि इस सिद्ध सूत की शीशी को अभी उठाकर ले चलूं —

– कि बाबा जग गये – बोले – नारायण !

मैं चौंका, विचार क्रम टूटा , बोला – हाँ प्रभु !

बोले – चुराकर क्यों ले जाना चाहता है, शीशी को मांग ले – और उन्होंने मेरी ओर ताका ।

उफ् ! मेरा चेहरा फक् हो गया, कुछ ऐसा लगा, जैसे मेरे दोनों गालों पर हजारों -हजारों तमाचे जड़ दिये हों, उस समय तो धरती फट जाती तो निश्चय ही मैं उसमें समा जाता और निश्चय ही इससे मुझे सुख मिलता -- पापी के घर का अन्न मेरे पेट में गया, कि ऐसे कुत्सित विचार मेरे मन में उठे, जीवन में पहली बार इतने घृणित विचार कैसे आए – आंखें अपमान से – आंसुओं से भर गई जीवन बोझिल सा लगने लगा और जोर-जोर से हिचकियां भरने लगा ।

बाबा उठकर बैठ गए, आसन के नीचे से वह शीशी निकाल कर मेरे सामने रखते हुए बोले ,रो क्यों रहा है रे पगले! तुझे शीशी ही तो चाहिए – ले जा इसे और मेरे सिर पर हाथ फेरने लगे ।

मै क्या कहता ? मुझसे कितना भारी अपराध हो गया था, क्या यह कलंक जीवन में मिट सकेगा ? मैं उठा और कुटिया से बाहर निकल आया। बाबा मेरे पीछे -पीछे आये और मुझे साथ लेकर बाघमती की ओर चल दिये, रात का लगभग एक बज रहा था, और हम दोनों नदी के किनारे बैठ गये।

बाबा बोले , तूने एक अपराध तो किया ही है, और अब नदी में डूब कर प्राण गंवाने का दूसरा अपराध मत करना तू – जब चला था, तभी समझ गया था, इसलिए मैं तेरे साथ-साथ था, तुझे इस जीवन में कुछ करना है - इस जीवन पर अब तेरा हक, नही मेरा हक है, तेरे गुरु स्वामी सच्चिदानन्द का हक है, तुझे क्या अधिकार है, इस प्रकार अपने आपको विसर्जित करने का?

मैंने बाबा की तरफ देखा, उनकी आंखों में करुणा थी, स्नेह और दया का आलोक था, मै उस नदी किनारे ही बाबा के चरणों में गिर पड़ा – आंखें अब भी बरस रही थी और बाबा के चरण भिगो रही थी ।

बाबा ने थपकी देकर मुझे उठाया, कुटिया पर ले गये और अपनी इच्छा से ही सिद्ध सूत बनाने की पूरी प्रक्रिया समझाई – यही नहीं अपने सामने सिद्ध सूत बनवाया और उसके माध्यम से मेरे हाथों से ही उस सिद्ध सूत के सहयोग से लोहे को स्वर्ण में परिवर्तित करवाया ।

इस घटना के बाद करीब पन्द्रह दिन बाबा के पास रहा, सिद्ध सूत के अलावा भी उन्होंने कई मन्त्र साधनाएं सिखलाई, उन्होंने गुरु-शिष्य का भाव न रखकर मित्रवत् भाव रखा, धीरे -धीरे घनिष्टता बढ़ी और आयु में इतना अधिक अन्तर होने पर भी मित्रवत् समबन्ध बने – आज मै इन बाबा को अत्यन्त निकट का मित्र मानता हूँ काम्य - साधना से कई बार बातें इसके बाद भी हुई है ।

इनके अलावा भी बहुत से तांत्रिकों, योगियों से नारायण ने बहुत कुछ सीखा फिर भी कुछ के विषय में चर्चा करना उचित और संभव है । पगला बाबा, देहरादून से आगे शिमला से लगभग दल किलोमीटर दूर लाल टीबे के पास रहते थे इस तांत्रिक से नारायण की भेंट हुए और इससे उन्होंने बला महाबला साधना सीखी । इस विद्या के माध्यम से पचास मन वजन का पत्थर भी फूल की तरह उठाया जा सकता है और उंगली के संकेत से पेड़ जड़ से उखड़ कर गिर जाते हैं। गोरख गोखरु भी एक श्रेष्ठ तांत्रिक थे जिनसे अदृश्य होना, दूर की वस्तु को आसानी से देख लेना, सैकड़ों मील दूर की वस्तु को मंगा लेना आदि सीखीं थी । धूर्जटा तांत्रिक क्षेत्र में निष्णात था उससे भूगर्भ निधि ज्ञान तन्त्र, कज्जल तंत्र, नख दर्पण तन्त्र, दीप तन्त्र, आकर्षण तन्त्र आदि विद्याएं सीखी थी । बाबा हिमालय स्थित देव आश्रम के संस्थापक , संचालक हैं नारायण इनके साथ लगभग चार माह रहे और शक्तिपात की विशेष दीक्षा ली, इसके अतिरिक्त कुंडलिनी जागरण, शक्तिपात, ऊर्ध्व विरोचन, अंतरिक्षु साधना आदि सीखी। वास्तव में ये साधनाएं अद्भुत हैं, तथा प्राणमय कोष को झंकृत करने का एकमात्र उपाय है। पत्थर बाबा साधकों में वंदनीय एवं पूज्य माने जाते हैं आप मन्त्रशक्ति के अद्भुत जानकार व सिद्धहस्त बाबा है, परकाया प्रवेश रहस्य नारायण ने इन्हीं से प्राप्त किया जिसके माध्यम से स्वेच्छा से अपनी काया छोड़ कर अन्य किसी की काया में प्रवेश करना और फिर अपनी स्वकाया में आ जाना संभव है । पंडित जगन्नाथ शांत व सरल गृहस्थ होते हुएभी अद्भुत साधक है, लक्ष्मी , सरस्वती रहस्य, काम्य साधना, वीर साधना,

विजय साधना, मनस्सा साधना, सम्प्रज्ञान साधना, आनंद साधना, प्रं साधना आदि नारायण ने आपके पास रहकर ही सीखी थीं । श्याम बाबा कृशकाय, पर मन्त्र शास्त्र में सिद्धहस्त, दुर्गा के परमभक्त थे ।इनसे शक्ति तत्व, काली साधना, व मन्त्रात्मक दुर्गा साधना जो विश्व में सर्वश्रेष्ठ है सीखी थी ।ओंकारा स्वामी साबर मंत्रों के विशेष जानकर हैं इन्हें साबर मंत्रों के जानकर गुरुजी के नाम से पुकारते है इनका महत्व इस बात से आंका जा सकता है कि साबर मन्त्रों की साधना प्रारंभ करने से पहले बाबा का स्मरण करके ही कार्य प्रारंभ किया जाता है । इनसे शरीर रक्षा, विभिन्न दर्द एवं पीड़ानिवारण , वाक सिद्धि, अग्नि शांत, व्यापार वृद्धि आदि मंत्रों को प्राप्त किया।

अखंडानंद स्वामी निवास केदारनाथ के पास है तथा ये मंत्र क्षेत्र में अद्वितीय हैं । इनसे उच्छिष्टगणपति, हरिद्रा गणेश, महामृत्युजंय, वाराह, सूर्य, दधिवामंनारत्य, अग्नि, रामप्रोक्त हनुमान , लांगूलास्त्र शत्रुंजय, भैरव, कामदेव, क्षेत्रपाल, कुबेर, षणमुख गायत्री, महाविद्या साधनाएं, कात्यायनी आदि विशिष्ट साधनाएं, आकाशचारी तथा जलचारी आदि साधनाएं सीखी। स्वामी वेदानंद ने अपनी डायरी में नारायण के जल गमन साधना तथा अन्य साधनाओं को करने का वर्णन लिखा है ।

यह साधना उन्होंने कनखल , हरिद्वार में सम्पन्न की थी । वेदानंद जी लिखते है –

आश्चर्य है कि यह कौन युवा सन्यासी है जो अत्यधिक आकर्षक और सम्मोहक है, जरुर कोई देवात्मा भटक कर सन्यासी के रूप में अवतरित हुई होगी, क्योंकि ऐसी साधना सामान्य मनुष्य के वश की बात नहीं है, १७ वां दिन है और देखता हूँ, कि यह युवा सन्यासी अविचल भाव से गंगा के मध्य खड़ा सतत मन्त्र जाप कर रहा है, खाने-पीने के नाम पर कभी-कभी केवल गंगा जल ले लेता है, अपने दोनों तरफ मजबूत काष्ठस्तम्भ लगे हैं, जिससे कि नींद के प्रकोप से माला गिर न जाय या झपकी आने पर शरीर पानी में न पड़ जाय ।

यह ऊर्ध्व चेता साधना है, जिसमें जरुरत से ज्यादा दमखम हौंसला और हिम्मत होती है, वही इस प्रकार की साधना को सम्पन्न करने का जोखिम उठा पाता है, चौबीस दिन की यह साधना अत्यधिक कठिन और कष्टप्रद होती है, इसमें सीने तक पानी में खड़े -खड़े मन्त्र जप सम्पन्न करता होता है। और भूख प्यास नींद को पूरी तरह से नियन्त्रित कर सतत साधना सम्पन्न करनी पड़ती है, मेरे एक गुरु भाई है, उसने छः बार इस प्रकार की साधना सम्पन्न करने का उपक्रम किया और हर बार निराश रहा, पानी में खड़े-खड़े पावों की नसें फूल जाती है, और उसमें पानीभर जाने के कारण असहनीय दर्द होने लगता है, इससे भी ज्यादा व्यथा उस समय होती है, जब मछलियों को ताजा गोस्त खाने को मिलता है और वे पावों के मांस को नोच-नोच कर खाने लगती है, जरुर इस सन्यासी के साथ भी ऐसा ही घटित हो रहा होगा, परन्तु फिर भी इसके चेहरे पर किसी प्रकार का तनाव या व्यथा के चिन्ह नहीं है ।

मैंने बराबर इस सन्यासी को पानी में खड़े देखा है, कल इसकी साधना का अन्तिम दिन था, इसने अपनी साधना जिस संकल्प शक्ति के बल पर सम्पन्न की है, वह बिरले लोगों के नसीब में ही होता है, गंगा तट पर हजारों लोगों की भीड़ है, इस भीड़ में सैकड़ों सन्यासियों को भी देख रहा हूँ, मैंदेख रहा हूँ, कि सन्यासी ने अपना अन्तिम मन्त्र जप सम्पन्न किया और दोनों हाथ ऊपर उठाकर अपने गुरु को मन ही मन अर्घ्य दिया, कुछ युवा सन्यासी पानी में उतरे हैं, और आसपास के स्तम्भो से बंधे रस्से को हटाकर इस तेजस्वी सन्यासी को पानी से बाहर लाने का उपक्रम कर रहे है,चौबीस दिन एक स्थान पर खडे होने से पावों का खून जम सा गया है, सन्यासी चलते हुए लड़खड़ा रहा है, उसे सहारा देकर बाहर लाया गया, उफ!सारे पांव छलनी हो गये है, नसें फूल गई है, और पांवों को जगह-जगह से मछलियों ने काट खाया है कुछ स्थानों पर एक-एक इंच गहरे गड्ढे भी दिखाई पड़ रहे हैं, मगर इतना होने के बावजूद भी उसके चेहरे पर किसी प्रकार की पीड़ा या विषाद के चिन्ह नहीं है, वास्तव में ही यह लौह पुरुष सन्यासी है, सारा आकाश उस सन्यासी की जय से गुंजारित हो रहा है, कुछ युवा सन्यासियों ने गर्म तेल से उसके पैर की मालिस प्रारम्भ कर दी है , शायद ये युवा सन्यासी व्यक्तित्व के शिष्य है । जिस अप्रतिम संकल्प शक्ति के सहारे इस योगी ने यह साधना सिद्ध की है, वह अद्वितीय है ।

मेरा मन और शरीर स्वतः इसके चरणों में झुक गया है ।

यूं तो मेरा पूरा शरीर हिमालय में भटकते ही बीता है, मेरे मन की यह बलवती इच्छा थी, कि मैं गंगोत्री में आकर गंगा स्नान करूं और यदि सम्भव हो तो मैं गोमुख तक पहुंचूं । गंगोत्री आने पर मुझे स्वामी सत्यानंद जी मिल गये जो अब तक तेईस बार गोमुख होकर लौट आये हैं,उनका साथ मिलने से मुझे विश्वास हो गया कि अब मै अवश्य ही अपनी आंखों से गौमुख के दर्शन कर सकूंगा जहां पहली - पहली बार गंगा, बूंद का रूप धारण करती है।मैं उनके साथ हो लिया।

आज कितना आनन्ददायक और सौभाग्यशाली दिन है, कि मैं गोमुख के सामने हूं, इतना आनन्ददायक दृश्य कि जिसे हजार -हजार मुंह से शेषनाग भी बयान नहीं कर सकते, प्रकृति यहां खुले हुए दृश्य के साथ अवस्थित है, एक-एक दृश्य बांध लेने लायक है, बर्फ की सुरंग सी बनी हुई मुझे दूर से ही स्पष्ट दिखाई दे रही है, इसी सुरंग से चू-चू कर पानी निकलता है, और यही पानी आगे चलकर गंगोत्री पर गंगा का रूप धारण करता है ।

चारों तरफ कड़ाके की सर्दी है, मैंने तीन स्वेटर और कम्बल ओढ़ रखे हैं, फिर भी मेरा शरीर थरथरा रहा है परन्तु यह क्या ? सामने बर्फ की सुरंग के मुंहा पर भयकंर शीत में भी कौन व्यक्ति अविचल भाव से बैठा है, मैं अपने कौतुहल को रोक नहीं पा रहा हूं और स्वामी

सत्यानन्द जी से उस तरफ चलने के लिए आग्रह करता हूँ, उनका कहना है कि उस तरफ जाना खतरे से खाली नहीं, किसी भी समय बर्फ का तूफान आ सकता है, और जान जोखिम में पड़ सकती है - परन्तु मेरी बलबती इच्छा उस देवात्मा के दर्शन करने की है, मैं उनसे हठ कर आगे बढ़ता हूँ, और उस स्थान को देखता हूँ जहां सन्यासी अविचल भाव से ध्यानस्थ है ।

बर्फ की बिखरी हुई श्रीराजि के बीच यह छोटी सी चट्टान और उस पर केवल एक लंगोटी धारण किये युवा सन्यासी किसी विशेष साधना में रत है, मैं और नजदीक जाता हूँ तो आश्चर्य से ठक सा रह जाता हूँ, यह तो वही सन्यासी है जिसे मैंने कनखल में साधना करते देखा है, क्या इसने अपने शरीर को पूरी तरह से साध रखा है? क्या इस पर सर्दी या तूफान का कोई असर नहीं होता है? यह कौन साधक है ? जिसने खतरों से खेलना ही अपने जीवन का ध्येय बना रखा है, वास्तव में ही यह अद्वितीय संकल्पशील व्यक्तित्व है, स्वामी सत्यानन्द जी ने मन ही मन उन्हें प्रणाम किया और बताया कि चार महीने पहले भी मैं यहाँ आया था, तब से यह सन्यासी यहाँ बराबर ध्यानस्थ बैठा रहता है, तीन चार दिन में एक बार चीड़वासा जाता है, वहाँ चार छः घंटे रुकता है, और फिर लौट आता है, चार दिन में केवल एक हाथ में आने लायक आहार ग्रहण करता है, इसके अलावा यह कुछ भी नहीं लेता , चीड़वासा के स्वामी जी ने कम्बल भेंट किये तो इसने वहीं छोड़ दिये अत्यधिक तेजस्वी व्यक्तित्व हैं, इसका ।

सर्दी बढ़ने लगी थी, और हवा थोड़ा उग्र रूप धारण करने लग गई थी हम दोनों ने श्रद्धा युक्त उस सन्यासी को प्रणाम किया, और नीचे की ओर लौट पड़े ।

कुछ समय वाद स्वामी जी लिखते हैं जब वह केदारनाथ जाना चाहते हैं -

हिमालय में रहकर जिसने भगवान केदारनाथ के दर्शन नहीं किये उसका जीवन ही व्यर्थ है, ऐसे जीवन का मूल्य ही क्या जिसने केदारनाथ व बद्रीनाथ के चरणों में अपना सिर न झुकाया हो? पर केदारनाथ का रास्ता अत्यधिक ऊबड़ खाबड़ और खतरों से भरा है, कहीं -कहीं पर तो पगडंडी एक फुट से भी छोटी हो जाती है, परन्तु मैंने भगवान केदारनाथ के दर्शन करने का पक्का निश्चय कर रखा था, और अब मैं भगवान केदारनाथ के मन्दिर में उनके विग्रह के सामने खड़ा हूँ तो मेरा सारा शरीर रोमांचित है, आंखों से प्रेमाश्रु निरन्तर प्रवाहित है, और आज के दिन को मैं अपना सौभाग्यशाली दिन कहता हूँ ।

गर्भ गृह की परिक्रमा कर ज्यों ही मैं उत्तर द्वार की ओर से बाहर आता हूँ, तो गर्भ के बाहर ही प्रांगण में युवा सन्यासी ध्यानस्थ दिखाई दे जाता है, उसके मुंह से उच्चरित शब्द मेरे कानों में अमृत कणों के रूप में बरसते है, इतना सुमधुर कंठ, इतना शुद्ध त्रुटिहीन उच्चारण और इतनी तन्मयता पुष्पदन्त के शब्द उसके होठों से निस्रत होकर पूरे वातावरण को शिवमय बना रहे है—

असित गिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धु पात्रे, सुरतरु वरशाखा लेखनी पत्र मूर्वी ।

लिखति यदि ग्रहित्वा शारदा सर्वकालं, तदपि तव गुणानांमीष पारं न याति ।।

यह क्या संयोग है, कि बार-बार इस देव सन्यासी के दर्शन हो जाते हैं, कनखल में इसकी साधना की सहन शीलता देखी, गौमुख पर इसकी अजेय संकल्प शक्ति मेरे सामने थी, और आज केदारनाथ पर इससे भेंट विलक्षण है, मेरी डायरी के जो पृष्ठ इस युवा सन्यासी के वर्णनों से भरे हैं, वे मूल्यवान है, मेरे लिए धरोहर है, यह सन्यासी आगे चल कर अद्वितीय बन सकेगा इसमें कोई सन्देह नहीं ।

इसके कुछ समय बाद जब स्वामीजी मनाली पहुंचे तब वहां पर भी वे ठगे से रह गये । उन्हीं के शब्दों में - कुल्लु मनाली हिमालय के सौन्दर्यशाली स्थल है, जहां प्रत्येक व्यक्ति अपना कुछ समय व्यतीत करना चाहता है, कई वर्षों बाद आज मैं पुनः इस स्थान पर आया हूँ, वर्षा के दिन है, और इस समय यह व्यास नदी अपने पूरे उद्दाम यौवन पर है, ऐसा लगता है, जैसे यह सारे आसपास के प्रदेश को लील जायेगी, मनाली के लोग घबराये हुए हैं, किस समय नदी तांडव नृत्य प्रारंभ कर दे, कुछ कहा नहीं जा सकता, लोग घर बार छोड़ कर दूर-दूर अपने सम्बन्धियों के यहां जाने लगे है, व्यास नदी का विकराल रूप उनकी आँखों में दहशत पैदा कर रहा है, मैं इस नदी के किनारे पर खड़ा इसके प्रचंड यौवन को देख रहा हूँ, सोच रहा हूँ कि तुरन्त कुल्लु की तरफ लौट जाऊ, एकाध दिन में यह नदी अवश्य ही प्रलय का सा दृश्य उपस्थित कर देगी ।

तभी एक सन्यासी को अपने सामने आते हुए देखता हूँ, देखता हूँ, कि यह पहले से भी दुबला होगया है; परन्तु उसकी चाल वैसी ही गंभीर और सिंहवत् है, उसके चेहरे पर वैसे ही तेजस्विता और शांति का साम्राज्य है, पास आने पर मैं पहचान लेता हूँ कि यह तो वही सन्यासी है, जिन्हें मैंने पिछली बार केदारनाथ पर देखा था,मैं अपने आपको रोक नहीं पाता हूँ, और आगे बढ़कर उनके चरणों को छु लेता हूँ।

वे उठाकर मुझे सीने से लगा लेते हैं, इतना विशाल वक्षस्थल मैंने अपने जीवन में पहली बार देखा था, इतना उद्दाम यौवन तथा ऊष्मा का भंडार मैंने पहली -पहली बार अनुभव किया, सैकंड के कुछ हिस्से के लिए मेरा शरीर उनके वक्ष स्थल से लगा था, पर इस एक क्षण में ही मेरा सारा शरीर ऊष्मा से भर गया, आनन्द से सरोबार हो गया, काश! मैं कुछ पल और उनके सीने से चिपका रहता ।

तभी हमने देखा कि नदी विकराल रूप धारण कर रही है, उसकी लहरें आठ - दस फीट ऊपर उठने लगी है ओर किनारों को तोड़ कर फैलने लगी है, मैंने हल्के से स्वर में कहा- हमें तुरन्त यहां से बढ़ जाना चाहिए, उन्होंने मेरी ओर ऐसी नजरों से देखा कि मैं सन्यासी होकर भी लज्जा , शर्म और ग्लानी से भर गया, मानों वे नजरें कह रहीं हो कि सन्यासी हो कर भी प्राणों का ऐसा मोह?

तभी एक व्यक्ति नदी की चपेट में आ गया, उसके गले से घबराती फंसी आवाज वातावरण में गूंज पड़ी, बचाओं शब्द आसपास फैल गया पर किस में हिम्मत थी, कि उस नदी में कूद कर अपने हाथों मृत्यु का वरण करे, उसको बचाया जाना तो असम्भव था ही, कूदने वाले का खुद भी बचना सम्भव नहीं था ।

सन्यासी ने एक पल के लिए मेरी ओर देखा, मैं यह डायरी लिखते हुए सत्य बोल रहा हूँ, कि मेरी आँखो में भय भरा हुआ था, पर दूसरे ही क्षण मैंने देखा कि उस सन्यासी ने हहराती व्यास नदी में छलांग लगा दी है, मैं ही नहीं आसपास जो लोग इधर-उधर भागने के उपक्रम में थे, वे भी सभी सन्न रह गये, और चीख पड़े ।

मैंने सोच लिया कि किसी भी हालत में सन्यासी और उस डूबने वाले व्यक्ति का बचना सम्भव नहीं है, अकाल समय में ही सन्यासी की मृत्यु इस प्रकार से हो जायेगी मैंने कल्पना ही नहीं की थी, इस तेजस्वी व्यक्तित्व को मृत्यु इस प्रकार से दबोच लेगी यह सोचकर सारे शरीर में सिहरन सी भर आई थी, परन्तु तभी हम सबने देखा कि यह युवा सन्यासी नदी की विपरीत धारा में उस व्यक्ति को खींच कर अपने कंधे पर लाद कर बहता हुआ किनारे की ओर आ रहा है, मेरे लिए तो यह सर्वथा अप्रत्याशित था, कि लहरों के इस तांडव नृत्य में कोई बच जाय परन्तु यह सन्यासी अपने साथ उस व्यक्ति को भी ढोये चला आ रहा था, यह आश्चर्य -- घोर आश्चर्य था ।

सन्यासी का सारा शरीर लहरों से जूंझने के कारण थका हुआ था, परन्तु उनकी लम्बी और बलिष्ठ भुजाओं में बेहोश व्यक्ति पड़ा हुआ था, सन्यासी ने उसे जमीन पर लिटाया और फिर उसके सारे शरीर को दबाकर, विशेष कर पीठ के बल लेटाकर उसके पेट से सारा पानी निकाल दिया, फिर उसके नाक और मुंह में कृत्रिम सांस देते हुए सन्यासी को हमने देखा और देखा, कि उस व्यक्ति ने आंखे खोल दी हैं, हम सब लोगों के चेहरे प्रसन्नता से खिल उठे और उस सन्यासी के प्रति मानवीय कृतज्ञता से भर गये ।

उसे होश में आया देख सन्यासी उठ खड़ा हुआ, उसके सिर पर हाथ रखा हम सबको एक क्षण के लिए देखा और उनके होठों पर किंचित मुस्कुराहट फैल गई, उस एक मुस्कुराहट पर ही हम सब का जीवन शत शत न्यौछावर हो गया, पर तभी यह सन्यासी एक तरफ भीगे वस्त्रों में ही बढ़ गया, न तो किसी को धन्यवाद देने का अवसर दिया और न किसी प्रकार की कोई इच्छा ही बचाये रखी ।

इतना निस्पृह जीवन विरले लोगों में ही होता है अपनी प्रशंसा से दूर रहने वाले उस सन्यासी का एक और रूप मेरे सामने साकार हुआ कि यह साधना के क्षेत्र में तो अद्वितीय है ही, पौरुष के क्षेत्र में भी इसकी कोई मिसाल नहीं, इसकी भुजाएं , ऊष्मा से भरा हुआ वक्षस्थल और पुरुषोचित सौन्दर्य का साकारपुंज तेजस्वी व्यक्ति अपने आप में अद्वितीय है, इसके पास कुछ क्षण बिता देना ही जीवन का सौभाग्य है, खतरों से खेलना इस व्यक्तित्व की रुची है, मानवीयता की ऐसी मिसाल मिलना सहज सम्भव नहीं ।

स्वामी अखंडानंद जी की तरह ही मकरंद स्वामी भी मन्त्र साधना में सिद्ध हस्त हैं । राग, द्वेष ,लोभ, मोह से दूर गंगोत्री के पास इनका स्थान है, यहां भी नारायण ने रहकर बहुत सी साधनाएं सीखीं जिनमें विभिन्न यक्षिणियों की साधना, राज्य दां, अपामार्गी, उच्छिष्ट भैरवी, महामाया,भूतलोचना, अष्ट किन्नरी वर्ताली, वैताली, स्वप्नेश्वरी आदि साधनाएं प्रमुख हैं । इसी प्रकार यमुनोत्री से आगे भैरव शिला के पास रहने वाले पुरुंड बाबा भी मन्त्र साधनामें अद्वितीय माने जाते हैं, चेटक साधना में ये निष्णात हैं । इनसे लिंग चेटक, बटुक चेटक, काली चेटक , नानासिद्धि चेटक, मणिभद्र चेटक, हंसबद्ध चेटक , किंकरयमस्यचेटक, ज्वाला मालिनी चेटक, अदृष्य चेटक, रसायन चेटक, अघोर चेटक, वज्र प्रस्तारिणी चेटक आदि सीखे, वास्तव में यह सभी कुछ सीखना संभव ही नहीं है परंतु नारायण जैसे व्यक्तित्व के लिए तो कुछ भी असंभव नहीं है । स्वामी योगद्वयानंद ने नारायण के पौरुष, व्यक्तित्व और साधना के विषय में बताया था,

भले आदमियों पर विपत्तियां बार-बार आती है यह कहावत निखिल पर भी सोलह आने लागू होती है,मेरा काफी कुछ समय आदि बद्रीनाथ से आगे व्यास गुफा के पास व्यतीत हुआ और जब मैं जीवन के मध्यकाल में साधना की ऊंचाइयों को छूता हुआ ब्रह्माड साधना में रत था, तभी एक दिन एक दुबला पतला सा साधु कुटिया की ओर आया, चेहरे पर तेजस्विता, हृदय में निर्भीकता और पूरे शरीर में एक अजीब सी मस्ती बेफिक्री का भाव-- सब कुछ मिलाकर एक ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण कर रहे थे, जिसमें कुछ पाने की आकांक्षा हो, सहन करने की शक्ति हो ।

यह व्यक्तित्व आम साधकों की तरह ही मेरे आश्रम की ओर निकल आया था, उस समय मेरे आश्रम में दस बारह शिष्य थे, परन्तु इस व्यक्तित्व ने आश्रम में रहने या आश्रम का प्रसाद पाने से मना कर दिया, बोला -- मैंने आपका नाम सुना है, और कुछ प्राप्त करने की आकांक्षा है, मैं स्वयं अलग अपनी गुफा बनाऊंगा और रहूंगा, मुझे पहली ही बार में ऐसा लगा मानो यह साधक काफी ऊंचाई पर पहुंचने की क्षमता रखता है ।

धीरे-धीरे हम दोनों परस्पर घुल - मिल गये, बड़े और छोटे का भेद ही नहीं रहा, ऐसा लगा जैसे हम जन्मों -जन्मों से साथ रहे हों, और सौभाग्य की बात यह है, कि आगे चलकर हम दोनों ने एक ही गुरु से दीक्षा प्राप्त कर गुरु भाई बने ।

आज तो वे मुझ से साधनात्मक दृष्टि से काफी आगे हैं, परन्तु मैं उनकी प्रारम्भिक बातचीत,दृढ़ता और धैर्य भुला नहीं सका हूं, उन तीन वर्षों के साथ सैकड़ों - सैकड़ों अनुभव जुड़े हुए हैं,और जब भी मैं उन अनुभवों को स्मरण करता हूं , तो गला भर आता है, जी तो चाहता है, कि उन्हें खींच कर हमेशा - हमेशा के लिए अपने पास रख दूं ।

उस तरफ बर्फ गिरती रहती है, और साल के दो महीने तो ऐसे बीतते है, कि चारो तरफ बर्फ का साम्राज्य छा जाता है, यहां तक कि आश्रम का छः फुट ऊंचा दरवाजा भी बर्फ से ढक जाता है, आश्रम में हम पहले से ही अगले तीन चार महीने के भोजन की व्यवस्था करके रखते हैं परन्तु निखिल ने इस प्रकार की कभी कोई व्यवस्था नहीं की, उस समय यह मेरे आश्रम से लगभग आधा किलोमीटर दूर गणेश गुफा के पास अपनी एक सुन्दर गुफा में ध्यानस्थ था। भोजन तो दूर पानी की सुराही तक गुफा में नही रखता था, गुफा के बाहर ही नदी बहती है, कभी प्यास लगती तो यहीं प्यास बुझा देता परन्तु शीतकाल में इस नदी का पानी भी ऊपर से जम सा जाता है।

एक बार जोरो का बर्फीला तूफान आया और सब कुछ बर्फ से ढक गया, तीन दिन तक मैं और मेरे शिष्य आश्रम से बाहर नहीं निकल सके मैंने इससे पूर्व निखिल को अपने आश्रम में आने के लिए कह दिया था , परन्तु जिद तो उसमें कूट-कूट कर भरी है। जो मन में ठान लेता है, उसी को पूरा करता है, और यही नहीं गुफा में ही टिका रहा ।

जब मैं तीन दिन तक बर्फ की वजह से बाहर नहीं निकल सका तो मुझे चिन्ता हुई और बड़ी मुश्किल से पांचवें दिन उस गुफा तक पहुंचा जिसमें निखिल रह रहा था, उसके पास तो ऊनी वस्त्र या कम्बल भी नहीं थे फावड़ों से बर्फ तोड़कर अन्दर पहुंचे तो निखिल एक प्रकार से बेहोश सा गुफा की दीवार से पीठ टिकाये बैठा था उसकी हथेलियों और पैरों के तलवों की मालिश करने से शरीर में गर्मी का संचरण हुआ तो वह चैतन्य हुआ परन्तु फिर भी उसने आश्रम में चलने के लिए मना कर दिया और कहा पूरी साधना सम्पन्न करके ही आपके पास आऊंगा ।

यह थी उसकी दृढ़ता और अविचलता, जिसकी वजह से आज साधनात्मक ऊंचाइयों तक यह पहुंचने में सफल हो सका है ।

यौवन काल में उसमें गजब का आत्मविश्वास और शक्ति थी, साधनात्मक जीवन जीने का वह अभ्यस्त था, पर साथ ही साथ दूसरों के दुख में भाग लेना और दूसरों की मदद करना उसका स्वाभाविक गुण था।

एक बार गर्मी के दिनों में मैं और निखिल मनाली के आगे के जंगलों में विचरण कर रहे थे, ये जंगल उन दिनों भयानक और जंगली पशुओं से भरे हुए थे, उन जंगलों में जंगली भैंसे अधिकायत से पाये जाते थे, तीन साल का जंगली भैंसा इतना खूंखार होता है, कि शेर के सामने आने पर अपने सीगों से उसे भी उछाल देता है, उस समय वह पूर्ण यौवन पर होता है, तथा साक्षात यमराज का स्वरूप दिखाई देने लगता है ।

इन भैसों से बचाव का रास्ता पेड़ों पर चढ़ना ही होता है, परन्तु एक बार हम दोनों बातचीत में मग्न पगडंडी पर बढ़े चले जा रहे थे, कि सामने अचानक हमारी दृष्टि पड़ी तो शरीर में खून जम सा गया, हम से लगभग पन्द्रह बीस फीट सामने पगडंडी पर ही एक जवान अड़ियल भैंसा लाल-लाल आँखों से हम लोगों को घूरते हुए खड़ा था, उसके पैने नुकीले सींग और बलिष्ठ शरीर देखकर हाथी भी दुम दबाकर एक तरफ खड़ा हो जाता है, उस समय हमारे पास तो और कोई चारा ही नहीं था, आसपास कोई ऐसा बड़ा पेड़ भी नहीं था, कि जिस पर चढ़कर प्राण रक्षा की जा सके, ऐसा लगा मानो मृत्यु स्वयं यमराज - वाहन के रूप में सामने आ खड़ी हुई हो ।

तभी वह भैंसा जोरों से डहका और हमारी ओर झपटा निखिल ने मुझे सेकेंड के सौवे भाग में त्वरित निर्णय लेकर धक्का दिया और पगडंडी के एक तरफ झटक दिया और खुद भी सरक गया, वेग के साथ भैंसा पगडंडी से होता हुआ आगे निकल गया, वह लगभग पन्द्रह -बीस फीट आगे जाकर पुनः लौटा, तब तक मैं जमीन से उठकर खड़ा हो गया था और निखिल कुछ दृढ़ निश्चय लेकर सामने आ खड़ा हुआ और मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि तभी निखिल का जोरों का मुक्का उसकी पीठ पर पड़ा, वह मुक्का अपने आप में एक प्रहार था, वह अड़ियल बलिष्ठ भैंसा मुक्के के एक प्रहार को सहन न कर सका और जीभ निकाल कर वहीं पसर गया ।

मैं आश्चर्य — घोर आश्चर्य के साथ निखिल की ओर देखता ही रह गया, निश्चय ही उस दिन अगर निखिल मेरे साथ नहीं होता तो मेरी मृत्यु निश्चित थी, परन्तु इससे भी बढ़कर मैं आश्चर्य चकित था, उसके मुक्के के प्रहार पर । अब पता नहीं क्या स्थिति है, परन्तु मैंने उसके यौवन के उद्दाम वेग और बलिष्ठ शरीर को देखा है, ऐसा शरीर बिरले को ही भाग्य से नसीब होता है ।

उसके चेहरे पर एक गजब का आत्मविश्वास और धैर्य है, कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी वह विचलित नहीं होता, अपितु सहन शक्ति को बराबर बनाये रखकर उस विपत्ति में से भी रास्ता निकाल लेता है, सैकड़ों बार मैंने आश्रम पर और अन्य स्थानों पर उसकी अडिगता, धैर्य ,कष्ट - सहिष्णुता और क्षमता को अनुभव किया है ।

एक बार गोमुख जाते समय चीड़बासा के पास मेरा पैर फिसला और लगभग दो-तीन सौ फीट नीचे लुढ़कता चला गया, एक प्रकार से मेरा सारा शरीर पत्थरों से छिल गया था, ऐसे समय में यह इतनी ऊंचाई से नीचे कूद कर जिस प्रकार मुझे खड्ड में गिरने से बचाया, वह तो रोमांचकारी है, सही अर्थो में कहूं तो अब मैं जो भी श्वांस ले रहा हूँ, वे सभी श्वांस निखिल के दिये हुए है,यद्यपि आयु में मैं उनसे बड़ा हूं, परन्तु फिर भी मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ, ऋणी हूँ ।

गिरने पर जब मेरा सारा शरीर पत्थरों और जंगली झाड़ियों से छिल गया तो उसने मेरे जैसे बलिष्ठ व्यक्ति को कन्धे पर लाद,कर बारह किलोमीटर नीचे गंगोत्री तक ले आया, और वहां रह कर उसने जिस प्रकार से मेरी सेवा की, उसको तो शब्दों के माध्यम से लिखा ही नहीं जा सकता, सही अर्थो में वह पर दुख कातर है, दूसरो को सहयोग देना, उसकी सेवा करना उसका स्वभाव है, उसे दूसरों के दुख -दर्द में भाग लेने की और मुसीवत से छुटकारा दिलाने की स्वतः भावना है ।

स्वामी प्रवृज्यानंद जी मंत्र के क्षेत्र में सिद्धहस्त हैं तथा बद्रीनाथ से पन्द्रह किलोमीटर दूर भृकुंडी आश्रम में रहते हैं। इनसे भी नारायण ने बहुत से मंत्र आदि सीखे । स्वामी प्रवृज्यानंद जी के वचनों की वेताल भटट ने कुछ इस प्रकार बताया हैं — मैं इस व्यक्तित्व में बहुत ऊंची साधना पद्धति और ज्ञान के अत्यंत उच्च क्षेत्र को देख रहा हूँ । मैं देख रहा हं कि निकट भविष्य में ही इसको ऐसा गुरु मिलने वाला है जो विश्व में सर्वोपरि है और जिसका शिष्य होना ही अपने आप में गौरव शाली घटना होगी । आने वाला समय इस व्यक्तित्व का है और अपने जीवन में यह ऐसा कार्य करेगा जिससे आने वाली पीढ़ियां इसकी ऋणी रहेंगी ।

वास्तव में आज जब हम उपरोक्त वक्तव्य को मनन करें तो पायेंगे कि स्वामी प्रवृज्यानंद जी ने कितना सटीक वोला था। नारायण ने और भी बहुत से तांत्रिकों आदि के [illegible] रहकर साधना सीखी,उनमें से कुछ उच्चस्तरीय साधु हैं स्वामी मोहनानंद, काश्मीर के शोभना बाबा, फकीर स्वामी, पाताल बाबा, स्वामी गिरजानंद, देहरादून के पागल बाबा, स्वामी दिगम्बरार्चन, अक्षय बाबा, नेपाल के त्रिगुस्वामी, बाल योगी, नेपाल के कामरूप बाबा, गंगोत्री के तीर्थानन्द, मां भुवनेश्वरी, कृपालु स्वामी, भक्त मुरली चैतन्य आदि।

इनके अतिरिक्त भी छोटे - मोटे कई तांत्रिकों से संपर्क हुआ और उन सभी से थोड़ा बहुत सीखने को मिला, पर इन सब में जो विलक्षण, तेजस्वी और सर्वश्रेष्ठ तांत्रिक था, उसका नाम त्रिजटा अघोरी था, इनकी चर्चा होते ही गुरुदेव बोले —

अन्य सबका उल्लेख करना व्यर्थ है । हाँ, त्रिजटा अघोरी का उल्लेख करना जरुर चाहूंगा ।

इनसे मेरी भेंट भी अचानक हो गई थी, कुछ दिनों से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा था, मैं एक गांव में ठहर गया था, और स्थानीय वैद्य से दवा सेवन कर रहा था — मैंने अपना वास्तविक परिचय उन्हें नहीं दिया था ।

स्वास्थ्य संभलने लगा था । प्रातः भ्रमण का मुझे शौक रहा है जो आज तक चल रहा है - मैं स्नान- सन्ध्यादि से निवृत्त होकर गांव के बाहर एक पहाड़ी पर स्थिर मंदिर को देखकर दर्शनार्थ उधर बढ़ गया — दुर्गम एवं फिसलन भरी चढ़ाई थी — मेरा सांस हांफने लग गया था, फिर भी उस मंदिर को देखने का लोभ संवरण न कर सका । मंदिर गांव से तीन-चार मील दूर सर्वथा जनशून्य स्थान पर था ।

ऊपर पहुंचा , तो थककर चूर हो गया था वैद्य ने मुझे ज्यादा चलने के लिये मना किया था,मगर मैं उनकी आज्ञा का उल्लंघन कर बैठा — मुझे चक्कर आने लग गये — और मंदिर तक पहुंचते - पहुंचते मैं बेहोश - सा होकर गिर पड़ा ।

पता नहीं कितनी देर तक मैं बेहोश रहा, पर जब आंख खुली तो सामने खड़े व्यक्ति को देखकर लगभग चीख - सा पड़ा यह सामने खड़ा व्यक्ति था त्रिजटा अघोरी —।

भयंकर —गेंडे- सा काला आबनूसी शरीर — और शरीर पर भी बड़े - बड़े बाल — सिर पर लम्बे बाल, पर उन बालों को तीन भागों में बांटकर औरतों की तरह तीन चोटियां गुथी हुई, ललाट पर सिंदूर का बड़ा - सा तिलक — भयानक मोटी-मोटी रक्तिम आंखें — छोटे-छोटे पर फौलादी हाथ, पूरे शरीर पर मात्र कमर से बंधा कृष्ण मृग- चर्म — भयानक डरावना शरीर — यह था त्रिजटा अघोरी ।

मुझे अपनी स्थिति का भान हुआ ,और पछताया भी, कि इधर आने से पूर्व गांव वालों से जानकारी क्यों न ले ली। पर अब सोचना -विचारना व्यर्थ था, प्रकृति जिधर मुझे ठेल रही थी उधर जाना ही था —

मैंने हृदय में साहस का संचार किया, उठा और मंदिर के प्रांगण में जा खड़ा हुआ — भैरव मन्दिर था — सामने भैरव की विशाल-विकराल मूर्ति थी — मैंने अपना ध्यान त्रिजटा अघोरी की ओर से हटा लिया, तथा अपने- आपको प्रकृति के हवाले कर दिया, पालथी मारकर बैठ गया — होंठ बुदबुदाने लगे —

संसृति कूप मनल्पमघोनि निदाघनिदानमजस्रमशेषं । प्राप्य सुदुःख सहस्र भुजंग विषैक समाकुल सर्वतनोमं ।

घोर महा कृपणापदमेव गतस्य हरे पतितस्य भवाब्धौ । त्वां भजतो मम देहि दयाघन हे मद्भैरु पदाम्बुजदास्यम् ।।

संसृति सिन्धु विशाल कराल महाबल कालभखग्रस नार्तम्। व्यग्र समग्र धियं कृपणं च महामद नक्र सुचक्र हतासुम् ।

काल महारसनोर्मिनि पीड़ित मुद्धार दीनमनन्य गति मां । त्वां भजतो मम देहि दयाघन हे मद् भैरु पदाम्बुज दास्यम् ।।

संसृति चक्रगवक्त्र भयंकर वेश महाविष दग्ध शरीरं । प्राण विनिर्गम भीति समाकुल मन्दमनाथमतीव विषण्णम् ।

मोह महा कुहरे पतितं दयमोद्धार माम जितेन्द्रिय कामं। त्वा भजतो मम देहि दयाघन हे मद्भैरु पदाम्बुजदास्यम् ।

मेरी आंखे बंद थी, स्तुति समाप्त कर आंखें ऊपर उठाई तो देखा पास ही अघोरी खड़ा था,विकराल – लाल नेत्र – क्रोध से अंगारवत् जलता हुआ — बोला – तेरी यह हिम्मत — कि इस अपवित्र चोले से भैरव की स्तुति करे – नारकी कीड़े – म्लेच्छ – ।

मैं यथासंभव क्रोध को सीमित रख रहा था – यह बात नहीं थी, कि मैं डर रहा था, सामान्य डर तो पहली बार देखते समय लगा था – बाद में तो मैं निर्भय था — क्या कर सकता है — यह अघोरी — हो सकता है , इसके पास तांत्रिक विद्या हो, मारक प्रभाव हो –पर मिट्टी का लौंदा तो मैं भी नहीं था – उठ खड़ा हुआ – उसके मुंह से अजस्र गालियां निकल रही थीं – वह मुझे उकसाना चाहता था, क्रोध में लाना चाहता था — तांत्रिक विद्या में प्रतिपक्षी का कोपित होना, चोट करने की भावना होना जरुरी है, अक्रोध पर तंत्र निष्फल हो जाता है, जिन्हें तंत्र-विद्या का जरुरी ज्ञान न हो , और किसी दुष्ट तांत्रिक से पाला पड़ जाये तो उस समय उसका सबसे बड़ा हथियार अक्रोध ही होता है, क्रोध - रहित व्यक्ति पर तांत्रिक प्रयोग निष्फल - से ही होते हैं ।

मैं इससे पूर्व तांत्रिक रहस्यों को जान चुका था, यह मैं पीछे के पृष्ठों में कहीं बता चुका हूं — पर मैं तांत्रिक प्रयोग का सहारा लेकर मंत्र - विद्या को धूमिल नहीं करना चाहता था —। यथासंभव मैं शान्त ही रहना चाहता था, पर जानकार को क्रोध आना नैसर्गिक है, जबकि उस पर अनुचित दबाव पड़ रहा हो – धीरे -धीरे मेरे मन में भी क्रोध का संचरण हो रहा था ।

अजीब परिस्थिति थी, मैं लगभग शान्त - सा खड़ा था, मुझे शान्त देख अकारण ही वह क्रोध से तप्त हो रहा था। उसके होंठ बड़बड़ा रहे थे, अब गालियां निकलनी बंद हो गई थीं, और स्तंभन प्रयोग चालू कर दिया था । इसके माध्यम से सामने वाले व्यक्ति को अपाहिज सा गुलाम कर दिया जाता है । सामने वाला व्यक्ति इसके प्रभाव से न सोच सकता है, और न समझ सकता है, न विरोध कर सकता है, न निरोध ही । मुझे यह स्तम्भन प्रयोग आता था, अघोरी इसका प्रयोग कर रहा था —

धूं धूं धूं धूर्जटे धूर्जटे – खं खं खं खंग क्षोहिणी

त्रं त्रं त्रं त्रास यं त्रास्यं भ्रं भ्रं भ्रं भ्रम्म भोगिणी

त्रं त्रं त्रं —

मैं दो - तीन मिनट - उसकी नीच प्रकृति एवं हरकतों को देखता रहा , फिर इसका विरोध करने का निश्चय किया, एवं शत्रु मुख स्तंभन प्रयोग प्रारंभ किया । शत्रुमुख स्तंभन तंत्र-क्षेत्र में अद्भुत है,इससे सामने वाले का मुंह खुला का खुला रह जाता है, बंद नहीं होता, जब तक कि आप ही पुनः प्रयोग न करे – इस प्रकार होने से वह व्यक्ति न तो मंत्र-जाप कर सकता है , न बोल सकता है और न ही खाना खा सकता है।

इसका प्रयोग यथासंभव अत्यंत ही कम करना चाहिए, जब तक कि प्राणों पर ही आ न जाय –काफी वर्षों बाद इसी तंत्र का प्रयोग मुझे मजबूरी से अहमदाबाद में शक्तिनाथ तांत्रिक के विरोध में करना पड़ा था, जबकि उसने मुझ पर ही मूठ फेंक कर मार देने का उपक्रम रचा था – चौबीस घंटे तक उनकी यही स्थिति रही – लिखकर गलती स्वीकार की – आंखों में आंसू आ गये, तब रघु भाई झवेरी तथा श्रीना भाई के अनुरोध एवं आग्रह पर चौबीस घंटों बाद इस प्रयोग को शान्त किया था – शक्तिनाथ जी ने तो काफी त्रस्त कर रखा था आस - पास की जनता को, अस्तु –जो जस करहि सो तस फल चाखा - यों मैंने पूरे जीवन में इस प्रयोग का सहारा दो बार ही लिया है – मजबूरी में – विवशता में – अन्यथा मैं तांत्रिक प्रयोगों से दूर ही रहना चाहता हूं ।

खैर, प्रयोग समाप्त होते न होते त्रिजटा अघोरी का बड़बड़ाना बंद हो गया, उसकी आंखें आश्चर्य से फैल गई, क्रोध काफूर हो गया, चेहरे पर चिन्ता की लकीरें अवश्य खिंच गई – पर था शक्ति– मान, उसने मानस प्रयोग कर मेरे शत्रुमुख स्तंभन प्रयोग को निष्फल कर दिया, उसने अपना मुंह सामान्य बना लिया – यह था मेरा अघोरी से पहला परिचय — अपने - अपने प्रमाण -पत्रों का आदान - प्रदान —।

उसके चेहरे पर चमक एवं प्रसन्नता थी, उसने मुझे खिलौने की तरह दोनों हाथों से ऊपर उठा लिया और दो-तीन चक्कर काटकर पृथ्वी पर खड़ा कर दिया ।

इसके बाद तो अघोरी से मेरी मित्रता हो गई – घनिष्ठता हुई, मैं उस भैरव-मंदिर में ही लगभग बीस-पच्चीस दिनों तक रहा, वह मेरा पथ- प्रदर्शक बना । सही शब्दों में कहें तो तांत्रिक प्रयोगों में वह मेरा गुरु बना, तांत्रिक दृष्टि से मैं आज भी उसे अपना गुरु मानता हूं– निस्सन्देह वह व्यक्ति अपार शक्ति - सम्पन्न था । मैं उसके साथ लगभग तीन महीने रहा उसने मुझे निश्छल हृदय से तांत्रिक - विद्या

में काफी निष्णात किया। प्रथम पच्चीस दिनों में मैं शायद ही सोया होऊं,निद्रा - स्तंभन से उसने मेरी तथा अपनी नींद उड़ा दी थी – और वे पूरे पच्चीस दिन तांत्रिक साधना में ही व्यतीत हुए ।

त्रिजटा अघोरी ने मुझे वशीकरण तंत्र, मोहन तंत्र, आकर्षण तंत्र, उच्चाटन प्रयोग, कालिका चेटक, फेत्कारिणी चेटक, भैरव चेटक, आपत्ति उद्धारक बटुक तंत्र, शत्रुस्तंभन, गतिस्तंभन, -क्षुधा-स्तंभन, दशवाराही वशीकरण प्रयोग, वार्ताली स्तंभन, इच्छा - प्राप्ति प्रयोग, आकर्षण प्रयोग,विद्वेषण प्रयोग, शांतिकरण प्रयोग, यक्ष चेटक, उच्छिष्ट चांडालिनी चेटक, करालिनी चेटक, कर्णावर्त-श्मशान यक्षिणी चेटक आदि कई प्रयोग अपने सामने कराये, एवं परीक्षा लेकर प्रमाणित किया ।वशीकरण, आकर्षण एवं उच्चाटन पर उसके पास कुबेर का खजाना था और उस खजाने से लुटाने में उसने ना - नुच नहीं की, और न मैंने लेने में संकोच किया ।

उस दिन मैं पहाड़ी की दक्षिणी ढलान की ओर घूमने निकल गया था, घर से निकले हुए काफी दिन हो गये थे, और उस दिन अकस्मात् ही घर की याद आ गई थी, उस चट्टान पर काफी ऊपर चढ़ आया था, अब उठ कर भैरव मन्दिर की ओर बढ़ा, आज त्रिजटा के साथ काम्य चेटक प्रयोग सिद्ध करना था, मैं भैरव मंन्दिर के पास आया तो वहां का दृश्य देखकर दहल गया,त्रिजटा कहीं से मोटा कद्दावर बकरा उठाकर ले आया था, और उसे दोनों हाथों से उठाकर भैरव प्रसाद हेतु जमीन पर दे मारा था, जिससे उसका सिर फट गया था, और गिरते ही उसकी मृत्यु हो गई थी ।

त्रिजटा ने मुझे देखा और ही - ही - करके हंसने लगा, उसके पीले-पीले दांत अत्यन्त कुरूप लग रहे थे - बोला – भैरव प्रसाद है, तू तो ब्राह्मण कुमार है, चखेगा तो नहीं न !

मुझ से वह वीभत्स दृश्य देखा नहीं गया, मैंने कहा - त्रिजटा । मैं आज ही यहां से चला जाऊंगा – इतना वीभत्स - इतनी जुगुप्सा – उफ ! और मेरी आंखें जहां एक ओर घृणा से सिकुड़ आई,वहीं दूसरी ओर उसकी अकाल मृत्यु पर छलक आई ।

त्रिजटा बकरे को घसीटते हुए मेरे पास ले आया यद्यपि उसका सिर फट गया था, पर खून नहीं निकल रहा था, वराही प्रयोग से रक्त स्राव पूर्णतः बन्द कर रखा था, बोला - अच्छा नहीं लग रहा हैं रे – तुझे अच्छा नहीं लगता , तो मैं नहीं करुंगा, पर तू मत जा रे — ।

अभी तक जो मेरी आंखें छलछला रही थी, बरसने लगी, मैं उठा और कोठरी में जाकर अपनी थैली उठा लाया, थैली में मेरी धोती और कुरता था, इसके अलावा मेरे पास और था भी क्या ?

– क्या तू सचमुच जा रहा है रें !

– हाँ त्रिजटा ! इस प्रकार के वातावरण में तो मैं एक मिनट भी सांस नहीं ले पाऊंगा — इस अज ने तेरा क्या बिगाड़ा था, और इसे क्यों मारा ? क्या इसे मारना जरुरी था, और फिर इस प्रकार मारना —

– तो इसे वापिस जीवित कर दूं ?

– यह मेरे लिए सर्वथा अप्रत्याशित बात थी, क्या इस बकरे को पुनर्जीवित किया जा सकता है?क्या इसका फटा सिर इतनी जल्द जुड़ जाएगा? शायद हो भी सकता है , त्रिजटा के साथ असम्भव जैसा शब्द लगाना विचारणीय ही है ।

– क्या यह जीवित हो सकता है ?

- क्यों नहीं हो सकता, काल भैरव के लिए असम्भव क्या है ?

– तो आज त्रिजटा , मैं यही देखना चाहता हूं अगर तू ने ऐसा कर दिया तो यह मेरे लिए सातवां आश्चर्य ही होगा ।

त्रिजटा हो – हो – करके हंस पड़ा, तू ने शेर और बिल्ली की कहानी सुनी है ?

मैने कहा – शेर व बिल्ली की कहानी ?

हाँ! शेर- बिल्ली की कहानी । बिल्ली को शेर की मौसी और गुरु कहा जाता है, शेर के आग्रह पर बिल्ली ने उसे सारी विद्याएं सिखा दीं और पारंगत कर दिया ।

एक दिन शेर ने सोचा, बिल्ली मौसी ने शिकार की सारी क्रियाएं तो सिखा ही दी हैं और फिर मैं इससे बलिष्ठ तो हूँ ही, क्यों न आज बिल्ली पर ही झपट्टा मारा जाए और शिकार का आहार बनाया जाए ।

ऐसा सोच कर शेर ने ज्योंही बिल्ली पर झपट्टा मारा की बिल्ली उचक कर पेड़ पर चढ़ गई, शेर विवश सा ताकता ही रह गया।

शेर ने पूछा - मौसी ! यह तो तू ने मुझे सिखाया ही नहीं, पेड़ पर चढ़ने की विद्या मुझे कब सिखाई ?

बिल्ली मुस्कराई , बोली — अगर यह सिखा देती तो फिर आज मैं तेरे पंजे से कैसे बचती और कह कर त्रिजटा हो, हो - हो- करके बेसाख्ता हंस पड़ा ।

मैं भी हंस पड़ा, बोला — मौसी! तभी तू ने मुझसे इसकी चर्चा नहीं की ।

— अरे नहीं रे । मैं तो हंसी कर रहा था,यह संजीवनी तंत्र कहलाता है जो कि 'काम्य प्रयोग' के बाद ही सीखा जा सकता है 'काम्य प्रयोग' तू ने अभी-अभी सीखा ही है अतः यह तंत्र तो अब सिखाने वाला था, पर तू तो जाने की तैयारी कर रहा है ।

मैने मन में सोचा त्रिजटा कितना चतुर है, मुझे रोकने के लिए कैसी चाल चली है, पर कितना सरल और निष्कपट है, यह ! मैंने तुरन्त एक ओर थैली फैंकी और उससे जाकर लिपट गया - मैंने देखा उसकी आँखों से प्रेम के आंसू छलछला पड़े थे ।

त्रिजटा कोठरी में गया और जमीन को थोड़ी सी खोदकर एक हंडिया उठा लाया जिसमे गाढ़ा -गाढ़ा कुछ लेप सा था, उसने अंगुली से वह लेप बकरे के फटे सिर के अन्दर भर दिया और फटे सिर को हथेली से दबाकर जोड़ दिया।

शायद उसने चार या पांच मिनट इस प्रकार से सिर को दबाये रखा और आश्चर्य की बात यह थी कि वह फटा सिर इस प्रकार से जुड़ गया था कि जैसे कभी फटा ही न हो आग्रह करने पर उसने उस लेप को तैयार करने की विधि भी बता दी। सामान्य जीवन में किसी तेज धार से लम्बासा घाव बन जाए और उसमें यह तैयार लेप भर दें, तो यह घाव इस प्रकार से मिल जाता है कि बाद में पता ही नहीं होता है कि यहां पर घाव था भी ।

इससे भी आश्चर्य की बात यह थी कि मेरे सामने ही बकरे को लिटाकर संजीवनी तंत्र कर दिया, उसका प्रयोग लगभग आधे घंटे तक चला, पहले बकरे में हल्का सा स्पंदन हुआ, फिर हिला डुला और अगले दस मिनटों में तो वह झुरझुरी लेकर उठ खड़ा हुआ ।

आज का सामान्य व्यक्ति इस प्रकार के तंत्रों पर विश्वास न करे, पर जो घटना मेरी आंखों के सामने घटित हो चुकी है उसे मैं कैसे झुठला सकता हूँ - बाद के दिनों में उसने यह तंत्र भी बिना हिचकिचाहट के सिखला दिया, सिखला उसने जरुर दिया पर इसे सिद्ध करना अत्यन्त दुष्कर और कठिन है , अस्तु ।

आखिर वह दिन भी आ गया, जब मुझे वहां से विदा होना था, घर छोड़ने के बाद मुझे जितना स्नेह और आत्मीयता इस त्रिजटा से मिली थी उतनी किसी से नहीं लोगों के सामने उसका रूप विकराल , भयावना और डरावना था, जबकि मेरे सामने उसका व्यवहार बच्चे की तरह था, तंत्र का इतना प्रचंड विद्वान होते हुए भी शिशुवत था, बच्चों की तरह वह मचल पड़ता और मनाने पर बच्चे की तरह ही किलक पड़ता।

यद्यपि उस पहाड़ी से, उस भैरव मन्दिर से, उस त्रिजटा से बिछुड़ने को जी नहीं चाह रहा था पर यह मेरा लक्ष्य नहीं था, यह तो मंजिल के मार्ग में पड़ने वाला एक पड़ाव मात्र था। तंत्र मेरे जीवन की सिद्धि नहीं थी, मैंने तंत्र का उच्चतर ज्ञान जरुर अर्जित किया था, पर यह निश्चय कर चुका था कि इसका प्रयोग नहीं के बराबर करुंगा, एक प्रकार से करुंगा ही नहीं मेरी आस्था मंत्र साधना में थी और वही मेरे जीवन का ध्येय था।

जिस दिन त्रिजटा ने कहा 'नारायण' ! अब मैं सुख से मर सकूंगा कि मुझे कोई तो पात्र मिला जिसमें इस प्रकार की कठोर क्रियाएं सीखने की हिम्मत थी और मुझे कितनी - खुशी है कि तुम कसौटी पर खरे उतरे, कितनी कठिनाई झेली हैं इन तीन महीनों में, पर तुमने मुझे सन्तोष दिया -और उसने मुझे अपने बचपन से लेकर उस दिन तक का पूरा इतिहास सुना दिया । उसकी कहानी सुनकर तो उस पर हजार गुनी श्रद्धा और लाख गुना प्रेम बढ़ गया ।

आखिर वह दिन आ गया जिस दिन त्रिजटा से मुझे विदा लेनी थी, अनमने मन से वह मेरे साथ हुआ और पहाड़ी से नीचे उतर कर रास्ते पर साथ- साथ चलता रहा लगभग दो-तीन मील चलने पर जब मैने वापिस जाने का आग्रह और हठ किया तो वह फफक पड़ा, उसकी आंखें बरसने लगी, चेहरा आँसुओं से भर आया और गला रुंध गया - मेरे हाथों में रतिरांज गुटका ठूंसते हुए बोला — नारायण ! तू ने मुझे क्या नहीं दिया - मैं तो पत्थर था रे — तू ने मुझे याद दिला दिया कि मैं भी इन्सान हूँ, तू मेरा भाई है, दोस्त है - सलाहकार है और बाप है - तुझ से बिछुड़ कर मैं शायद अब ज्यादा जिन्दा नही रह सकूंगा और मुझसे चिपक कर वह फफक पड़ा ।

उफ् ! बिदाई की बेला भी कितनी दुःखद होती है और कर्तव्य भी कितना क्रूर और कठोर -वह एकदम से पलटकर पहाड़ी की ओर बढ़ गया ।

निस्सन्देह त्रिजटा अघोरी शिशुवत् सरल हृदय था — बादाम की तरह, जो ऊपर से कठोर था,परन्तु अन्दर सुस्वादु मधुर फलदायक—

वे आज भी जीवित है — श्मय प्रयोग से कई बार वार्तालाप हुआ है, पर वापस उधर जाने का न तो अवसर मिल सका है — और न समय ही — त्रिजटा अघोरी के प्रति काफी कोमल भावनाएं मेरे हृदय में हैं। उसका आग्रह सिखाने का क्रम मेरे जीवन की निधि है ।

मैं जाने लगा, तो मुझे रोकने के लिए उसने काफी प्रयत्न किये, तांत्रिक नहीं । आग्रह —अनुरोध — पर यह मेरा लक्ष्य नहीं था — यह तो मात्र पड़ाव था, तंत्र-विद्या में मेरी रुचि नहीं थी, पर विद्या प्राप्त हो जाय, तो मैं छोड़ना उचित नहीं समझता था —

विदा होते समय उसने जो रतिराज गुटका निकाल कर दिया। इस गुटके (यंत्र)की शक्ति न तो इन पृष्ठों में लिखी जा सकती है, और न लिखना उचित ही समझता हूं — बिरले तांत्रिकों को ही यह गुटका सुलभ होता है, और जो, तांत्रिक विद्या में निष्णात हैं वे ही इस गुटके का महत्व एवं शक्ति जान सकते हैं ।

त्रिजटा अघोरी से बिछुड़ने के बाद मेरा काफी समय तांत्रिक प्रक्रियाओं में ही बीतने लगा, किसी संपेरे की पुंगी (बीन) बंद कर देना, मनुष्य को सम्मोहित कर उससे इच्छित कार्य करवाना,सर्प सम्मोहित कर गले में लटका देना, पत्थर से मिठाई बना देना, आदि ऐसे कई लटके - झटके करता रहता । इन्हीं दिनों सीताराम स्वामी से भेंट हुई, और एक ही झटके में मेरी विचार - प्रक्रिया ही बदल गई ।

सीताराम स्वामी परम वैष्णव थे - दुढ़ियारी ग्राम के राम मंदिर के प्रधान पुजारी । दुढ़ियारी गांव काफी बड़ा है और यहां का श्रीराम मंदिर दूर-दूर तक प्रसिद्ध है । मंदिर में श्रीराम की विशाल एवं भव्य प्रतिमा है, सीताराम स्वामी इसी मंदिर के प्रधान पुजारी थे ।

मैं घूमते -घामते दुढ़ियारी ग्राम जा पहुंचा था और मंदिर में ही एक तरफ ठहर गया था। मंदिर के एक ओर अतिथि - कुटिया है, इसी कुटिया में मेरे ठहरने की व्यवस्था की गई ।

तीसरे या चौथे रोज जब शाम को श्रीराम की आरती समाप्त हुई, तथा सीताराम जी बाहर जाने लगे तो मैं उनके साथ हो लिया । मार्ग में मैंने अपना परिचय, प्रयोजन एवं कार्य - क्षमता का विवरण दिया । तब तक उनका घर आ गया, और मैं उनके घर के आंगन में बिछायें गये आसन पर बैठे गया था।

तांत्रिक -प्रक्रिया की बात चलने पर मैंने दो - चार क्रियाएं करके दिखाई । इन क्रियाओं में एक क्रिया स्वामीजी के पूर्ण घर को सम्मोहित कर देना था । स्वामीजी के सामने ही मैंने उनकी पत्नी, पुत्र एवं उनके भाई को सम्मोहित करके दिखाया, तथा उन्हें जो आदेश दिये वे उन्हीं आदेशों का पालन करने लगे। स्वामीजी देखते रहे, उनके चेहरे पर किसी भी प्रकार की कोई प्रतिक्रिया नहीं थीं ।

सम्मोहन तोड़ने पर स्वामीजी उठ खड़े हुए, बोले — चलो जरा बाहर घूम आयें । मैं उनके साथ हो लिया ।

गांव के बाहर आने पर मैदान में वे एक स्थान पर बैठ गये, बोले — तुमने अपने भविष्य के बारे में क्या सोचा है ?

मैने कोई उत्तर नहीं दिया, तो बोले --इन तांत्रिक प्रक्रियाओं में समय बिताना जीवन की बरबादी है। तुम्हारा जीवन इन छोटी-मोटी सिद्धियों के लिये नहीं है, तुम्हें ज्योतिष की ओर पूरा ध्यान लगाना चाहिए । इसके बाद घंटे - डेढ़ घंटे तक बातें होती रही - बातचीत का सार यह निकला कि वे इन तांत्रिक विद्याओं को सीखना चाहते थे, और इसके बदले में वे मुझे ज्योतिष और आयुर्वेद सिखाना चाहते थे ।

स्वामीजी चिकित्सा - क्षेत्र में अद्वितीय थे, यह मुझे बाद में पता चला । रत्न - औषधि के क्षेत्र में निस्संदेह वे अद्वितीय थे, ऐसा कहने में मुझे कोई संकोच नहीं।

स्वामीजी के चिकित्सा करने का कार्य अद्भुत था । वे रोगी का हाथ या जन्म - पत्रिका देखकर ग्रहानुसार एवं दशानुसार चिकित्सा करते, और उनके बारे में यह मशहूर था कि जो रोगी स्वामी, जी के आंगन तक पहुंच गया, वह मर नहीं सकता। असाध्य - से - असाध्य रोगों को भी वे एक - डेढ़ महीने में ठीक कर देते थे । वे एक विशेष प्रक्रिया से सूर्य गोलियां, चंद्र गोलियां,मंगल गोलियां आदि नौ ग्रहों की गोलियां बनाते - यही नहीं वे दो प्रक्रियाओं को मिलाकर शनि-राहूगोलियां, या मंगल-गुरु गोलियां आदि नौ ग्रहों की गोलियां बनाते - इसी प्रकार तीन ग्रहों की संयुक्त गोलियां, पांच ग्रहों की संयुक्त गोलियां भी बनाते । इन गोलियों के प्रभाव का मुख्य हेतु है उन का अनुपात। अनुपात - भेद से प्रभाव में भी भेद हो जाता है ।

ग्रहों से संबंधित जो गोलियां बनाई जाती है, उसका भेद मैं पाठकों से छिपाना नहीं चाहता ।ग्रहों से संबंधित गोलियां निम्न प्रकार से बनाई जाती है —

जिस ग्रह से संबंधित गोलियां बनानी हों, उस ग्रह से संबंधित रत्न लो । यथा, सूर्य के लिए माणिक्य, चन्द्र के लिए मुक्तक आदि। रत्न लगभग तीन से सात रत्ती का हो, साफ हो,प्रामाणिक हो, उज्ज्वल तथा ज्योतिष की दृष्टि से वह रत्न निर्दोष हो ।

इसके बाद एक शीशी, शुद्ध अल्कोहल से धो लो, तथा उसमें दो ग्राम शुद्ध अल्कोहल ले लो और उसमें वह रत्न डाल दो, ऊपर कार्क लगा दो । कार्क इतना फिट होना चाहिए, कि उस शीशी में न हवा का प्रवेश हो, न रोशनी का इसके बाद एक निश्चित अवधि तक (प्रत्येक ग्रह के लिए अलग-अलग दिन निर्धारित हैं) उस रत्न को उस शीशी में रखें, फिर उस अवधि के बाद उसमें से वह रत्न निकाल लें,

तथा उसमें दुग्ध- मिश्रित शर्करा की गोलियां (जो पहले से बनी हुई तैयार हों) डाल दें, गोलियां इतनी डाली जाये जिससे कि वह पूरा अल्कोहल चूस ले । उन गोलियों को बाद में उस शीसी में से निकालकर एक साफ कागज पर सुखा दें । ये गोलियां छाया में ही सूखनी चाहिए ।जब ये गोलियां पूरी तरह से सूख जाय, तब उन्हें एक दूसरी साफ शीशी में भर दें तथा उस पर सूर्य गोलियां या जिस ग्रह की गोलियां हो, उसका लेबल लगा दें । इस प्रकार से ये गोलिया तैयार होती है ।

कई बार दो रत्नों को, तीन रत्नों को तथा सात रत्नों को मिलाकर भी गोलियां बनाई जाती है--जहां तक मेरा अनुभव है, ये गोलियां रामबाण होती है ।

उदाहरणार्थ हार्ट - अटैक के मरीज के लिए या दिल की बीमारी के मरीज के लिए चन्द्र गोलियां रामबाण का - सा असर करती हैं । इसी प्रकार स्नायु - रोग के लिए सूर्य गोलियां अद्भुत लाभदायक हैं -- देश के एक श्रेष्ठ डॉक्टर को मैंने इस प्रकार की गोलियां अपने रोगियों पर प्रयोग करने हेतु दी थीं, और उसका अद्भुत प्रभाव देखकर उसने कहा था -- आप यदि इनका पेटेण्ट मुझे दे दें, तो मैं करोड़ पती होकर दिखा सकता हूँ तथा विश्वव्यापी कीर्ति प्राप्त कर सकता हूं ।

गुर्दा, कैंसर, कुष्ठ, संज्ञाहीनता, दमा, निंद्राहीनता, मस्तिष्क रोग, पोलियो, क्षय, मधुमेह, लकवा,स्नायुरोग तथा हर्नियां की चिकित्सा में जो मुझे यश मिला है, तथा विशेषतः इन लिखी हुई बीमारियों को पूर्णतः स्वस्थ करने में मुझे जो सफलता एवं देशव्यापी सम्मान तथा यश मिला है,इसके मूल में ये ही गोलियां हैं। किस रोग या रोग की किस स्थिति में किन - किन रत्न-सम्मिश्रण की गोलियां देनी हैं, सफलता के मूल में यही तथ्य है, और इस सफलता का पूर्ण श्रेय श्री सीतारामजी स्वामी को है, जिन्होंने मुझे पुत्रवत् समझकर यह ज्ञान दिया, और इस ज्ञान में किसी भी प्रकार का कोई लुकाव-छिपाव नहीं रखा ।

सीतारामजी स्वार्थी व्यक्ति थे । उनका सिद्धांत था, ज्ञान या विद्या का आदान-प्रदान तीन तरीकों से ही संभव है --

ज्ञान का ज्ञान से आदान-प्रदान ,

ज्ञान का रुपयों से आदान-प्रदान

ज्ञान का सेवा से आदान-प्रदान ।

मुझे भी उन्होंने चिकित्सा का ज्ञान तब दिया, जब उन्होंने मुझ से तांत्रिक विद्याएं सीखी,और सीखीं ही नहीं, प्रयोग करके देखीं। जब उनको यह विश्वास हो गया, कि उन्होंने जो ज्ञान सीखा है, वह प्रामाणिक है, तभी उन्होंने मुझे चिकित्सा - ज्ञान सिखाना प्रारंभ किया।

वे तांत्रिक क्षेत्र में सम्मोहन -विद्या के तीनों स्तर सीखना चाहते थे । कठोर - से कठोर पाषाण-हृदय पुरुष को भी पशुवत् सम्मोहित करना उनका अभीष्ट था, और इसके लिए उन्होंने मुझे गुरु भी बनाया, बताये हुए मार्ग के अनुसार कठोर साधना भी की, तथा अपने अभीष्ट लक्ष्य में सफल भी हुए ।

एक दिन मजेदार घटना घटी, जब वे सम्मोहन -तंत्र सीख रहे थे। उसकी प्रारंभिक स्टेज में ही थे,तथा सम्मोहित करना तो सीख गये थे, पर सम्मोहन तोड़ने का ज्ञान नहीं आया था । उनके घर उनकी साली (पत्नी की बहन) आई, जिसकी हाल ही में शादी हुई थी, आयु लगभग सत्रह अठारह बरस की रही होगी ।

उन्होंने अपने प्रयोग की परीक्षा साली पर करनी चाही तथा प्रातः ही उसके नाम से सम्मोहन तंत्र कर दिया। साली सम्मोहित हो गई और घर में अपनी बड़ी बहन के होते हुए भी सीताराम जी के इर्द-गिर्द घूमने लगी । एक बार तो उसने स्वामीजी का हाथ ही पकड़ लिया। मैं उस दिन गांव के बाहर किसी कार्य से गया हुआ था। स्वामीजी की पत्नी ने यह देख लिया और उसने स्वामीजी को एक तरफ ले जाकर काफी बुरा - भला कहा, अपनी बहन को भी कहा, पर उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, वह अपनी हरकतें ज्यों की त्यों करती रही।

स्वामीजी रुआँसा से होकर घर से चले गये । दो-तीन मिनट के बाद सम्मोहन से बंधी साली -जिसका नाम मोहिनी था - भी घर में सीतारामजी को न देख बाहर निकल पड़ी, उनके पीछे पीछे ।

सीतारामजी मंदिर पहुंचे, मोहिनी भी पीछे - पीछे मंदिर पहुंच गई । मोहिनी को वहां आई देख स्वामीजी घबरा गये और मोहिनी को तुरन्त वापस घर चले जाने को कहा, पर मोहिनी पर उसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा । स्वामीजी मंदिर के पीछे बने अपने तपोवन (कुटिया का नाम) में चले गये, मोहिनी वहां जा पहुंची। अब तो स्वामीजी वस्तुतः घबरा गये, कि लोगों ने देख लिया तो क्या होगा?

वे वहां से सीधे अपने घर में जाकर बैठ गये । मोहिनी भी घर वापस चली गई । स्वामीजी ने ऊपर अपने कमरे में घुसकर दरवाजा बंद कर दिया। शाम तक मोहिनी लगभग पचास बार चुपके से बंद दरवाजा खटखटा आई थी, पर स्वामीजी ने दरवाजा नहीं खोला । पत्नी घबरा गई, कि कहीं अन्दर आत्महत्या न कर लें । उसने भी बाहर से दरवाजा खोलने का काफी अनुरोध किया पर स्वामीजी ने एक ही बात कही, कि जब तक नारायण वापस नहीं लौटेंगे, दरवाजा नहीं खोलूंगा ।

शाम को सात बजे के लगभग मैं घर पहुंचा, तब तक पत्नी का रो-रोकर बुरा हाल था । स्वामीजी अन्दर घुसे बैठे थे, उधर मोहिनी ने भोजन नहीं किया था। बड़ा पुत्र भारत भी पिता के व्यवहार से क्षुब्ध एवं आश्चर्य चकित था।

जब मैं घर पहुंचा , तो सीतारामजी की पत्नी ने स्वामीजी के प्रति आशंका प्रकट की, कि वे आत्महत्या करने पर तुले बैठे हैं और कह रहे हैं कि जब तक नारायण दत्त नही आयेगा, तब तक दरवाजा नहीं खोलूंगा । सुबह से कमरे में बंद हैं, भोजन भी नहीं किया है।

मुझे इस सब की कोई जानकारी नहीं थी। मैं ज्योंही पहुंचा, तब मोहिनी दरवाजा खटखटाकर निराश हो सीढ़ियों से नीचे उतर रही थी। मैंने स्वामीजी को आवाज दी । आवाज सुनकर बाहर आये, और तुरन्त मुझे अन्दर ले गये, और दरवाजा बन्द कर लिया, बोले, सुबह से भूखा हूँ, सो तो हूँ ही, पर मेरी तो इज्जत मिट्टी में मिल रही है, और उन्होंने मोहिनी पर जो प्रयोग किया था, वह सब कह सुनाया। मुझे उस गंभीर वातावरण में भी हंसी आ गई । मैंने कहा सम्मोहन - मंत्र तो आप सीख चुके , पर सम्मोहन - उच्चाटन आपने अभी तक कहां सीखा ।अधूरा ज्ञान इसी प्रकार कष्ट देता है।

मैंने उच्चाटन किया, और इस प्रकार सम्मोहन समाप्त हुआ, सम्मोहन समाप्त होते ही मोहिनी निर्मल अवस्था को प्राप्त हुई, और जब उसने यह सब सुना, तो लाज से गड़ गई, और दूसरे ही दिन रवाना हो गई । स्वामीजी की पत्नी को जब इस सत्य घटना का पता चला, तब उसका सन्देह - युक्त चित्त निर्मल हुआ, और घर का वातावरण सामान्य हुआ । इसके बाद तो अधूरे ज्ञान के प्रयोग परीक्षण की स्वामीजी ने कसम - सी खा ली ।

चिकित्सा के क्षेत्र में उनको अलौकिक ज्ञान था, और नाड़ी-विज्ञान में वे निष्णात थे । नाड़ी देख कर वे रोग की सही - सही स्थिति बता देते थे । नाड़ी - विज्ञान पर उन्होंने एक पुस्तक लिखी थी, जो अपने-आप में अद्भुत है । करीब के आठ सौ पृष्ठों पर उन्होंने इसके बारे में सूक्ष्मतम जानकारी ,प्रयोग एवं अनुभव लिखे हैं और मैं यह कहूं तो कोई अतिश्योक्ति नहीं है, कि इस युग का नाड़ी विज्ञान पर लिखा यह ग्रंथ पूरे विश्व में अद्भुत है और संसार में इसकी टक्कर का कोई दूसरा ग्रंथ नहीं होगा । मेरे अनुरोध पर उन्होंने करीब के आठ सौ पृष्ठ मुझे दे दिये, इस शर्त पर कि उन्हें प्रकाशित नहीं करवाऊंगा। बाद में मेरी प्रार्थना पर उन्होंने यह कह दिया, कि मेरे जीते जी इसे प्रकाशित न करावें, पर जब भी स्वामीजी ब्रह्मलीन हो जायं इसके एक वर्ष बाद इस ग्रंथ का प्रकाशन करा दिया जाए । पता नहीं इसके पीछे उनका क्या उद्देश्य था – अस्तु ।

मैं स्वामीजी के घर तीन महीने से कुछ ज्यादा ही रहा । इस अवधि में उन्होंने मुझ से पूर्ण तांत्रिक क्रियाएं सीखीं, और मुझे चिकित्सा-ज्ञान दिया । असाध्य से असाध्य रोगों पर उनकी चिकित्सा सोलहों आने सही थीं। पिछले दो-तीन वर्षों में मुझे असाध्य रोग की सफलता पर जो भारत -व्यापी यश मिला, उसके मूल में इन स्वामीजी का ही नुसखा था - इस प्रकार के सैकड़ों नुसखे उन्होंने मुझे सिखाये - अपने सामने प्रयोग किये । नाड़ी - ज्ञान दिया, नौली क्रिया सिखाई तथा जड़ी - बूटियों से परिचित कराया । – वस्तुतः स्वामीजी युग धन्वन्तरी थे, जिनका लाभ सही रूप में संसार नहीं ले सका, और वे स्वयं प्रच्छन्न ही रहना चाहते थे - पर उनकी कीर्ति का प्रमाण नाड़ी विज्ञान हस्त लिखित ग्रंथ मेरे पास है, और समय मिलने पर संपादित कर उनके नाम से ही प्रकाशित कराऊंगा, यही उनके प्रति मेरी सच्ची श्रद्धांजली होगी ।

एक दिन उसी गांव में घूमते -घामते आए बाबा हरिओम से साक्षात्कार हुआ, परिचय बढ़ा और आगे की यात्रा के लिए मैं उनके साथ हो लिया ।

हरिओम बाबा मानसरोवर जा रहे थे। मेरी भी कई दिनों से साध थी , मानसरोवर जाकर कैलाश पर्वत के दर्शन करने की, शिव-स्थल में विचरण करने की। किसी का सहयोग चाहता था,और जब हरिओम बाबा से सुना कि वे मानसरोवर जा रहे हैं तो मुझे मनोवांछित स्वप्न साकार होता प्रतीत हुआ, और मैं उनके साथ हो लिया ।

यहां मैं बाबा का संक्षिप्त परिचय दे दूं । बाबा सही अर्थों में औघड़दानी थे, पूरे मस्तमौला, फक्कड़, प्रसन्न हो जाय तो अपना सब - कुछ लुटा दें, पहनने के कपड़े भी और अगर नाराज हो जाय तो सामने वाले को चीर कर रख दें। कोई दया - ममता नहीं, कब उनका मूड बदल जायेगा कुछ पता नहीं। उनके सत्संग से कई छोटी-मोटी चोटों के निशान मेरे शरीर पर उनकी यादगार के रूप में सुरक्षित हैं, और प्रसन्नता के क्षणों में उन्होंने जो कुछ मुझे दिया है उसके सामने त्रैलोक्य की सम्पदा भी तुच्छ है, नगण्य है ।

बाबा ब्राह्मण शरीर थे । उत्तर प्रदेश के काशी के आस पास किसी गांव में उनका जन्म हुआ था,ऐसा उन्होंने मुझे एक बार बताया था। जब वे तेरह - चौदह साल के थे, तभी घर से निकल पड़े थे, और आज तक वापस घर नहीं लौटे थे । हिमालय उनका घर बन गया था । हिमालय का चप्पा-चप्पा उनके ध्यान में था । हजारों साधु-सन्तों से व्यक्तिगत परिचय था, साधना के उच्च सौपान पर चल रहे थे ।

अपने जीवन में उन्होंने दस हजार शिवलिंग स्थापित करने का व्रत लिया था । वे जब भी हिमालय से नीचे उतरते, देश के कोने-कोने में घूमते, चंदा कर शिवलिंग स्थापित कर (हो सके तो छोटा सा मंदिर बनवा कर) वापस हिमालय की ओर बढ़ जाते । शिव के परम भक्त

वे, जब धुन में होते तो मधुर कंठ से संस्वर रावण - कृत शिव- तांडव स्तोत्र इतनी मधुरता से गाते, कि सारा वातावरण शिवमय हो जाता । स्तोत्र बढ़ता रहता, वे गाते रहते, उनके गाने में लोच थी ।दयालु शंकर ने उनके स्वर में गजब की मिठास भर दी थी ।

जटा कटा हंसभ्रम भ्रमन्निलिम्प निर्झरी, विलोल वीचि वल्लरी विराजमान मूर्धनि ।

धगद्धगद्ध उज्वल ल्ललाट पट्ट पावके, किशोर चन्द्र शेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम ।।

धरा धरेन्द्र नंदिनी विलास बंधु-बंधुर, स्फुरद्दिगंत संतति प्रमोदमान मानसे ।

कृपा कटाक्ष धोरणी निरुद्ध दुर्धरापदि, क्वचिच्चिदंबरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ।।

एक दिन मैंने पूछा, बाबा ! आपने कभी शिव के दर्शन किये हैं ?

बोले -- कई बार, क्या तुम करना चाहते हो ?

— हाँ बाबा ।

— अच्छा, कल कराऊंगा ।

दूसरे दिन मैं स्नान कर उनके सामने बैठ गया । वे स्वयं भद्रासन स्थिति में थे, बोले — ध्यान करो, मैं तुम्हें अपने साथ ले चलता हूँ ।

दूसरे ही क्षण ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे किसी ने मेरे प्राणों को शरीर में से खींच लिया हो, और प्राण सवेग उड़े जा रहे हों । बाबा मुझे बराबर साथ अनुभव हो रहे थे, और दूसरे ही क्षण क्या देखता हूँ कि सामने ही कैलाश है, उत्तुंग श्रृंग हिमाच्छादित — सामने शिव बैठे हैं समाधिस्थ —तन्मय ; एक लय में एक पैर पर खड़ा हो गया । उस एक क्षण का वर्णन करना इस लेखनी के वश की बात नहीं —

असित गिरि समं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे, सुरतरुवर शाखा लेखिनी पत्रमुर्वी ।

लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं, तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ।।

दूसरे ही क्षण ऐसा लगा, जैसे कोई पीछे खींच रहा हो । प्राण पुनः शरीरस्थ थे । कंधे पर बाबा का हाथ था, और पूछ रहे थे - कुछ देखा ?

मैंने घड़ी देखी , इस सारे व्यापार में तीन से चार मिनट लगे थे। मैं एक अनिवर्चनीय आनन्द से पुलकित हो रहा था, बोला – हाँ बाबा ।

मैंने उठकर बाबा की परिक्रमा की; और उनके सामने हाथ जोड़कर बैठ गया । पूछा बाबा! क्या कोई ऐसी साधना है, जिससे जब चाहूं ऊर्ध्वलोक की यात्रा कर सकूं ?

— हाँ , है ।

—- क्या मुझे आप यह शिक्षा देंगे?

--- सिखा दूंगा – सब कुछ बता दूंगा - निश्चित रह ! बाबा का आशीर्वाद पाकर मैं कृतकृत्य होगया ।

यह बाबा की ही मान्यता थी कि यदि दुनिया में सुख पूर्वक रहना चाहो तो विरोधी स्थितियों में रहो । अगर तुममें कुछ सिद्धि है, तो भूलकर भी उसका प्रदर्शन मत करो, अत्यन्त साधारण स्थिति में रहो । यदि किसी विषय के ज्ञाता हो, तो उस विषय में अज्ञानी बने रहो, और यदि दुनिया में जीवित रहना है, तो साधारण – अत्यन्त साधारण बनकर रहो, जिससे तुम्हारी वास्तविकता खुल न जाय । मैंने बाबा की यह बात गांठ बांध ली । वास्तव में बाबा के कथन में उनके जीवन का सही अर्थो में अनुभव था ।

और इस कथन की सत्यता का प्रमाण भी एक वर्ष पहले मिल गया । मैंने एक नई पद्धति तैयार की थी त्रैलोक्य दीपक । काफी परिश्रम किया था इसपर । इस पद्धति के माध्यम से किसी भी स्थान का किसी भी समय का, किसी भी वस्तु का भाव ज्ञात किया जा सकता है । उदाहरणार्थ बारह दिसम्बर उन्नीस सौ चौहत्तर को दिन के तीन बजे जोधपुर में तिल्ली के तेल का क्या भाव होगा,यह आसानी से ज्ञात किया जा सकता है । इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु का किसी भी दिन का भावज्ञात किया जा सकता है । व्यापारियों के लिए तो दो पैसे की घटा-बढ़ी भी लाखों के वारे - न्यारे करने वाली होती है । मैंने इस पद्धति को त्रैलोक्य दीपक यंत्र से सौ बार परीक्षण किया, और सौ बार ही शत-प्रतिशत सही फल निकला । एक पैसे का भी अन्तर नहीं रहा ।

मेरे सचिव ने इसका प्रचार कर दिया । लोगों को ज्ञात हुआ तो दो-चार व्यापारी आये, उन्हें भाव बताये, और वे पूर्णतः सही रहे। उन्होंने अन्य लोगों से कहा, और इस प्रकार एक सप्ताह में पूरे शहर में, विशेष कर व्यापारी - वर्ग में इसकी चर्चा थी ।

भीड़ बढ़ने लगी -- मैं यथासंभव भीड़ से बचना चाहता हूँ, पर स्वार्थ बुरा होता है । व्यापारी - वर्ग प्रातः चार बजे से रात बारह बजे तक अतिथि - कक्ष में आते रहते , बैठे रहते। मेरी पूजा में भी व्यवधान पड़ने लगा, आराम करना कठिन हो गया, और एकान्त के क्षण मिलने मुश्किल हो गये ।

अब तो स्थिति यह हो गई कि रात के दो बज रहे है, और स्वार्थी व्यापारी अगले दिन प्रातः खुलने वाले तथा बंद होने वाले भावों की जानकारी के लिए द्वार खटखटा रहे हैं । मेरा सोना हराम हो गया - बाबा का कथन स्मरण हो आया कि यदि दुनिया में सुख से जीवित रहना है तो साधारण बन कर रहो - वास्तविकता पर परदा डाले रहो - और दूसरे दिन से मैंने इस प्रक्रिया से अपना हाथ खींच लिया, कहा - अब मुझे समय कम मिलता है, मैं भाव निकालने में समय नहीं दे सकता । काफी परिचित नाराज हो गये ।तीन -चार महीने बाद इससे पिंड छूट सका -- अस्तु ।

बाबा कहा करते थे, कि हिमालय का कुछ भाग छोड़कर बाकी का सारा भू-भाग दूषित है। सुई के बराबर भी भाग ऐसा नहीं है कि जहां बैठ कर साधना की जा सके, क्योंकि हजारों-लाखों वर्षोमें प्रत्येक स्थान पर प्राणी - मनुष्य - पशु-पक्षी - कीटादि मरते रहे हैं दफन होते रहे हैं । पृथ्वी दूषित होती रही है - अतः ऐसा कोई भाग नहीं बचा, जो निर्दोष हो पवित्र हो - साधना -स्थली हो । उदाहरणार्थ जहां हम -आप खड़े है, उसके नीचे हजारों लाखों वर्षों में न मालूम कितने ही प्राणी दफन हुए होंगे, अतः बाबा पृथ्वी पर नहीं, पृथ्वी से एक गज ऊपर अधर में स्थित हो कर साधना करते थे । मैंने पहले - पहल जब उन्हें शून्य सिद्ध साधना कर शरीर को वायु से हल्का कर अधर में आसन लगा कर ध्यानस्थ होते देखा, तो आश्चर्यचकित रह गया था । वे डेढ़ दो घटे तक शून्य सिद्ध रहे, और फिर धीरे-धीरे पृथ्वी पर उतरे ।

जब वे ध्यान -मुद्रा से निवृत्त होकर चैतन्य हुए तो मुझे देख कर बोले -- क्यों । बावला - सा क्या देख रहा है ?

मैं प्रणिपात होकर बोला -- बाबा ! यह कौन सी साधना है, जिससे शरीर इच्छानुकूल वायु से हल्का किया जा सकता है, तथा अधर में स्थित होना संभव होता है ।

बाबा मूड में थे, बोले -- शून्य सिद्ध साधना द्वारा ।

क्या मैं इस साधना का अधिकारी हूँ, बाबा ।

क्यों नहीं, अभ्यास से सब-कुछ संभव है ।

-- यह शून्य सिद्ध साधना क्या है बाबा ।

-- हमारे शरीर में या यों कहें कि हमारा शरीर पांच तत्वों से मिलकर बना है । इसमें एक तत्व वायु है और चार तत्व अन्य हैं, और पहले इन चार तत्वों को वायु-तत्व के अनुकूल बनाया जाता है, और जब एक ही तत्व -- वायु - तत्व रह जाता है तो उसे सेचन - क्रिया द्वारा हल्का किया जाता है ।इस प्रकार पूरा शरीर ही वायु से हल्का हो जाता है । ऐसी स्तिति में इस पार्थिव शरीर को जितना भी चाहें ऊपर उठाया जा सकता है, इधर-उधर ले जाया जा सकता है, और इस प्रकार प्रयोगों द्वारा बाबा ने शून्य सिद्ध की जानकारी दी।

इस साधना को उन दिनों बाबा के निर्देशन में किया भी था, बिना गुरु के मार्ग निर्देशन के यह कतई संभव नहीं है । इसके लिए शरीर को काफी लचीला बनाना पड़ता है ।

बाबा साधना - क्षेत्र में काफी ऊंचे उठे हुए थे। ऊपर से दिखने में एक सामान्य प्राणी ही लगते ,उनमें कोई विशिष्टता नजर नहीं आती । उनके जीवन का एक प्रसंग मुझे उनके शिष्य कालीचरण से सुनने को मिला था --

उन दिनों बाबा कलकत्ता में वास करते थे । एक साधारण सी धोती, और ऊपर से एक छोटा - सा अंगोछा । एक दिन कलकत्ते के बड़े एक सेठ उनके दर्शन करने के लिए आये । सेठजी ने इन की ख्याति कहीं सुन रखी थी, पर जब प्रत्यक्ष दर्शन में सेठजी ने इन्हें देखा, तो उन्हें बाबाजी एक सामान्य सन्त ही प्रतीत हुए -- सेठजी ने जाते वक्त इनकी फटी धोती देखकर कहा, बाबाजी धोती काफी फट गई है, कल नई भिजवा दूंगा । बाबाजी मुस्करा कर रह गये, बोले नहीं । दूसरे दिन जब सेठजी आये, तो अपने साथ दो धोती भी लेते आये थे । बाबा लगभग प्रवचन समाप्त कर चुके थे । सेठ जी ने अपनी अहम्मन्यता जताने के लिए सबके सामने धोती जोड़ा बाबा जी के सामने अविनीत भाव से रख दिया । बाबा ने नजरे उठाकर ऊपर देखा, और गुस्से में भरकर धोती जोड़े को उठाकर दूर फेंक दिया, बोले -- तू क्या मुझे पहनायेगा रे -- ले, और लोगों ने देखा कि आकाश - मार्ग से लगातार धोतियों कुरतों के कपड़े, अगोंछे आदि वस्त्र गिरने लगे, और देखते - देखते वस्त्रों का पांच-छः फुट ऊंचा ढेर सा लग गया ।

बाबा उठ कर अन्दर चले गये, और अंदर से दरवाजा बंद कर लिया ।

सेठ पानी - पानी हो गया। उसने दरवाजे के बाहर से काफी प्रार्थना की, रोया पर बाबा नहीं पसीजें, और प्रचार - भय के कारण बाबा ने उसी रात कलीचरण के साथ कलकत्ता छोड़ दिया, और फिर कभी कलकत्ता नहीं गये।

एक बार बाबा के सामने महाभारत की चर्चा चल पडी । बाबा सोए हुए थे, मैं उनके पैर दबा रहा था। मैं जिज्ञासा वश प्रश्न पूछता जाता, बाबा उत्तर देते जाते थे, मैंने पूंछा - क्या बाबा यह सत्य है कि महाभारत का युद्ध हुआ था, और इतनी मारकाट मची थी?

बाबा दो क्षण रुके- बोले, ध्वनि अपने आप में अखंड है, वह कभी भी नष्ट नहीं होती । ध्वनि काल क्रम से नष्ट नहीं होती हजारों वर्ष पहले भी जो ध्वनियां उच्चरित हुई थीं, वे आज भी ज्यों की त्यों वातावरण में सुरक्षित हैं । आज हम जो पस्पर वार्तालाप कर रहे हैं, वह लाखों वर्ष, बादभी ज्यों का त्यों सुना जा सकता है -- फिर एका एक उठते हुए बोले - तुम महाभारत की ध्वनियां सुनना चाहते हो, श्रीकृष्ण और अर्जुन के बीच जो वार्तालाप हुआ था, और जो गीता में ग्रंथित है,उसे सुनना चाहते हो?

-- बहुत उपकार होगा, यदि आप मुझे यह सौभाग्य दें तो ।

बाबा ने मुझे अपने पास खींच लिया और मेरी आंखों पर हौले-से हाथ फेरा - एका एक जैसे चमत्कार हो गया । ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे मैं किसी अन्य लोक में हूँ । मेरे सामने कौरव-पांडव युद्ध हो रहा था, पांडवों की सेना के बीचों - बीच श्रीकृष्ण सारथी बने रथ पर बैठे हैं - अर्जुन प्रश्न कर रहे हैं, और श्रीकृष्ण हाथ उठाकर पीछे मुड़कर उसे उत्तर दे रहे हैं -- और चारो तरफ एक अजीब - सा वातावरण अनुभव हो रहा है, परस्पर मार-काट की ध्वनियां, चीत्कारें साफ सुनाई दे रही है । अर्जुन का प्रश्न और श्रीकृष्ण का उत्तर पूर्णतः- कर्णस्पष्ट हो रहा है । दूसरे ही क्षण मेरी आंख खुल गई, मेरे सामने मात्र बाबा बैठे हुए थे, और मंद-मंद मुस्कुरा रहे थे - चलचित्र की तरह दृश्य बदल गया था । अभी - अभी जो देखा था, वह कितना भव्य था, क्या ऐसा दृश्य देखना सभी के प्रारब्ध में है, सोचकर मुझे रोमांच हो आया। प्रेमाधिक्य से मेरी आंखों में आँसू बहने लगे, और मेरा सिर बाबाजी के चरणों में झुक गया । आंखों के अश्रुकण बाबा के पादपद्म भिगोने लगे - और बाबा का वरदहस्त मेरी पीठ पर फिर रहा था । मैं कितना सौभाग्यशाली हूँ कि मुझे इस जीवन में बाबा के चरणों में वैठने का सौभाग्य मिला था ।

जैसा कि पहले ही कह चुका हूँ, बाबा औघड़ दानी थे । प्रसन्न होते तो सब-कुछ लुटा देते, पहनने की लंगोट तक दे देने में संकोच नहीं करते थे, और जब अप्रसन्न हो जाते, तो उस समय उनके हाथ में जो भी होता, फेंक देते, या आसपास जो भी चीज होती, उठाकर सामने वाले के सिर पर दे मारते , चाहे फ़िर भले ही उससे सामने वाले का सिर ही क्यों न फट जाय । बाबाज़ी के अप्रसन्नता के क्षणों में फेंकी गई चीजों से जो चोटें या घाव मेरे शरीर पर बने, वे आज भी उनके स्मृति- चिन्हों के रूप में मेरे शरीर पर अंकित हैं।

वावाजी काफी वृद्ध थे । मैं नहीं कह सकता कि उनकी आयु कितनी थी, और न कभी पूछने का साहस ही हुआ, पर उनके सिर के बाल पूर्णता शुभ्र हिमवत श्वेत थे, भौहों के वाल तक सफेद हो गये थे । निश्चय ही उनकी आयु सौ- सवा सौ वर्षों से ज्यादा ही होगी, परन्तु इतनी वृद्धता होने पर भी उनमें बालसुलभ चंचलता थी। मुंह में पूरे के पूरे छोटे-छोटे वुबले दांत सुरक्षित थे आंखों में तेज एवं चमक थी, जो अंधेरे में भी दृष्टिगोचर होती थी, तथा शरीर में बल एवं पुरुषार्थ था ,जो इतनी अगम्य चढ़ाई सहज ही चढ़ सकने पर भी हांफते नहीं थे, मुझ से दो कदम आगे ही रहते । मैं जब चढ़ाई - चढ़ते थक जाता, तो वे मुझे वैठकर विश्राम करने को कहते और स्वयं भी बैठ जाते, और थोड़ा विश्राम लेकर जब मैं उनके पांव दबाने का प्रयत्न करता,तो वे खिलखिला कर हंस पड़ते और उठकर मेरे आगे दौड़ने लगते ।

बाबा अतीन्द्रिय - ज्ञान में सिद्ध थे, और इस ज्ञान का उन्हें उच्च ज्ञान था । सामने वाले के मन की बात जान लेना इस साधना से सहज संभव है - इतना ही नहीं, दूरस्थ व्यक्ति के वारे में चिन्तन कर उस समय उसके मन में क्या विचार उठ रहे हैं, जान लेना कोई कठिन नहीं रह गया है। आजकल परामनोविज्ञान की शाखाएं खुल रही है, जयपुर विश्वविद्यालय में भी कुछ वर्षों तक इस पद्धति पर कार्य हुआ था । अमेरिका के ड्यूक विश्वविद्यालय के प्रो० राइन इस प्रकार के नये शास्त्र के वहां प्रवर्तक माने जाते हैं, और आजकल तो वहां इसकी कई शाखा- प्रशाखाएं खुल गई है । इन दिनों रूस में इस विषय पर अत्यधिक आधुनिक तरीके से कार्य हो रहा है ।

परामनोविज्ञान की शोध ने यह सिद्ध कर दिया कि मनुष्य सामान्य प्रयत्न से कई विलक्षण कार्य कर सकता है, चित्त एकाग्र कर वह आश्चर्यजनक करिश्में दिखा सकता है। मेरे इन्दौर -प्रवास के समय एक नवयुवक इस विद्या की जिज्ञासा लेकर मेरे पास आया। वह किसी भी कीमत पर इस विद्या को सिखना चाहता था। मैंने परीक्षा अपने ढंग से ली, तो वह इसमें सफल उतरा । मैंने उसे चित्त एकाग्र कर चित्त-शक्ति का अभ्यास करना सिखाया । मात्र सात दिनों में ही वह इसके माध्यम से टेवल पर पड़ी पैंसिल को खड़ी कर सकने में सफल हो गया । कहने का तात्पर्य यह है कि यदि प्रवल इच्छा हो तो कोई भी व्यक्ति इसमें सफल हो सकता है ।

पिछली फरवरी में ही दिल्ली में मुझे अन्धचक्षु षण्मुखेश्वर स्वामी से मिलने का सौभाग्य मिला था । उन्होंने कई उच्चस्तरीय व्यक्तियों एवं पदाधिकारियों के सामने इस शक्ति के माध्यम से दस मन वजन के पत्थर को तोड़कर बता दिया था। मात्र नेत्र - भेदन शक्ति से दूर

बैठे-बैठे बंद सांकल चढ़े किवाड़ को खोलकर बता दिया था, कौन सा व्यक्ति क्या -क्या सोच रहा है, इसे सबके सामने बताकर आश्चर्यचकित कर दिया था।

मेरे कहने का तात्पर्य है कि अब यह विद्या गोपनीय नहीं रही । इस विद्या की शक्ति आश्चर्यचकित कर देने वाली है अस्तु ।

हाँ, तो मैं बाबा के बारे में कह रहा था । परामनोविज्ञान के बारे में सर्वप्रथम मैंने बाबा से ही जाना था । वे इस विद्या के माहिर थे । मेरी डायरी में कौन - कौन पते - ठिकाने लिखे हुए हैं,सब बाबा ने चित्त एकाग्र कर परामनोविज्ञान के माध्यम से सहज ही बता दिए थे । यही नहीं अपितु किस पृष्ठ पर क्या लिखा है, यह भी बिना डायरी खोले ही बाबा ने बता कर इस विद्या को प्रमाणिकता दी थी ।

मानसरोवर की यात्रा के बीच बाबा ने इस विद्या की जानकारी मुझे दी थी, केवल जानकारी ही नहीं दी, चित्त एकाग्र करने की विधि भी बताई, और अपने सामने बिठाकर इसका प्रयोग भी करवाया। जब 'संविन्दु एकाग्र' का अभ्यास हो गया, तब संवित् साधना सिखाई और इसका ज्ञान होते ही ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो मैं अपनी आत्मा का तादात्म्य दूसरी आत्मा से कर सकता हूँ । इसके बाद जब भी किसी दूसरे व्यक्ति या साधु को देखता, तो तुरन्त उसके मन में उठ रही भावनाओं - विचारों को जान लेता - जब इसका अभ्यास बढ़ गया, तो फिर दूरस्थ परिचित का ध्यान करते ही उसके मन की बात जानना सहज - गम्य हो गया । इस अभ्यास के बाद कई बार मैं अपनी पत्नी के विचार , माँ के विचार वहीं इतनी दूर बैठे-बैठे जान लेता ।

मानसरोवर की यात्रा जितनी कष्टकर है, उतनी ही आनन्ददायक भी , जितनी सुरम्यता,शांति एवं पवित्रता यहां पर है, उतनी कही नहीं । जहां तक मेरा अनुभव है, चित्त-एकाग्र तथा अभ्यास करने के लिए ऐसे स्थान सर्वोत्तम हैं, इसमें सन्देह नहीं ।

केवल बाबा की सिद्धियों के बारे में ही उल्लेख करुं, तो एक पूरा ग्रंथ बन सकता है । वे एक बार गन्ध तन्मात्र सिद्धि के बारे में बात कर रहे थे । बाबाजी ने बताया, कि इससे शरीर में या हाथ में जैसी भी चाहें गंध उत्पन्न की जा सकती है, और इस समय जिसे भी स्पर्श किया जाय वह अक्षुण्ण गंधमय हो सकता है । ऐसा कहते- कहते बाबा ने अपनी दोनों हथेलियां रगड़ी,और दाहिनी हथेली मेरे सामने कर दी । लगभग चार फुट की दूरी पर मैं बैठा था, और तीव्र वेग से गुलाब की गंध आ रही थी - क्या गुलाब की सुगंध आ रही है ?

—— हां बाबा ।

— और अब ?

इस बार उन्होंने पुनः हथेलियां रगड़ कर दाहिनी हथेली ही मेरे सामने की थी और इस बार चतुर्दिक वातावरण में कस्तूरी की सुगंध व्याप्त हो गई थी । बाबा में यह अद्भुत क्षमता थी, और एक क्षण में ही वे मनचाही सुगंध पैदा करने में सक्षम थे ।

मुझे बाबा जी का साहचर्य काफी समय तक मिला । मानसरोवर की यात्रा समाप्त कर वे कुछ समय अपने गुरु - स्थान मुंडीभाटी में रहे । यहां इनके गुरु का स्थान है तथा गुरु ने इसी स्थान पर समाधि ली थी ।

एक दिन मुंडीभाटी में जब दुतल्ले पर बाबा बैठे हुए थे, मैंने पूछा , बाबा ! योगी का क्या चिन्ह है?

बाबा बोले, जो योग के मर्म को समझे ।

मैंने पूछा - क्या बाबा ! योगी को अपनी क्रियाओं के चमत्कारों का प्रदर्शन करना चाहिए?

बाबा बोले, नहीं, जब तक व्यक्ति योग मार्ग पर है, पूर्णता प्राप्त नहीं की है, तब तक उसे चमत्कारों से सर्वथा दूर रहना चाहिए, क्योंकि ये चमत्कार अहंकार की उत्पत्ति करते हैं, और अहंकार योग को भ्रष्ट करता है, अतः साधक जब तक योग - साधना में पूर्णता प्राप्त नहीं करले तब तक उसे सर्वथा साधारण रूप में रहना चाहिए । उकसाने पर भी वह चमत्कार बताने के फेर में नहीं पड़े । अपनी यौगिक क्रियाओं एवं साधनाओं को सर्वथा गुप्त रखे, यहां तक कि निकटतम स्वजनों को भी इसका भान नहीं होने दे । पर जो योग-साधना में पूर्ण हो चुके हैं,उनके लिए बंधन नहीं है, क्योंकि वे अहं से शून्य है, चमत्कार - प्रदर्शन भी उनके चित्त में अहंकार की सृष्टि नहीं कर सकता ।

जो साधना पूरी कर चुके हैं,उनके लिए कुछ भी असंभव नहीं है । सम्पूर्ण भौतिक पदार्थ उनके लिए सहज गम्य हैं, वे भौतिकता से काफी ऊंचे उठे होते हैं ।

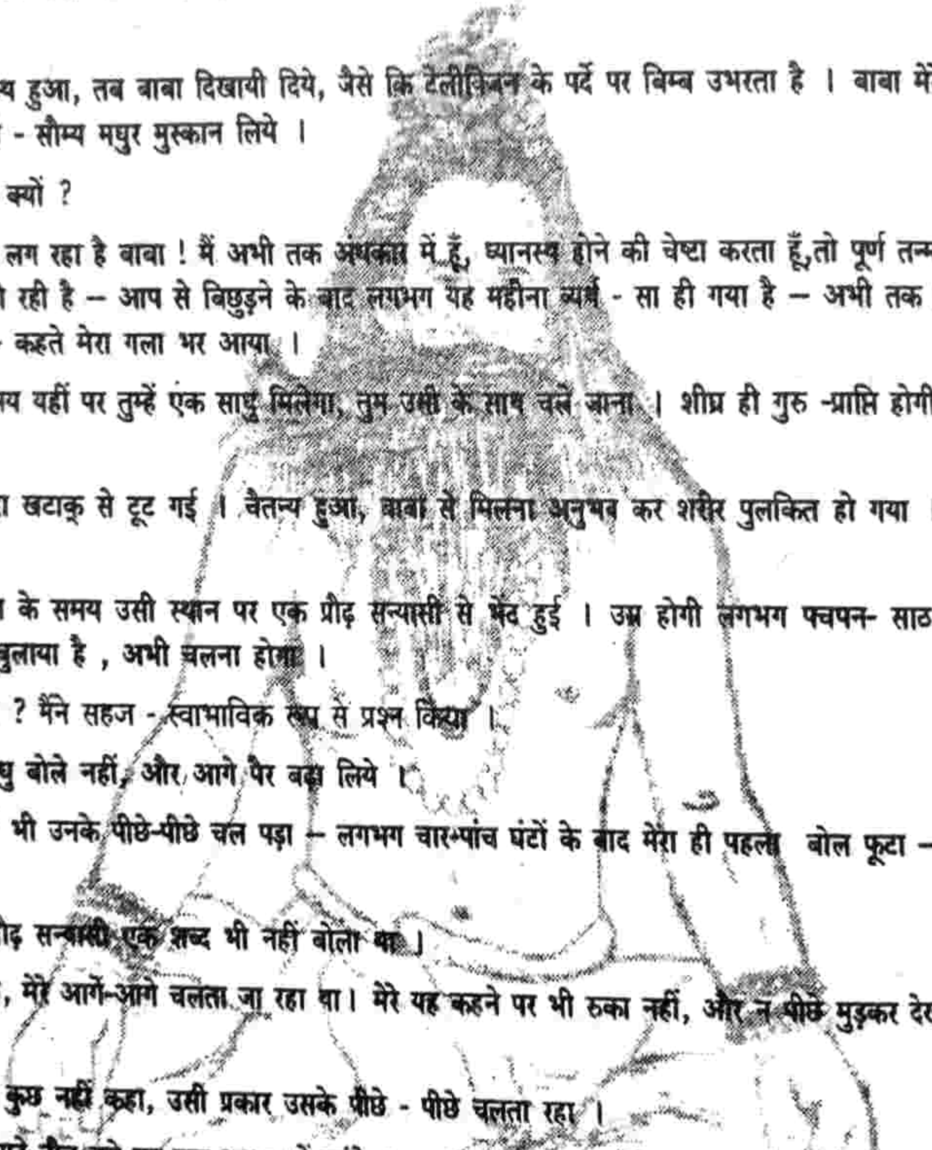
बाबा इस मुंडी भाटी आश्रम में आते ही रहते थे । इस आश्रम का सम्पूर्ण व्यय बाबा ही वहन करते थे । कई बार वे साधना - रत होने के कारण इस आश्रम में बनी सिद्ध गुफा में तीन चार महीनों के लिए प्रवेश कर जाते थे । न भोजन लेते थे, न पानी और चार महीने बाद ही बाहर निकलते थे । इन चार महीनों में कोई उन्हें देख भी नहीं सकता था ।

वे इन दिनों भी इस सिद्ध गुफा में प्रवेश करने वाले थे उनसे बिछुड़ना मेरे लिए असंभव - सा था,पर उनकी कठोर आज्ञा शिरोधार्य

थी । जिस दिन उन्होंने सिद्ध गुफा में प्रवेश किया सभी शिष्यों (जो चार - पांच थे) को और मुझे भी आशीर्वाद दिया, सिर पर हाथ फेरा, और गुफा में प्रवेश कर गये ।

मैं सन्ध्या को बाबा की स्मृति चित्त में संजोये आगे के लिए चल पड़ा ।

बाबा से बिछुड़े लगभग एक महीना हो गया था । मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था, न दिन को चैन था और रात को साधना में भी रह-रहकर मन उचट जाता था । अभी तक मुझे कोई गुरु प्राप्त न हो सका था, जिसके चरणों में बैठकर अभय प्राप्त कर सकूं । मेरा मन वैराग्य की तरफ ज्यादा झुकता चला जा रहा था । गृहस्थ से अभी तक पिंड छुड़ा नहीं सका था, और वैराग्य पूरी तरह से ले नहीं पाया था । मेरा मन त्रिशंकुवत् हो गया था - और यह ऊहापोह जब जरुरत से ज्यादा बढ़ गया, तब एक दिन शाम को मैंने बाबाजी का आह्वान किया ।



जब पूर्ण समाधिस्थ हुआ, तब बाबा दिखायी दिये, जैसे कि टेलीविजन के पर्दे पर बिम्ब उभरता है । बाबा मेरे सामने थे, निश्छल, निःस्पृह - वीतरागी, त्यागी - सौम्य मधुर मुस्कान लिये ।

बाबा ने पूछा — क्यों ?

— मेरा मन नहीं लग रहा है बाबा ! मैं अभी तक अंधकार में हूँ, ध्यानस्थ होने की चेष्टा करता हूँ,तो पूर्ण तन्मयता नहीं आ पाती। घर जाने की इच्छा नहीं हो रही है — आप से बिछुड़ने के बाद लगभग यह महीना व्यर्थ - सा ही गया है — अभी तक गुरु पद भी प्राप्त नहीं हो सके हैं - और कहते - कहते मेरा गला भर आया ।

— कल इसी समय यहीं पर तुम्हें एक साधु मिलेगा, तुम उसी के साथ चले जाना । शीघ्र ही गुरु -प्राप्ति होगी - और बाबा एकदम से अन्तर्ध्यान हो गये ।

मेरी ध्यान - मुद्रा खटाक् से टूट गई । चैतन्य हुआ, बाबा से मिलना अनुभव कर शरीर पुलकित हो गया । उस दिन मुझे गहरी नींद आई।

दूसरे दिन सन्ध्या के समय उसी स्थान पर एक प्रौढ़ सन्यासी से भेंट हुई । उम्र होगी लगभग पचपन- साठ बरस, आते ही बोले — गुरु जी ने आपको बुलाया है , अभी चलना होगा ।

— कौन गुरुजी ? मैंने सहज - स्वाभाविक रूप से प्रश्न किया ।

— सन्यासी बन्धु बोले नहीं, और आगे पैर बढ़ा लिये ।

लाचार होकर मैं भी उनके पीछे-पीछे चल पड़ा — लगभग चार-पांच घंटों के बाद मेरा ही पहला बोल फूटा — बन्धु , थक गया हूँ, थोड़ा विश्राम कर लें ।

अब तक वह प्रौढ़ सन्यासी एक शब्द भी नहीं बोला था ।

वह बराबर मौन, मेरे आगे-आगे चलता जा रहा था। मेरे यह कहने पर भी रुका नहीं, और न पीछे मुड़कर देखा । वह बराबर आगे बढ़ता रहा ।

मैंने दूसरी बार कुछ नहीं कहा, उसी प्रकार उसके पीछे - पीछे चलता रहा ।

प्रातः लगभग साढ़े तीन बजे हम एक आश्रम में पहुंचे । शान्त-सुरम्य, चित्ताकर्षक । आश्रम के पास आते - आते वह प्रौढ़ संन्यासी कहीं लुप्त हो चुका था। मैंने आध घंटे एक वृक्ष के नीचे विश्राम किया । मुझे वहां कहीं कोई व्यक्ति दृष्टिगोचर नहीं हुआ — जब थकावट गई तो उठ खड़ा हुआ ।आश्रम नदी के किनारे बसा हुआ था, मैंने जी भरकर स्नान किया, सन्ध्या वन्दन किया, और ध्यानस्थ हो गया। जब आंख खुली , उस समय भगवान भास्कर प्राची की खिड़की से मंद - मंद मुस्करा रहे थे ।

आश्रम में थोड़ी - बहुत चहल-पहल शुरु हो गयी थी । इक्का- दुक्का साधु इधर-उधर घूमते नजर आ रहे थे । मैं वहीं वृक्ष के नीचे बैठा यह सब देख रहा था । जो सन्यासी मुझे यहां तक लेकर आया था, वह कहीं दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था ।

लगभग साढ़े नौ बजे मेरा बुलावा आया, और मुझे आश्रम से लगभग एक फर्लांग दूर कुटियां के पास ले जाकर खड़ा कर दिया गया। कुटिया के बाहर एक युवा साधु खड़ा था।

मुझे जो लेकर आया था उसने उस युवा साधु से कुछ कहा, जो मैं समझ नहीं सका । युवा साधु ने मेरी कपड़ों की थैली बाहर ही रखवा दी, और मुझे कुटिया के अन्दर जाने की अनुमति दे दी ।

अन्दर का दृश्य अद्भुत था — ऐसा शीतल प्रकाश , कि जैसे सैकड़ों चंद्रमा एक साथ चमक रहे हो - अन्दर कुटिया के बीचों-बीच परमहंस स्वामी सच्चिदानंद स्थित थे - शान्त तेजस्वी । मैंने पहले-पहल पूज्य गुरुजी के सिर के चतुर्दिक ही प्रकाश - किरीट देखा - इससे पूर्व चित्रों मेंश्रीराम , श्रीकृष्ण आदि देवी-देवताओं के सिर के चारों ओर प्रकाश - किरीट देखा था ।तेजस्वी मुखमंडल देखे थे, पर प्रकाश- किरीट पहली बार ही दिखाई दिया ।

वृद्ध शरीर, गौर वर्ण, लम्बा डील - डौल, प्रशस्त ललाट, तेजस्वी मुखमंडल और शान्त सरल प्रेम पूर्ण आंखें - देखता ही रह गया, टकटकी बांधे । आंखें वहां से हटने का नाम ही नहीं ले रही थीं— जैसे काफी समय से प्यासी हों, और आज छककर अमृत पी रही हों, अबाध, निर्द्वन्द्व गतिसे ।

उन्होंने उंगली से मुझे वैठने का संकेत किया, मैं बैठ गया । अब मैंने कुटिया में दृष्टि डाली साफ, पवित्र एवं सादगी पूर्ण कुटिया थी । कुटिया में बांई ओर एक अन्य साधु समाधिस्थ थे ।

मेरी सारी इन्द्रियां एक वार पुनः गुरु - चरणों में लग गई । आत्मा कह रही थी, वह सामने हैं जिनकी तुम खोज कर रहे थे । जिनके लिए आज तुम इतने वरसों से भटक रहे हो, वे यहीं है ।इन्हीं को प्राप्त करने से हृदय की गांठ खुल सकती हैं, संशयों के श्रापों का छेदन हो सकता है,समस्त दुष्कर्मों का क्षय हो सकता है, तथा जिनके माध्यम से ब्रह्म का साक्षात्कार संभव हो सकता है ।

भिद्यते हृदय-ग्रंथि-, छिद्यन्ते सर्व संशयाः ।

क्षीयन्ते चास्य कर्म्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ।।

संसार- सिन्धु को पार करने का एक मात्र साधन है, गुरु जो कि समर्थ होता है इस प्रकार की वाधाओं से पार पहुंचाने के लिए - शारदा तिलक का यह कथन स्मरण हो आया —

संसार सिन्धोस्तरणैक हेतून । दधे गुरुन् मूर्धिन शिव स्वरूपान् ।

रजांसि येषां पद पंकजानां । तीर्थाभिषेक श्रियमावहन्ति ।।

मैं परमहंस स्वामीजी के चरणों में झुक गया । गुरु के मुंह से पहला वाक्य निस्सृत हुआ -

अभयास्तु ।

मैं उसी क्षण अपने - आपको अभय समझने लगा । हो सकता है, लोगो को यह आश्चर्यजनक लगे पर उस समय का मेरे चारो ओर का माहौल ही ऐसा था । फिर कई वार मुझे संकेत मिल चुका था, कि शीघ्र ही योग्य गुरु की प्राप्ति होगी, और वे गुरु परमहंस स्वामी सच्चिदानंद होंगे—

आरिफॉ के जामे - हक नोशीदः अंद, शजहां दानिस्तः वा पोशीदः अंद,

हर किरा इसरारे -हक आमोख्तन्द, मुहु कर्दन्दो दहानश दोख्तन्द ।।

हर किरा इसरारे -हक आमोख्तन्द, मुहु कर्दन्दो दहानश दोख्तन्द ।। इसके बाद तो उनकी असीम कृपा निरन्तर बनी रही, और अपार्थिव रूप में उनका मार्गदर्शन

यह था, मेरा गुरु से प्रथम साक्षात्कार ।

आज भी मेरे सामने है ।

इस घटना के बाद बीस दिनों तक मुझे अलग रखा गया । गुरु - भाई विज्ञानान्द मुझे साधना के उच्च स्तरों का अभ्यास कराते, मैं और केवल विज्ञानानन्द ही थे, और बराबर

चौवीस घंटो में बीस घंटे इस कार्य में वीतने लगे । बाहर की दुनिया से मैं कट चुका था ।

दीक्षा - मार्ग से पहले की पृषटभूमि भूमि तैयार की जा रही थी । सहस्रदल कमल प्रतिस्थापन

वीसवें दिन सांय मेरी परीक्षा हुई । परीक्षा में सफल जान इक्कीसवें दिन पूज्य गुरुदेव ने दीक्षा दी । मेरे सिर पर गुरु का पावन हाथ था, और मैं उस घड़ी को अपने समस्त पुण्यों

किया, और कुंडलिनी छूकर मेरे शरीर में शक्ति संचार किया ।

का मूल जानकर कृतकृत्य हो रहा था ।

इसके बाद लगभग छः महीने मैं पूज्य गुरुदेव के साहचर्य में रहा । इसके अनन्तर उन्होंने मुझे पुनः गृहस्थ पालन की आज्ञा दी, यद्यपि मैं उस स्थान को छोड़ना नहीं चाहता था, पर गुरु- आज्ञा सर्वोपरि

और लोक में आकर निःस्पृह भाव से मनन करने की आज्ञा दी । मेरे जीवन का समस्त श्रेय एवं प्रेय है, जीवन की अमूल्य निधि है ।

थी । इन छः महीनों में उन्होंने मुझे जो कुछ दिया, वह अक्षय है,

जिन दिनों नारायण सिद्धाश्रम में गये- गये थे तो अचानक एक दिन उन्होंने परम योगी भृगु महाराज के पास जाकर लोकोत्तर साधना सीखने की इच्छा प्रकट की, उस दुबले - पतले सन्यासी को देखकर भृगु महाराज ने उनसे कहा, "सिद्धाश्रम में प्रवेश पा लिया है, यह अच्छी बात है, परन्तु अभी तुम में वह क्षमता नहीं आ पाई है, जो इस प्रकार की साधना के लिए आवश्यक होती है" नारायण ने एक क्षण के लिए

आंखें उठा कर उनकी ओर देखा, इन आंखों में दृढ़ संकल्प शक्ति और आग भरी हुई थी, परन्तु दूसरे ही क्षण अपने आपको संयत करते हुए बोले - ' मैं जहां खड़ा हूँ वहीं खड़ा हूँ जब आप मेरी दृढ़ता को आंक ले तव मुझे सिखा दें' और उसी स्थान पर चार दिन, चार रात अडिग खड़े रहकर उन्होंने अपना प्रमाण पत्र दे दिया था, और महामुनि ने प्रसन्न होकर कहा था - मुझे विश्वास हो गया है कि यह तेजस्वी युवक सिद्धाश्रम में महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत कर सकेगा ।

उन दिनों निरंतर साधनाओं में रत रहता था । एक बार दिन भर मैं बहुत व्यस्त रहा था, शाम को हम सब शिष्य थक कर सो गये, हठात् रात्रि को एक बजे के लगभग आंख खुल गई, बाहर झांका तो चन्द्रमा की शीतल चांदनी बरस रही थी, मैं उठा और कुटिया से बाहर निकल आया, पूर्णमासी की रात्रि थी, अतः चारों ओर स्निग्धता, उज्ज्वलता बरस रही थी, मैंने आगे नजर दौड़ाई तो देखा कि एक स्फटिक शिला पर गुरुदेव सिद्धासन लगाकर ध्यान मग्न बैठे हैं, उनके चारों ओर एक विशेष प्रकार का ओज एवं प्रभा मंडल है ।

बिरला सौभाग्यशाली ही, ऐसे क्षणों को अपनी आंखों से निहार सकेगा, उस दृश्य का वर्णन करना इस लेखनी के वश की बात नहीं है । साधनापथ पर बढ़ते हुए नारायण के विषय में उनके गुरुभाई स्वामी विश्वानंद जी कहते हैं –

उस दिन प्रातः काल का समय था, मानसरोवर के निकट कैलाश पर्वत की एक शिला पर स्वामी निखिलेश्वरानंद जी ध्यानस्थ । चारों ओर बर्फ बिछी हुई, और उस पर पड़ती हुई प्रातः कालीन की रश्मियां सौ- सौ रुपों में श्रृगांर कर नृत्य करती हुई अनुभव हो रही थी, इस शीतयुक्त वातावरण में भी वह योगी पिछले बीस दिनों से निर्विकल्प समाधि में लीन था, एक लंगोटी के अलावा उसके शरीर पर किसी प्रकार का कोई बस्त्र नहीं था , गुरु की आज्ञा से ब्रह्मत्व साधना में लीन उस योगी के बारे में स्वयं गुरुदेव स्वामी सच्चिदानंद जी भी चिंतित थे, और मानसरोवर पर टहलते हुए उन्होंने मुझे यह देखने के लिए भेजा था कि उसे कोई तकलीफ तो नहीं है । मैं उसकी इस उग्र एवं कष्टप्रद साधना को देखकर आश्चर्यचकित था, उस भयंकर शीत में भी उसने अपने आपको जिस प्रकार से संयत कर रखा था, वह अपने आप में अप्रतिम था, यह साधना का अंतिम चरण था, और चारों तरफ बिछी हुई बर्फ पर सूर्य की रश्मियों का नर्तन और अखंड शांति का वातावरण देखकर मैं भावविभोर था, अकस्मात उसके सिर से हुंकार की ध्वनि प्रस्फुटित हुई, ऐसा लगा जैसे सिर के मध्य से एक विचित्र सी लपक निकली हो और दूसरे ही क्षण वह ज्योति पुंज उसी शरीर में प्रतिस्थापित हो गयी हो, उसका चेहरा एक विचित्र आभा से देदीप्यमान हो उठा और उसकी कमलवत् आंखे खुल गई, सही अर्थो में उसे योगियों में दुर्लभ और साधनाओं में कठिनतम साधना ब्रह्मत्व साधना में पूर्णता और सिद्धि प्राप्त हो गई थी । मुझे सामने देखकर वह भावविभोर हो उठा, बीस दिनों तक एक ही स्थान पर और एक ही आसन पर बैठे रहने से शरीर में कमजोरी सी आ गई थी, परन्तु वह दूसरे ही क्षण उठा और जब मैंने बताया कि पूज्य गुरुदेव मानसरोवर के तट पर विचरण कर रहे हैं तो भाव विह्वल हो उठा और वह मेरा हाथ पकड़ कर तेजी से उस ओर लपका जिधर गुरुदेव के होने की सम्भावना थी, उसका शरीर ब्रह्मत्व से ओतप्रोत था और गुरुदेव को देखते ही वह उनके चरणों में गर पड़ा, उसका शरीर कंपित था, नेत्र आनंदाश्रु से सिक्त थे, और अपूर्व सिद्धि से उसका रोम-रोम ज्योत्स्नित था,पूज्य गुरुदेव को असीम आनंद की अनुभूति हो रही थी कि उनके एक शिष्य ने उस साधना को प्राप्त कर लिया है जो अद्वितीय है और भावविह्वल होकर उसे अपने चरणों से उठाकर हृदय से लगा लिया, ऐसा लगा मानो दोनों शरीर एकाकार हो गये हों, मानसरोवर की धरती पर गुरु -शिष्य का यह मिलन-दृष्य अनिर्वचनीय था ।

परमहंस स्वामी सच्चिदानंद अलौकिक योग शक्ति के भंडार थे । संसार की कोई भी वस्तु उनके लिए अगम्य नहीं थी । प्रकृति की सत्ता के वे एकीभूत पुंज थे । वायुमण्डल से वे भौतिक वस्तुओं को उत्पन्न कर लेते थे ।

एक बार सूर्यार्घ्य देते समय मेरा शंख गिरकर टूट गया, मैने मध्याह्न को बाबाजी से प्रार्थना की बाबाजी दो क्षण मेरी तरफ देखते रहे और अगले ही क्षण हाथ ऊंचा कर वायुमंडल से एक दक्षिणावर्त शंख लेकर मुझे दे दिया ।

एक बार गुरु जी के सामने मैंने योग के संबंध में प्रश्न किया । मैंने पूछा, योग क्या है ? तथा योग के अंतर्गत जो समाधि होती है, उसका क्या आनन्द है ?

गुरुदेव ने कहा, चित्तवृत्तियों का निरोध योग के माध्यम से ही संभव है –

अग्निर्यत्राभिमथ्यते, वायुर्यत्राधिरुध्यते, सोमो यत्रातिरिच्यते, तत्र संजायते मनः ।।

त्रिरुन्नतं स्थाप्य समं शरीरं, हृदीन्द्रियाणि मनसा निवेश्य ।

ब्रह्मोडुपेन प्रतरेत विद्वान् , स्रोतांसि सर्वाणि भयावहानि ।।

नीहारधूमार्कनिलानलानां, खद्योतविद्युत्स्फटिकाशशिनाम् ।

एतानि रूपाणि पुरः सराणि , ब्रह्मण्यभिव्यक्तिकराणि योगे ।।

पृथिव्यप्तेजो निलखे समुत्थिते,पंचात्मके योगगुणे प्रवृत्ते ।

न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः, प्राप्तव्य योगाग्निमयं शरीरम् ।।

लघुत्वमारोग्यमलोलुपत्वं, वर्णप्रसादं स्वरसौष्ठवं च ।

गन्धः शुभो मूत्रपुरीषमल्पं , योगप्रवृत्तिं प्रथमां वदन्ति ।।

यथैव बिम्बं मृदयोपलिप्तं, तेजोमयं भ्राजते तत् सुधान्तम् ।

तद् वात्मतत्वं प्रसमीक्ष्य देही, एकः कृतार्थो भवते वीतशोकः ।।

इसे स्पष्ट करते हुए गुरुदेव ने बताया कि जहां अग्नि का मंथन होता है और प्राण का विधिवत् निरोध कर सोम रस प्रकट किया जाता है, वहीं पर मन नितान्त पवित्र, शुद्ध एवं अकलुष होता है। विद्वान् साधक का यह कर्तव्य है, कि वह अपने सिर, कंठ और वक्ष को निरन्तर ऊँचा उठाता रहे, शरीर को सीधा एवं संयमित करता रहे , मन के द्वारा इन्द्रियों का हृदय में निरोध कर प्रणव - नौका से जितने भी कठिन एवं भयावह स्थल हैं उन्हें पार कर जाय। जो सच्चा योगी है, उसके सामने कुहरा, धुआं, सूर्य, वायु, अग्नि, विद्युत, स्फटिक मणि और चन्द्र के समान अनेक दृश्य दिखाई पड़ते रहते हैं और ये दृश्य योग की सफलता के लक्षण हैं । पंचमहाभूतों का उत्थान होने पर पंचयोग गुण सिद्ध होते हैं, और ऐसा होने पर साधक रोग, जरा एवं मृत्यु से हमेशा - हमेशा के लिए छुटकारा पा लेता है । देह का हल्का होना, आरोग्य भागों की निवृत्ति वर्णोज्ज्वलता, स्वर-संधान, गंधमर्दन, मलमूत्र शिथिलीकरण - ये सब योग की प्रथमावस्था है जैसे कोई उज्ज्वल रत्न मिट्टी का संसर्ग पाकर मैला -सा हो जाता है, और पुनः पोंछने पर चमकने लगता है, उसी प्रकार योगी आत्म-तत्व को जानकर एकावस्था को प्राप्त करता है, और तब समस्त क्लेशों से मुक्त हो जाता है ।

अब रही बात, कि वह लोक कैसा हो, तो इस सम्बन्ध में स्पष्ट है —

भूर्भुवः स्वरिमे लोका श्चन्द्रसूर्याग्नि देवताः । प्रतिष्ठिताः सदा यत्र तत्परं ज्योतिरोमिति ।।

त्रयः कालास्त्रयो लोका, स्त्रयोवेदास्त्रयोग्नयः । त्रयः स्वराः स्थिताः यत्र, तत्परं ज्योतिरोमिति ।।

सत्वं रजस्तमश्चैव, ब्रह्म विष्णु महेश्वराः । सर्वे देवाः स्थिताः यत्र, तत्परं ज्योतिरोमित ।।

कृतिरिच्छा तथा ज्ञानं, ब्राह्मी रौद्री च वैष्णवी । त्रिधा शक्तिः स्यता यत्र, तत्परं ज्योतिरोमिति ।।

शुचिर्वाप्यशुचिर्वापि, यो जपेत्प्रणवं सदा । न स लिप्यति पापेन, पद्मपत्रमिवाम्भसा ।।

पद्मासनं समारुह्य, समकायशिरोधरः । नासाग्रदृष्टिरेकाकी, जपेदोंकारमव्ययम् ।।

देहेऽस्मिन्वर्तते मेरुः, सप्तद्वीप समन्वितः । सरितः सागराः शैलाः, क्षेत्राणि क्षेत्रपालकाः ।।

ऋषयो मुनयः सर्वे नक्षत्राणि ग्रहस्तथा । पुण्यतीर्थानि पीठानि, वर्तन्ते पीठदेवताः ।।

सृष्टिसंहारकर्तारौ, भ्रमन्तौ शशिभास्करौ । नभो वायुश्च वह्निश्च, जलं पृथ्वी तथैव च ।।

जानाति या सर्वमिदं, स योगी नात्र संशयः । नाभिजानाति शीतोष्णं, न दुःखं न सुखं तथा ।।

न मानं नापमानं च, योगी युक्तः समाधिना । अभेद्यः सर्वशस्त्राणामवध्यः सर्वदेहिनाम् ।।

अग्राह्यो मन्त्रसंघानां , योगी युक्तस्समाधिना । दृष्टिः स्थिरो यस्य विनापि दृश्याद् ।।

वायुः स्थिरो यस्य विना प्रयत्नात् । मनः स्थिरं यस्य विनावलम्बात ।।

स एव योगी स गुरुः स सेव्यः । भ्रुवोर्मध्ये शिवस्थानं, मनस्तत्र विलीयते ।।

ज्ञातव्यं तत्पदं तूर्य, तत्र कालो न विद्यते ।।

भूर्भुवः स्वः तीनों लोक, जिनके स्वामी चन्द्रमा, सूर्य एवं अग्नि देवता हैं, और ये जहां प्रतिष्ठित हैं, उसके ऊपर ज्योतिस्व रूप ओंकार का पावन स्थान है । तीनों काल, तीनों वेद, तीनों लोक, तीनों अग्नियां और तीनों स्वर जहां स्थित है, उसके ऊपर भी ओंकार ज्योति का स्थान है।सत,रज,तम, ब्रह्मा, विष्णु, महेश और समस्त देवता जहां स्थित हैं, उसके ऊपर ओंकार ज्योति देखी जा सकती है। कृति, इच्छा और ज्ञान, ब्राह्मी, रौद्री और वैष्णवी, ये त्रिधाशक्तियां जहां अवस्थित हैं, उसके ऊपर यह शक्ति देखी जा सकती है । ओंकार - सिद्धि ही प्रथम सिद्धि है, जिसके द्वारा आगे बढ़ा जा सकता है । पद्मासन पर बैठकर, शरीर, ग्रीवा और सिर को सीधा रखकर नासिकाग्र पर दृष्टि स्थापित कर जप करना चाहिए । इस शरीर में मेरु है, सप्त देवताओं के सप्त मेरु इसी शरीर में स्थित है । समस्त सरिताएं, सागर पर्वत और क्षेत्र इसी शरीर में है । इसी में समस्त देव, ऋषि, मुनि, नक्षत्र, ग्रह तीर्थ स्थान, पीठ एवं पीठदेव हैं । सृष्टि को उत्पन्न, पालन एवं

संहार करने वाले भी इसी शरीर में हैं - जो इन सब को जान लेता है, वही वास्तव में योगी कहलाने का अधिकारी है । न तो योगी शीत को जानता है, न उष्ण को, न वह सुख को जानता है, और न दुःख को । मानापमान से वह परे रहता है, वह सब शस्त्रों से अभेद्य है, वह मनुष्यों से अवध्य है, कोई मंत्र उसे ग्रस्त नहीं कर सकता है । इसकी दृष्टि बिना किसी दृष्टि के स्थिर है,बिना प्रयत्न के जिसका वायु स्थिर है। बिना अवलम्बन के जिसका मन स्थिर है। वही योगी है,वही गुरु ... ने का अधिकारी है । दोनों भवों के मध्य शिव-वास है, वहीं मन का विलय होता है, उस स्थान को जान लेना पूर्णता है ।

गुरुजी दो क्षण रुके, फिर बोले, तुमने आनंद - समाधि के बारे में पूछा है, इसका उत्तर अत्यन्त कठिन है —

सैषानन्दस्य मीमांसा भवति । युवा स्यात्साधुयुवाध्यायक आशिष्ठो द्रढिष्ठो बलिष्ठस्तस्येयं पृथ्विसर्वावित्तस्य पूर्णा स्यात । स एको मानुषानन्दाः

ते ये शतं मानुषा आनन्दाः । स एको मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दाः । श्रोत्रियस्य चाकामहृतस्य ।

ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दाः । स एको देवगन्धर्वाणामानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ।

ते ये शतं देवगन्धर्वाणामानन्दाः । स एकः पितृणां चिरलोकलौकानामानन्दः । श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य ।

तेयेशतं पितृणां चिरलोका लोकामानन्दाः । स एक आजानजानां देवानामानन्दः । श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य ।

ते ये शतमाजानजानां देवानामानन्दाः स एकः कर्मदेवानां देवानामानन्दः, ये कर्मणा देवानपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

ते ये शतं कर्मदेवानां देवानामानन्दाः । स एको देवानामानन्दः श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ।

ते ये शतं देवानामानन्दाः स एक इन्द्रस्यानन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ।

ते ये शतमिन्द्रस्यानन्दाः। स एको बृहस्पतेरानन्दः । श्रोत्रियस्यचाकामहतस्य ।

ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः स एकः प्रजापतेरनन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ।

ते ये शतं प्रजापतेरानन्दाः । स एको ब्रह्मण आनन्दः । श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य ।

स यश्चायं पुरुषे यश्चासावादित्ये स एकः स य एवं विदस्माल्लोकात्प्रत्य ।एतमन्नमयमात्मानमुपसंक्रामति । एवं प्राणमय मात्मानमुपसंक्रामति । एवं मनोमयमात्मानमुपसंक्रामति । एवं विज्ञान मयमात्मानमुपसंक्रामति । एवमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रामति ।।

सदाचारी युवक, शिष्ट वेदाध्ययन युक्त, स्वस्थ बलिष्ठ एवं वैभवयुक्त पृथिवीपति हो, तो यह मनुष्य आनन्द कहलाता है ।

मानवो के सौ आनन्द मनुष्य - गंधर्वो के एक आनन्द के समान है , ऐसा आनन्द शुद्ध अन्तःकरण वाला श्रोत्रिय ही प्राप्त कर सकता है ।

मनुष्य-गंधर्वो के सौ आनंद, देव गंधर्वो के एक आनन्द के तुल्य हैं । जिन व्यक्तियों की कामनाएं नष्ट हो चुकी हैं, ऐसे श्रोत्रिय को ही यह आनंद प्राप्त हो सकता है ।

देव - गन्धर्वो के सौ आनन्द पितृलोक में स्थायी रूप से रहने वाले पितरों के एक आनंद के बराबर है, कामना युक्त श्रोत्रिय ही यह प्राप्त कर सकता है ।

जो पितर स्थायी रूप से पितर - लोक में हैं, उनके सौ आनन्द आजानज - संज्ञक देवताओं का एक आनन्द है, यह आनन्द कामना मुक्त वेदवेत्ता को ही प्राप्त हो सकता है ।

आजानज संज्ञक देवताओं के सौ आनंद कर्म संज्ञक देवताओं का एक आनन्द है, कामना - रहित श्रोत्रिय ही ऐसे आनन्द से युक्त होते हैं ।

जो कर्म - देवताओं के सौ आनन्द है, वह देवों के एक आनन्द के बराबर है, यह आनन्द नष्टकाम वेदज्ञ ही प्राप्त कर सकता है।

देवों के सौ आनन्दो के बराबर बृहस्पति का एक आनन्द है, जो वेदज्ञ कामनाओं से मुक्त हो चुका है, वही उस आनन्द को प्राप्त कर सकता है ।

बृहस्पति के सौ आनन्द प्रजापति के एक आनन्द के समान है , मुक्त काम वेदज्ञ ही इसी आनन्द को जान सकता है ।

प्रजापति के सौ आनन्दों के समान ब्रह्म का एक आनन्द है, कामनायुक्त वेदज्ञ ही इस आनन्दकी भोग सकता है ।

मनुष्य में और सूर्य में जो निहित है, वह एक ही है, जो इसको जान लेता है, वह अन्नमय आत्मा को प्राप्त कर लेता है । वही आगे चल कर प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय, आत्मा से साक्षात्कार कर आनन्द-समाधि को प्राप्त कर सकता है ।

श्री श्री गुरुदेव के शरीर से निरन्तर गन्ध निकलती रहती थी । ऐसी गन्ध उच्च साधको के शरीर से ही प्राणित होती है । श्रीकृष्ण के शरीर से भी गन्ध सदा प्रवहमान रहती थी । गोविन्द लीलामृत में श्री श्रीकृष्ण के शरीर से निकलने वाली अष्टगन्ध का उल्लेख मिलता है ।-

कुरंगमदजिद्‌ वपु परिमलोर्मिकृष्टांगन, स्वकांगनलिनाष्टके शशि युताब्ज गन्धप्रियः ।

मदेन्दुवर चन्दना गुरु सुगन्धि चर्चार्चितः, स मे मदनमोहनः सखि तनोति नासास्पृहाम्‌ ।।

यह अष्टगन्ध इतनी भव्य मादक एवं सम्मोहक थी कि, सहज ही दूसरों को आकृष्ट करने की क्षमता रखती थी । राधा के शरीर से भी ऐसी गन्ध निकलती थी जिससे उसे 'पद्ममिनी' संज्ञा दी गई थी ।

मैंनें गुरुदेव से एक दिन इसी प्रसंग पर बात की — क्या प्रत्येक साधक अपने शरीर से ऐसी गन्ध प्रवाहित कर सकता है, और क्या यह गंध स्थायी रह सकती है ?

गुरुजी ने उत्तर दिया — योग की चार अवस्थाओं में से पहली अवस्था में ही गंध निःसृत साधना सम्पन्न की जा सकती है, पर जहां तक स्थायी गंध का प्रश्न है वह तब तक संभव नहीं, जब तक कि साधक योग की चतुर्थावस्था में न पहुंचे ।

क्या गुरूजी ! इस प्रकार किसी भी गंध की सृष्टि की जा सकती है ? स्वामी जी बोले क्यों नहीं क्या तुम देखना चाहोगे ?

—और देखते ही देखते गुलाब की हल्की - हल्की फुहारें पड़ने लगीं, जैसे वर्षा हो रही हो,बहुत मद्धिम - हम भीग से गये । चारो तरफ गुलाब की सुगंध भर गई, जैसे ढेर सारे ताजे गुलाब छितरा दिये गये हों ।

मैंने कहा , यह तो गुलाब के इत्र की वर्षा है, पर यह स्थायी तो नहीं रह सकती ।

स्वामीजी ने कहा, जा बाहर से पत्थर उठा ला । मैं पत्थर लेकर स्वामी जी के पास पहुंचा,स्वामीजी बोले, इस पत्थर में किस प्रकार की गंध है ?

मैने कहा — कुछ नहीं ।

— तुम इस पत्थर में कैसी सुगंध चाहते हो ?

— मैंने कहा — अष्टगंध, जैसी कि श्रीकृष्ण या महाप्रभु चैतन्य के शरीर से निकलती थी, और जैसा कि ग्रन्थों में उल्लेख है, यह गंध — मृगमद , कपूर, नीलोत्पल, चन्दन , अगरु, तुलसी मंजरी आदि सुगंधित द्रव्यों का सम्मिश्रण थी ।

स्वामी जी ने पत्थर मेरे हाथ से ले लिया, और दो क्षण ऊपर हवा में रख कर मेरे सामने कर दिया उस पत्थर में से एक अद्‌भुत सुगंध निकल रही थी, जैसी कि मैंने इससे पूर्व कभी अनुभव नहीं की थी ।

— क्या यह सुगंध स्थायी रहेगी ?

— हाँ। तुम चाहों तो इस पत्थर को अपने पास रख लो, स्वयं अनुभव कर लेना ।

कई वर्षों तक यह पत्थर मेरे पास रहा । जब- जब भी मैं उस पत्थर को सूंघता, तन्मय हो जाता । एक अनोखे दिव्य लोक में पहुंच जाता । कई बार मानसिक परेशानियों के क्षणों में इस पत्थर को सूंघकर समाधिस्थ हुआ था, अस्तु।

एक दिन आकाशगमन की चर्चा चल पड़ी । स्वामीजी बोले — जो अपने भौतिक शरीर को हवा से हल्का कर आसन से ऊंचा उठ सकता है, वह आकाश गमन भी कर सकता है । योगी के लिए यह कोई असंभव बात नहीं । जब तुम पहली बार इस कुटिया में आये थे, तब तुमने यह व्यापार देखा ही था ।

— गुरुजी ! यह शरीर मध्याकर्षण नियमों से बंधा है, इसी लिए भूमि पर यह स्थित है, फिर — ।

गुरुजी हंसे, बोले — पागल योगियों के लिए यह कुछ भी अगम्य नहीं । शरीर में रज, तम और सत्व तीनों का आविर्भाव है, पर जब मानव - साधना से सत्व की बाहुल्यता शरीर में कर लेता है, तो वह लघुत्व एवं हल्केपन को प्राप्त कर लेता है, जितनी ही देह सत्वगुण से आवेष्टित होगी, उतनी ही वह स्थूलता से परे वायवीय रूप धारण करेगी । यह सत्वाकर्षक प्राणायाम, जप एवं अन्य साधनाओं से संभव है जितनी ही देह की लघुता में वृद्धि होगी, व्यक्ति उतना ही ऊंचा उठ सकेगा । कुंडलिनी शक्ति के प्रबल जागरण से भी यह संभव है।

गुरुजी ! किसी साधक ने कुम्भक के द्वारा भी इस व्यापार का होना बताया था, मैंने अपने पूर्व अनुभव को ध्यान में रखकर जिज्ञासा की ।

स्वामीजी हंसे । कुम्भक से भी यह संभव है । हमारे चतुर्दिक् जो वायुमंडल है, उससे आभ्यन्तरिक वायु कुम्भक प्रयोग द्वारा हल्की कर लेने पर स्वभावतः शरीर हल्का हो कर ऊपर उठ जाता है। पर इसका भी मूलाधार कुंडलिनी ही है क्योंकि मूलाधार में स्थित कुंडलिनी, चिदग्नि के प्रज्वलित होने पर उष्णता से अन्दर की वायु हल्की हो जाती है, तथा उत्थित होने की चेष्टा करती है । शरीर भी उत्थित होता है, पर मात्र देह के उत्थित होने से ही आकाश गमन संभव नहीं है । इसके लिए काफी बड़ी साधना करनी पड़ती है ।

इसके अनन्तर पूज्य गुरुजी ने चिदग्नि प्रज्वलित करने की विधि बताई - और चिदग्नि प्रज्वलित कर किस प्रकार आभ्यन्तरिक वायु को हल्का कर शरीर को लघुत्व दिया जाता है, यह प्रयोग करके दिखाया ।

आगे के जीवन में मैंने इसका अनुभव भी किया । इसके बाद लगभग पांच वर्षों के बाद की बात है,एक बार मेरा छोटा भाई बहुत बीमार पड़ा । बीमारी बढ़ती गई, बचने की उम्मीद कम रह गई । एक रात्रि को वह पेशाब करने के लिए उठा, किसी को जगाया नहीं, उठकर आंगन में जा रहा था कि उसे चक्कर आया, और लड़खड़ाकर गिरते-गिरते संभल - सा गया । जहां वह खड़ा था, उसके पास ही चारा डालने की नुकीली बरछी सी पड़ी थी, यदि वहां वह गिरता तो निश्चय ही उस बरछी पर गिरता, और उसका माथा छिद जाता, पर जब होश आया, तो भाई ने कहा, मुझे किसने सहारा दिया था ?

मैंने कहा — हम तो नींद में थे, तुम्हें कुछ ध्यान रहा ?

भाई ने कहा - एक बाबाजी थे, श्मश्रुयुक्त, लम्बे केश, तेजस्वी मुखमंडल । ज्योंही मैं गिरने लगा, तो उन्होंने मुझे संभाल लिया और वापस होले से इस पलंग पर लिटाया । उन्होंने ये गोलियां भी मुझे दी हैं ।

उसने बंद मुट्ठी खोली, तो सफेद छोटी - छोटी गोलियां उसकी मुट्ठी में थीं ।

— पर इसका प्रयोग कैसे करना है?

— यह तो ज्ञात नहीं । शायद उन्होंने मुझे कुछ कहा भी था, पर बेहोशी की - सी हालत होने के कारण स्मरण नहीं रहा ।

मैं पुलकित हुआ, कि श्री श्री गुरुदेव पधारे थे, और खिन्न भी, कि इस लौकिक देह के लिए पूज्य गुरुदेव को कष्ट उठाना पड़ा। कमरे में पद्मगंध व्याप्त थी, जिससे यह प्रमाणित होता था, कि कुछ समय पहले पूज्य गुरुदेव पधारे थे ।

गोलियों के प्रयोग का विवरण जानना जरुरी था । मैं स्नान कर ध्यानस्थ हुआ । पांच-सात मिनट बाद ही श्री श्री गुरुदेव से टैलीपैथिक सम्पर्क स्थापित हुआ । मैंने कहा - आपको कष्ट हुआ ।

अरे पगले ! तुम सब तो आराम करते हो, और हमे तुम्हारा ध्यान रखना पड़ता है ।

गोलियों के प्रयोग की विधि समझी और तदनुसार गोलियां दीं । आश्चर्य जनक रूप से उसने स्वस्थता प्राप्त की । स्वयं डाक्टरों का दल इस बात पर हैरान था, कि इतनी भयंकर बीमारी इतनी जल्दी ठीक कैसे हो गई? जबकि [illegible] कोई औषधि इतनी जल्दी स्वस्थता नहीं दे सकती थी, अस्तु ।

एक बार कुम्भ के मेले में तिब्बती साधु 'लोगोम्पा' से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था । तिब्बत में आकाश गमन को लोगोम कहते है, और जो इस प्रक्रिया को जानते है, उन्हें लोगोम्पा कहते हैं। विदेशियों ने भी अपनी पुस्तकों में इस अनुभव को लिखा है। डॉक्टर जें०एम० डिस्टिंग ने अपनी तिब्बत यात्रा के दौरान ऐसे ही एक लोगोम्पा से भेंट की थी और अपनी आंखों से आकाश- गमन होते देखा था ।

एक बार पूज्य गुरुजी ने जलगमन -प्रक्रिया समझाई थी, और सामने वाली नदी पर नंगे पांव चल कर दिखाया था । उस प्रक्रिया में भी कुम्भक रेचन करना जरुरी है । मेरे गुरु - भाई स्वामी नित्यानंद ने बाद में अपने वार्तालाप में मुझ से जलगमन प्रक्रिया के बारे में विस्तार से बताया था। स्वामी नित्यानंद पूज्य गुरुदेव के कर्मठ शिष्य हैं, एवं बारह वर्षों तक कठोर एकसान साधना की है । उन्होंने बताया था कि इस साधना के बाद पानी पर चलने पर ऐसा प्रतीत होता है, मानों हम बिछी हुई बर्फ पर चल रहे हों । उन्होंने कुछ समय तक मुझे अभ्यास भी कराया था, पर फिर गुरु-आज्ञा से मुझे गृहस्थ में आना पड़ा । यों यह साधना कठोर अवश्य है, पर जटिल नहीं है । इसके लिए समय, शक्ति एवं साधना की आवश्यकता है ।

गुरुजी का काफी समय तक मुझे साहचर्य मिला । वे सूर्य विज्ञान के अद्भुत ज्ञाता थे । इससे पूर्व इसके बारे में यत्र-तत्र ग्रन्थों में पढ़ चुका था, पर प्रत्यक्ष देखने का अवसर नहीं मिला था ।

सूर्य-विज्ञान का आधार सूर्य - रश्मि-ज्ञान है । इन विभिन्न रश्मियों के संयोगों से विभिन्न पदार्थों का प्रादुर्भाव या जन्म होता है । वस्तुओं की सत्ता की अभिव्यंजक ये ही रश्मियां है, अतः इन रश्मियों का परस्पर संघटन सूर्य- विज्ञान का मूलाधार है ।

सूर्य - रश्मियों में संसार की प्रत्येक वस्तु या पदार्थ के निर्माण या संरचना की शक्ति है।जो योगी इन रश्मियों के परस्पर संबनन का रहस्य समझ जाता है, वह सूर्य - विज्ञान को भी समझ जाता है । सूर्य - विज्ञान पर काफी कुछ जानकारी एवं योग - साधना श्रीमुख से प्राप्त हुई थी, परन्तु वह सब पाठकों के लिए अगम्य होने व गुप्त होने के कारण देना अभीष्ट नहीं समझता ।

एक दिन सूर्य - सिद्धांत पर प्रश्नोत्तर चल रहे थे। मैंने पूछा - गुरुजी ! क्या संसार की सभी वस्तुओं का आविर्भाव इस सिद्धांत के माध्यम से संभव है ?

स्वामीजी ने कहा – इसमें क्या शक है, बोले अभी देखो, और उन्होंने अपने शरीर से ही लेन्स का आविर्भाव किया , और पास पड़े एक काष्ठ-पिंड को उठा लिया, बोले, तुम क्या चाहते हो?

मैंने कहा – स्वामीजी ! क्या इससे ताजा खिला हुआ गुलाब का फूल बनना संभव है?

स्वामीजी बोले नहीं, उन्होंने लेन्स से सूर्य - किरणों का विकिरण उस काष्ठ - खंड पर करना शुरु किया,और लगभग दो मिनट में वह काष्ठ सुन्दर खिले हुए पुष्प में परिणत हो चुका था । इसके बाद स्वामीजी ने उसी गुलाब पुष्प को चमेली में परिणत करके भी बताया।

इसी प्रकार एक दिन चर्चा चलने पर उन्होंने वृक्ष के एक पत्ते पर सूर्य - रश्मियों का विकिरण कर उसे सुन्दर आम के रूप में परिणत कर दिया था, जिसे उनके शिष्यों ने खाया भी था ।

मैंने एक दिन उचित समय देखकर पूछा - क्या गुरुदेव पूर्व जन्म के बारे में विस्तार से जाना जा सकता है, और क्या आगामी जीवन को हम ठीक प्रकार से देख सकते हैं, समझ सकते है ?

बोले – उसमें कठिन क्या है? पूर्व जन्म स्वयं का या किसी का भी जानने के लिए त्रिलोचन साधना करनी चाहिए, इससे किसी भी प्राणी का पूर्व जन्म हूबहू देखा जा सकता है और आगामी जीवन को जानने के लिए निर्वाणी साधना सम्पन्न करनी चाहिए, इससे उस प्राणी को देखते ही उसका आगामी जीवन चक्षुओं के सामने साकार हो उठता है ।

मेरे निवेदन करने पर उन्होंने दोनों ही साधनाएं विधि पूर्वक समझाई सिखाई और प्रत्यक्ष प्रामाणित करके दिखाई।

साधना सम्पन्न होने पर किसी प्राणी को देखते ही उसका पूर्व जन्म और भावी जीवन उसी प्रकार खिंच जाता है , जिस प्रकार से हम सिनेमा के पर्दे पर दृश्य देख रहे हो ।

एक बार गुरुदेव के समक्ष तृतीय नेत्र की चर्चा चली, मैंने निवेदन किया कि मुझे कुछ समय तक तिब्बती साधु लोगोम्पा के साथ भी रहने का मौका मिला है, तीसरे नेत्र के बारे में उसने मुझे काफी कुछ सिखाया भी था ।

गुरुदेव ने कहा – बैचाली साधना से भी तृतीय नेत्र का स्फुटीकरण हो सकता है और जब ऐसा हो जाता है तो फिर उसके लिए भूत , भविष्य, वर्तमान, कालातीत आदि अगम्य नहीं रह पाता और इसके माध्यम से किसी भी व्यक्ति की समपर्कित वस्तु से भी उसके भूत-भविष्य को जाना जा सकता है ।

मेरे आग्रह पर मुझे भाई और नित्यानन्द को यह साधना गुरुदेव ने सिखाई थी ।

कितना अधिक ऋणी हूं मैं पूज्य गुरूदेव का, इसका उल्लेख यह क्षुद्र लेखनी क्या कर सकती है?

गुरुजी की आज्ञा से ही एक दिन मुझे उस आश्रम से भी विदा लेनी पड़ी । मैं किसी भी हालत में उस आश्रम को छोड़ना नहीं चाहता था, और न गृहस्थ जीवन में ही मेरी रुचि रही थी, परन्तु गुरु-आज्ञा के सामने मुझे सिर झुकाना पड़ा । उन्होंने आदेश दिया; तुम गृहस्थ - साधक बनों,मैं सदैव तुम्हारे साथ हूं और उनका यह आदेश ग्रहण कर मैं सीधा घर लौट आया था ।

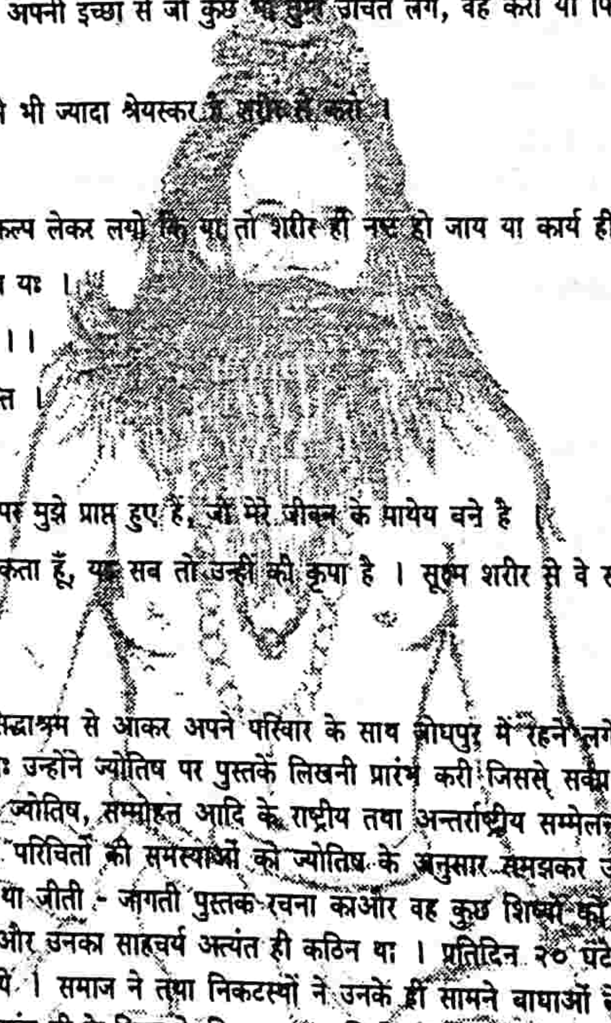
श्री श्री गुरु देव अद्‌भुत साधक, तपोनिष्ठ , योगी एवं शक्तियों के अतुलनीय भंडार थे । सूर्य- विज्ञान एवं क्षण - विज्ञान के वे अद्वितीय मर्मज्ञ थे ।

एक बार काफी समय तक गुरु जी से भेंट न कर सकने के कारण मन में क्षोभ हो रहा था, एक दो बार उनका स्मरण भी किया पर इन्द्रियातीत न हुआ, बेचैनी बढ़ गयी, न भोजन अच्छा लग रहा था न बातचीत , हर समय एक ही इच्छा, एक ही तृष्णा, एक ही विचार मन में घुमड़ता रहता,कि गुरुदेव के दर्शन हों, यदि वे आज्ञा दें तो सिद्धाश्रम चला जाऊ, पर न तो स्वप्न में ही दर्शन होते थे और न कोई निश्चित आज्ञा —

धीरे - धीरे एक दिन यह स्थिति हो गई कि मुझे अपने आप पर ही घृणा हो गई, जब मुझे गुरुदेव मिलना नहीं चाहते तो फिर इस शरीर का प्रयोजन ही क्या है? जीवित रहने से फायदा ही क्या है?

हठात् ऐसा लगा, जैसे गुरुदेव खड़े - खड़े मुस्करा रहे हो, बोले - क्या बात है? इतनी उतावली व्यग्रता क्यों ? संयम रखना सीख —

और उस दिन संयम का जो प्रत्यक्ष पाठ पढ़ाया वह अमिट हो गया है । मेरा प्रयत्न रहता है कि हर गुरु - पूर्णिमा के दिन पूज्य गुरुदेव से मिलू, और यह गुरु जी की कृपा है कि इस दिन वे सशरीर दर्शन दे ही देते हैं, कई वर्षों से यह क्रम है और , प्रत्येक गुरु - पूर्णिमा के दिन वे अवश्य ही कोई विचार, प्रेरणा या ज्ञान देते ही है, उनमें से कुछ निम्न है —



१- कार्य करते रहो कुछ न कुछ करते रहो, अपनी इच्छा से जो कुछ भी तुम्हें उचित लगे, वह करो या फिर मैं जो कुछ भी कहूं उसे करो - पर निरन्तर करते रहो ।

२- गुरु सेवा मन से तो करो ही, पर उससे भी ज्यादा श्रेयस्कर है शरीर से करो ।

३- कार्यं साधये व शरीरं पातये —

अर्थात् साधना में या कार्य में ऐसा दृढ़ संकल्प लेकर लगो कि या तो शरीर ही नष्ट हो जाय या कार्य ही सम्पन्न हो जाय ।

४- यस्मान्नो द्विजते लोके लोकान्नो द्विजते च यः ।

हर्षामर्ष भयो द्वेगैमुक्तों यः स च मे प्रियः ।।

५ - जीवन का सर्वश्रेष्ठ धर्म है सहन शक्ति ।

६- निवृत्त रागस्य गृहं तपोवनं ।

ऐसे सैकड़ों उपोद्घात हैं, जो समय-समय पर मुझे प्राप्त हुए हैं, जो मेरे जीवन के पाथेय बने है ।

आज में अकिंचन गुरु-चरणों में दें क्या सकता हूँ, यह सब तो उन्हीं की कृपा है । सूक्ष्म शरीर से वे स्वयं ही तो हैं, मैं तो केवल निमित्त मात्र हूँ।

'त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये'

गुरु आज्ञा को शिरोधार्य कर नारायण सिद्धाश्रम से आकर अपने परिवार के साथ जोधपुर में रहने लगे । वे शीघ्रातिशीघ्र अपने गुरुदेव की आज्ञा को भी पूरा करना चाहते थे अतः उन्होंने ज्योतिष पर पुस्तकें लिखनी प्रारंभ करी जिससे सर्वप्रथम ज्योतिषज्ञान सर्व सुलभ हो सके साथ ही निरंतर गतिशील रहते हुए विभिन्न ज्योतिष, सम्मोहन आदि के राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की अध्यक्षता करके उन्हें किन्हीं निष्कर्षों तक पहुंचाने का कार्य, आगन्तुकों, परिचितों की समस्याओं को ज्योतिष के अनुसार समझकर उनका निराकरण करना तथा जो कार्य अत्यंत गोपनीय रूप से चल रहा था वह था जीती - जागती पुस्तक रचना काओर वह कुछ शिष्यों को साधना क्षेत्र में अग्रसर कर रहे थे यद्यपि उनकी कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण होना और उनका साहचर्य अत्यंत ही कठिन था । प्रतिदिन २० घंटे से २२ घंटेतक कार्य करते हुए वे गुरु आज्ञा को पूर्ण करने में प्रयासरत हो गये । समाज ने तथा निकटस्थों ने उनके ही सामने बाधाओं के रोड़े, परेशानियों के पत्थर , अड़चनों का बारुद बिछा दिया परंतु स्वामी सच्चिदानंद जी के शिष्य के लिए यह सब स्थितियां महत्वहीन थीं,इसकी ओर उन्होंने कभी विचार ही नहीं किया क्योंकि वे वास्तव में नीलकंठ हैं सारा विष पीते हुए भी दिन भर गृहस्थों का मार्गदर्शन, अपनी साधना पद्धति और फिर रात्रि में सन्यासी शिष्यों का मार्गदर्शन करते रहे साथ ही हिमालय के तांत्रिकों - मांत्रिकों से सम्पर्क उनका भी मार्गदर्शन आदि भी चलता रहा । एक बार भुभूआ बाबा के प्रयत्नों से तांत्रिकों - मांत्रिको-योगियों आदि का सम्मेलन हुआ। यह कुल दस दिन का सम्मेलन था जो कि पिछले पांच हजार वर्षों में पहली एक ऐसी घटना था। इसके लिए वहुत रो योगियों आदि ने प्रयास किया था इसमें प्रवेश की आवश्यक शर्त थी कि तांत्रिक को कम से कम एक महाविद्या सिध्द हो । सम्मेलन के दिन मात्र उन्हीं तांत्रिकों आदि को प्रवेश दिया जा रहा था जिनके पास अनुमति पत्र थे । सम्मेलन के संयोजक स्वामी अभयानंद चिंतित थे कि सभी भाग लेने वाले अति विशिष्ट है यदि कुछ अनहोनी हो गई तो क्या होगा ! फिर भी सम्मेलन में शिव के गणों की तरह ही ४०० तांत्रिक - मांत्रिक एकत्रित हुए थे जिनमें बीस भैरवियां भी थीं ।

सम्मेलन में सभी हर्षित थे क्योंकि मां कृपाली भैरवी, देवुल भैरवी , आनंदा भैरवी, पगला बाबा,देवहुर बाबा, कृपालु स्वामी, बाबा भैरवनाथ, विरथ स्वामी, त्रिजटा अघोरी, खर्परानंद भारती, स्वामी गिरजानंद आदि भी उपस्थित थे ।

सम्मेलन के प्रारंभ में भूर्भूआ बाबा ने तांत्रिकों, मांत्रिकों, साधकों और योगियों का आह्वान किया कि वे जनसाधरण से अपने आपको सम्पर्कित करें और अपने ज्ञान को इस प्रकार से समाज में वितरित करें जिससे कि सामान्य साधक भी लाभ उठा सके, साथ ही उन्होंने अध्यक्ष

के चयन हेतु सभी को आमंत्रित किया । उन्होंने वताया कि ऐसे सभापति का चयन हो जिसकी गति सभी प्रकार की विद्याओं में समान हो और उन्होंने स्पष्ट किया कि यहां 'वृद्धोऽपि न वृद्धःज्ञान वृद्धोऽपि वृद्धः'! अतः उसकी देहगत आयु कोई वाधक नहीं है । इसके साथ उनके वैठते ही किसी ने सभापति हेतु उन्हीं के नाम का अनुमोदन किया जिस पर मांत्रिको ने विरोध किया और भूर्भुआ वावा ने स्वयं यह स्वीकार कर लिया । स्वामी कृपाचार्य ने मां कृपालु भैरवी का नाम रखा जिस पर त्रिजटा अघोरी ने कहा कि वह केवल भैरवी है और यदि मेरे चैलेंज को स्वीकार करे तो मैं उन्हें अध्यक्ष मान सकता हूँ, पर मां भैरवी ने चैलेंज स्वीकार नहीं किया कुछ साधकों ने पगला वावा से निवेदन किया, पर उन्होंने कहा कि मैंने वाम मार्गी साधनाओं का अभ्यास नहीं किया है । कुछ अन्य नामों पर चर्चा हुई । प्रेत वावा का नाम सुझाया परंतु धूर्जटा अघोरी ने उन्हें चुनौती दे दी कि यदि हठयोगी प्रेत वावा उसकी संहारिणी कृत्या का प्रहार झेल जाएं तो वह सभापति वन सकते हैं ।

इसी प्रकार दोपहर लगभग एक वजे तक चलता रहा और अहं की , साधनाओं की टकराहट होती रही और कोई निष्कर्ष नहीं निकला, इस सबसे ऐसा लगता था कि यह सम्मेलन शायद ही पार पड़े । मध्याह्न विश्राम के वाद लगभग चार वजे सायंकालीन वैठक प्रारंभ हुई । भुर्भूआ वावा ने निवेदन किया कि अध्यक्ष का चयन शीघ्र ही किया जाए जिससे आगे की गतिविधि प्रारंभ हो सके । भुर्भूआ यह वोलकर बैठे ही थे कि कई लोग एक साथ उठ खड़े हुए और कई नामो की चर्चा होनी लगी, हो-हल्ला इतना अधिक हो रहा था कि कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा था । ऐसे में त्रिजटा अघोरी खड़े हुए और जोरो से हुंकार दी एकदम से पूरी सभा में सन्नाटा छा गया । उन्होंने कहा कि इस प्रकार समय व्यर्थ में नष्ट हो रहा है, भुर्भूआ वावा के इस कथन से सहमत मैं हूँ कि किसी ऐसे सभापति का चयन हो जो सभी क्षेत्रों में निष्णात हो ।

मैं श्रीमाली का नाम सभापति के लिए प्रस्तुत कर रहा हूँ मेरी राय में इस सम्मेलन के सभापति के रूप में उनको सर्वसम्मति से चयन किया जाएगा ।

त्रिजटा के वैठते ही इतना कोलाहल होने लगा कि कुछ भी समझ नहीं आ रहा था किसी ने भी श्रीमाली को देखा, या उसका नाम तक कभी भी सुना नहीं था । भुर्भूआ वावा ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा कि मैं व्यक्तिगत रूप से श्रीमाली जी से परिचित हूँ मैं मानता हूँ कि वे ही इस पद के लिए सर्वथा योग्य हैं । एकदम से त्रिजटा ने अपने पास बैठे एक व्यक्ति को खड़ा कर दिया । सभी एकदम से उस ओर देखने लगे कोई भी विश्वास ही नहीं कर पा रहा था कि यह साधारण सा गृहस्थ दिखने वाला व्यक्ति कहीं से भी किसी प्रकार भी इतना वड़ा सिद्ध नहीं लग रहा था ।

उन्नत ललाट, समुद्रवत वक्ष, लम्बा और ऊंचा कद, छोटी पर पैनी आंखे, चेहरे पर पूर्ण आत्मविश्वास , शरीर पर धोती, कुर्ता और करीने से वाल संवारे हुए यह व्यक्ति किसी भी प्रकार समस्त क्षेत्रों में निष्णात होगा ऐसा नहीं लगा रहा था । तभी मै रूआ अघोरी ने खड़ा होकर विरोध करते हुए कहा कि यदि यह अघोर प्रहार झेल लेगा तो मैं इसे सभापति मान लूंगा, उनकी वात पूरी भी नहीं हुई थी कि कपाली वावा ने खड़े होकर गालियों की वौछार प्रारंभ की और कहा मेरे जीते जी कोई और सभापति नहीं वन सकता मैंने चौसठ कृत्याएं सिद्ध की है और मैं इसको खड़े-खड़े ही राख कर दूंगा उसके मुंह से अनवरत गालियो की बौछार हो रही थी, चारों ओर सन्नाटा छा गया था ।

त्रिजटा उठ खड़े हुए क्रोध से उनका चेहरा तमतमाया हुआ था उन्होंने कपाली वावा और भैरुआ अघोरी का चैलेंज स्वीकार किया और कहा कि श्रीमाली इसका समुचित उत्तर देगा क्योंकि मुझे यह भी पता है कि वे विश्वविख्यात योगीराज सच्चिदानंद जी के प्रिय शिष्य हैं साथ ही निखिलेश्वरानंद के रूप में उन्होंने सभी कृत्याएं सिद्ध की हैं और इस नाम से पूरा हिमालय परिचित है इन्होंने गृहस्थ में जाने पर अपना नाम वदला है ।

स्वामी नवरात्र्यानंद जी को ध्यान हो आया गुरु पूर्णिमा का वह दिन और एक - एक दृश्य आंखों के सामने कौंध उठा, सारा शरीर पुलकित रोमांचित हो उठा ।

वाराणसी का प्रसिद्ध दशाश्वमेघ घाट, जगह - जगह चिताएं जल रही हैं, चड़ड -चड़ड की आवाजों के साथ मृत मानवों के चर्म मांस मज्जा जलकर वातावरण को एक अजीव गंध से भर देता हैं, घाट के किनारे ही डोम का घर और उसके पास ही छोटी सी बगीची — जहां से पूरा श्मशान घाट और जलती हुई चिंताएं साफ- साफ दिखाई दे रही हैं ।

पिछले दो महीनों से मैं हिडिम्बा साधना कर रहा था, मेरे साथ थे योगी निखिलेश्वरान्द ———— फक्कड़ ——— मस्त —— निर्द्वन्द्व निस्पृह ——— कोई माया मोह ममता नहीं—— न काया की चिन्ता और न माया की परवाह ——— अद्भुत व्यक्तित्व से सम्पन्न ——— पैरों में खड़ाऊं कटि पर धोती, शरीर का ऊपरी भाग अनावृत्त —— कोई वस्त्र नहीं,लम्बी जटाएं ——— दैदीप्यमान चेहरा दिपु-दिपु करती हुए ज्वलित आंखें ———— कुल मिलाकर पूरा व्यक्तित्व एक अपूर्व चुम्बकीय शक्ति से आवृत्त ——— जो एक बार देखता——— उसे वात करने की इच्छा अवश्य होती——— कई साधु योगी —— तांत्रिक शिष्य बनने को आतुर ——— पर यह फक्कड़ व्यक्तित्व किसी से बंधने को तैयार नहीं था, न शिष्यों से घिरना चाहता था ——— न लोगों से मिलना । अकेला ——— एकान्त प्रिय ———साधना में लीन —— तल्लीन —— कठोर —— से कठोर साधना करने को तैयार ——— पिछले कुछ महीनों से अघोर साधना में रत था ——— श्मशान साधना

—— चिता साधना —— शव साधना —— अघोरियों के बीच साधना में रत —— कोई हिचकिचाहट नहीं —— मैं दो महीनों से साथ था —— पर उदासीन, निस्पृह निर्मोह —— कभी संभव हुआ तो दो चार मिनट बोल लिया, कभी वह भी नहीं — मैं जितना ही ज्यादा इस व्यक्तित्व को समझने की कोशिश करता,उतना ही उलझता जाता ।

दशाश्वमेघ घाट पर आये छः दिन हो गये थे, आज सातवां दिन था, सारी रात श्मशान में साधना रत । यहीं अघोरी पाशुपतनाथ से भेंट होनी थी, ऐसी सम्भावना थी, ऐसा ही आभास हुआ था ।

इन दिनों स्वामी निखिलेश्वरानन्द कृत्या साधना में रत था, कठिन, कठोर साधना, जरा भी चूक हुई तो प्राण समाप्त —— भगवान शंकर की कृत्या को रिझाना, अनुकूल करना क्या कोई मामूली साधना हो सकती है ?

तभी उस सांझ के धुंधलके में श्मशान घाट की तरफ से एक अघोरी आता हुआ दिखाई दिया, पास आने पर ही उसे साफ-साफ देखा जाना संभव हो सका, मैला, गंदा, लम्बी उलझी हुई जटाएं , चेहरा गंदला सा धंसी हुई पीली आंखें, हाथ में एक खप्पर, लम्बे-लम्बे मैले गंदगी भरे नाखून, और सारा शरीर बदबू से आवृत्त देख कर घिन आ रही थी, हवा के साथ-साथ बदबू का झोंका सारे सिर को झनझना गया, ऐसी बदबू तो जलते हुए मुर्दे से भी नहीं आ रही थी, गंदगी का साक्षात जीवन्त रूप ।

वह आकर बैठ गया हाथ में खप्पर ——— खप्पर में कुछ खाद्य पदार्थ सा —— हाथों से पीब सी निकल रही थी, और वह उन्हीं हाथों से खाद्य पादार्थ लेकर मुंह में डालता —— उफ् !

बोला – स्वामी ! ले भूख लगी तो आ खा ले, संकेत निखिलेश्वरानन्द की तरफ था, मैं तो मरने पर भी उन पीब भरे हाथों से कुछ भी खाद्य खाने को तैयार नहीं हो पाता, मुझे कहता तो मैं खप्पर ही उसके सिर पर दे मारता ।

निखिलेश्वरानन्द ने उसकी तरफ देखा, गंदगी का भभका सा उठा, और नथुनों के माध्यम से चढ़ कर पूरे सिर को झनझना दिया, मैंने सोचा अब इस अघोरी की मौत आई है,निखिलेश्वरानन्द का गुस्सा तो प्रसिद्ध है, और यह उसे ही खाने को आमन्त्रित कर रहा है ।

पर आश्चर्य ——— निखिलेश्वरानन्द उठा, और उस अघोरी से सट कर बैठ गया, अघोरी ने उन पीब भरे हाथों से लड्डू का छोटा सा टुकड़ा खप्पर से निकाला, और आगे बढ़ाया,निखिलेश्वरानन्द ने लड्डू को उसके हाथों से ही मुंह में ले लिया, उफ् —— गंदा —— घृणित— दुर्गन्ध पूर्ण ।

पर यह क्या , दूसरे ही क्षण सामने पीब भरा अघोरी अदृश्य था, और खड़े थे, साक्षात् शंकर, भगवान विश्वनाथ और निखिलेश्वरानन्द उनके चरणों के पास बैठे थे, उनके सिर पर था, काशी के बाबा विश्वनाथ का महत्वपूर्ण वरद हस्त ।

पर दूसरे ही क्षण बाबा विश्वनाथ अदृश्य थे, और निखिलेश्वरानन्द की समाधि लगी हुई थी । ऐसा लग रहा था जैसे कल की ही घटना हो – फिर ऐसे स्वामी निखिलेश्वरानन्द के समक्ष कौन खड़ा हो सकता था।

भूर्भुआ बाबा ने श्रीमाली जी को मंच पर लाकर खड़ा कर दिया । इस बीच अघोरियों , तांत्रिकों,मांत्रिकों, योगियों में चर्चा थी कि श्रीमाली जी ही पूर्व के स्वामी निखिलेश्वरानंद हैं तो फिर इनसे कोई क्या कह सकता है इसलिए बहुत से साधक शांत होकर बैठ गये। मां कृपाली भैरवी ने तो यहां तक कह दिया कि इस सभा में अब इनसे बढ़कर कोई नहीं है । उनका सामना जो भी करेगा वह व्यर्थ में अपना अपमान करायेगा ।

अघोरियों, तांत्रिकों ने एक स्वर में कहा हमारी ओर से कपाली बाबा नियत हैं और सभापति का चयन दोनों के बीच ही होना है।

कपाली बाबा अपने स्थान पर उठ खड़े हुए, बोले यह बच्चा है, इसलिए इसीको अधिकार देता हूँ, कि पहले प्रयोग कर ले क्योंकि मेरे प्रयोग के बाद तो इसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा ।

श्रीमाली जी ने पहली बार बोलतें हुए कहा - कपाली बाबा मेरे लिए आदरणीय हैं, परंतु उनमें जो व्यर्थ का घमंड है, अहं है उसे वे त्याग दें तो अच्छा रहेगा, साथ ही मुस्कराते हुए उन्होंने कहा कि कपाली बाबा भ्रम में न रहें वही नहीं मैं सभी तांत्रिकों, मांत्रिकों की चुनौतियों को एक साथ स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ और अस्तित्व मिटने की बात तो अलग मेरा कुछ भी नहीं बिगड़ेगा मुझे सभापति पद की इच्छा नहीं है परंतु आप में जो व्यर्थ अहं है उस चुनौती को स्वीकार करने के लिए मैं मंच पर उपस्थित हूँ । श्रीमाली जी के चेहरे पर आत्मविश्वास ,सरलता तथा शान्ति थी वहीं कपाली बाबा क्रोध और उग्र हो रहे थे दोनों में कोई तुलना हो ही नहीं पा रही थी । तभी श्रीमाली जी ने कपाली बाबा को चैलेंज दिया आपको अहं है कि मैं आप के प्रयोग से समाप्त हो जाऊंगा तो पहले आप ही प्रयोग करके देख लें और यह भी मैं आपको स्पष्ट कर देना चाहता हूँ जो भी ऊंचे से ऊंचा संहारक अस्त्र हो उसका प्रयोग कर लें जिससे कि आपके मन में मलाल न रहे।

इतना सुनते ही कपाली बाबा ने अपने दायें हाथ में शून्य से कुछ सरसों के दाने प्राप्त किये और संहारिणी कृत्या प्रयोग प्रारंभ कर दिया जिसका सामना करना बड़े से बड़े तांत्रिक के वश की बात नहीं होती । तभी जोरों की हुंकार के साथ लाल सुर्ख कपाली बाबा ने वह

दाने श्रीमाली जी की ओर उछाल दिये सभी ने देखा कि श्रीमाली जी कुछ डगमगाये और लड़खड़ा कर तीन-चार कदम पीछे हटे पर फिर अपने स्थान पर आकर खड़े हो गए उतने ही सरल एवं सहज भाव से । कपाली बाबा का चेहरा सफेद पड़ गया था किसी को यह आभास नहीं था कि श्रीमाली जी के पास इस कृत्याको समाप्त करने की विधि भी है । कपाली बाबा की आंखों में भय था ।

श्रीमाली जी शांत थे उन्होंने कहा कि मैं आपकी उम्र को देखते हुए आपका सम्मान करता हूँ परन्तु साधना -सिद्धि के क्षेत्र में आप अभी बहुत कमजोर है, मैं आपको एक और अवसर देता हूँ क्योंकि अभी भी मैं आपके सामने उपस्थित हूँ , आप के पास जो कोई भी बड़ी से बड़ी शक्ति हो उसका प्रयोग कर लीजिए ।

माँ कृपाली भैरवी ने खड़े होकर कहा कि कपाली बाबा ने मानवता से हटकर यह प्रयोग किया परंतु फिर भी श्रीमाली जी कि सौजन्यता है कि वह एक और अवसर दे रहे हैं परंतु जो भी परास्त होगा उसको दूसरे का शिष्यत्व स्वीकार करना होगा । अधिकतर तांत्रिकों ने उनकी बात का अनुमोदन किया । इससे कपाली बाबा कुछ विचलित हुए पर फिर तनकर खड़े हो गये और अपनी जंघा से मांस उधेड़ कर उसमें से एक सफेद गोली निकाली और अपने दाहिने हाथ की हथेली पर रखकर कहा - श्रीमाली ! यह तुम्हारे लिए अन्तिम अवसर है । इस बार तुम्हारी मृत्यु निश्चित है ।

श्रीमाली जी अविचलित भाव से मुट्ठियां बांधे खड़े-खड़े होठों में ही कुछ मंत्र बुदबुदा रहे थे ।

कपाली बाबा इस बार सारी शक्ति लगाकर विध्वंस प्रयोग कर रहे थे जिसमें बावन भैरव और,चौसठ योगिनियों की संहारक तथा विध्वंसक शक्ति का प्रयोग होता है । निरंतर मंत्र जप से उनकी हथेली के नीचे से रक्त की बूंदे टपकने लगीं थीं और अचानक उन्होंने गोली को श्रीमाली जी की ओर उछाल दिया ।

श्रीमाली जी थोड़ा सा लड़खड़ाए और एक सेंकड मात्र के लिए मंच पर बैठे परंतु दूसरे ही क्षण उठ कर खड़े हो गये और आंखें खोल दी, इस बार उनके चेहरे पर क्रोध की मात्रा जरुरत से ज्यादा थी, आंखों में ललाई और पूरा शरीर अंगारे की तरह हो गया था ।

सभी तांत्रिकों में भयमिश्रित हर्ष की एक लहर थी, सभी आश्चर्य चकित थे कि यह साधारण सा दिखने वाला व्यक्ति इतना दिव्य हो सकता है । त्रिजटा ने दौड़ कर मंच पर जाकर श्रीमाली जी को कंधे पर उठा लिया था। इधर कपाली बाबा की आंखों में याचना थी, कमजोरी थी ।

श्रीमाली जी ने कहा - कपाली बाबा! प्रत्येक साधना के कुछ नियम होते हैं, कोई भी साधक उन नियमों से आगे नहीं जाता। भीषणतम शत्रु पर भी ऐसा प्रयोग नहीं करते क्योंकि यह तांत्रिक मान्यताओं के विपरीत है तथा मानवता के विरुद्ध है ! यही प्रयोग यदि पहाड़ पर भी करते तो उसका अस्तित्व भी समाप्त हो जाता । अब मैं तुमको भी छोडूंगा नहीं, पर मानवता के साथ हो सके तो संभल जाना, यदि तुमने इस प्रयोग को झेल लिया तो मैं परास्त हो जाऊंगा यह कहते-कहते उनकी मुख मुद्रा कठोर हो गई थी चेहरा लाल सुर्ख था, आंखों से ज्वाला सी निकल रही थी,उन्होंने हवा में हाथ लहराया और नीचे लाकर तन कर सामने की ओर मुट्ठी खोली, ऐसा लगा जैसे कि कोई वस्तु सामने की ओर उछाली हो ।

एक ही क्षण में कपाली बाबा धरती पर गिर गये उनके मुख से रक्तपात होने लगा । ऐसा लग रहा था यदि तीन- चार मिनट उपाय नहीं किया गया तो कपाली बाबा नहीं रहेंगे । सभी उन्हें घेर कर खड़े हो गये ।

तभी श्रीमाली जी की आवाज गूंजी - सभी अपने -अपने स्थानों पर बैठ जाएं अन्यथा उनकी भी यही स्थिति होगी । यदि कपाली बाबा क्षमा मांग ले तो मैं उन्हें दयाकर जीवन दान दे सकता हूँ।

तांत्रिक , अघोरी आदि भयाक्रांत होकर बैठ गये । तब तक श्रीमाली जी कपाली बाबा के पास आ गये थे । कपाली बाबा ने हाथ जोड़ कर माफी मांगी, श्रीमाली जी ने शून्य से कोई बारीकसी वस्तु प्राप्त कर कपाली बाबा पर डाली और फिर कुछ देर में वह चैतन्य हो गये ।

मंच पर आकर कपाली बाबा ने क्षीण स्वर में अपनी पराजय स्वीकार की और शिष्यत्व के लिए आग्रह किया ।

श्रीमाली जी ने प्रतीक रूप कपाली बाबा के सामने वाले कुछ बाल उखाड़ते हुए शिष्यत्व प्रदान किया ।सारी सभा में प्रसन्नता और हर्ष था भूर्भुआ बाबा ने श्रीमाली जी को बांहों में भर लिया और उनके नेत्र अश्रुपूरित हो गए।

सभी ने एक स्वर में स्वीकार किया कि साधना, सिद्धियों के क्षेत्र में श्रीमाली जी अद्वितीय हैं और यह सभी का सौभाग्य है कि सभा में वह उपस्थित हैं । श्रीमाली जी के सभापतित्व में सम्मेलन पूरी तरह से सफल रहा और इसके बाद श्रीमाली जी लौटकर जोधपुर आ गये और उसी सामान्य तरीके से सरल, निश्छल जीवन व्यतीत करने लगे।

वास्तव में इस तांत्रिक सम्मेलन की विशिष्ट उपलब्धि यह थी कि त्रिजटा अघोरी की कृपा से इस रहस्य का पर्दाफाश हो सका कि

डा० नारायणदत्त श्रीमाली जी ही विश्ववंद्य स्वामीसच्चिदानंद जी के प्रिय शिष्य स्वामी निखिलेश्वरानंद हैं क्योंकि श्रीमाली जी तो कुछ भी स्पष्ट नहीं होने देते, षोडश कला सम्पूर्ण होते हुए भी इस प्रकार से अपने चारों ओर माया फैलाये रहते हैं कि कोई भी समझ ही नहीं पाता कि यह सरल, साधारण गृहस्थ है या पूर्णेश्वर ।

स्वामी निखिलेश्वरानंद ने पूरे हिमालय को अपने कदमों से नापा था । उन्होंने ही सारे तांत्रिकों ,मांत्रिकों , साधुओं, योगियों, अघोरियों, को एक मंच पर लाकर खड़ा किया था उन्होंने सन्यासियों को सिद्धाश्रम प्रवेश दिलवाने के लिए दिव्याश्रम की स्थापना की, गन्धमादन पर्वत के पास भद्रशीला नदी से लगे हुए इस आश्रम में उन्हें साधना के उच्च धरातल पर पहुंचा कर सिद्धाश्रम में प्रवेश दिला देते थे, उन्होंने विशिष्ट तांत्रिक पीठों की स्थापना की और व्यवस्था हेतु वहां गोरखनाथ नियुक्त किये । सिद्धाश्रम प्रवेश अत्यंत दुष्कर था परंतु सिद्धाश्रम द्वार पर शत अष्टोत्तर मुंडी सिद्ध पीठ की स्थापना कर सिद्धाश्रम प्रवेश सभी के लिए सरल, सहज कर दिया ।

स्वामी निखिलेश्वरानंद जी के विषय में कुछ भी कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है । एक बार एक शिष्य ने बताया था — स्वामी निखिलेश्वरानंद जी जहां अत्यधिक कठोर रहे हैं वहीं अत्यंत सरल हृदय भी एक बार टिहरी के पास उन्होंने चार महीने ठहरने का निश्चय किया था, शहर के पास में ही एक सुन्दर सा शिव मन्दिर था, उसी में रहने का स्थान बना लिया था, और उनका निश्चय था, कि यहां पर इस खंडहर से टूटे हुए शिव मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया जाये, साथ ही साथ वे कोई विशेष साधना भी सम्पन्न करना चाहते थे और मेरी सेवाओं से प्रसन्न होकर उनकी यह भी इच्छा थी, कि मुझे भी कोई साधना सम्पन्न करने को दी जाय जो कि सभी दृष्टियों से अनुकूल रहे।

वहां ठहरने के १०-१५ दिन के बाद की ही बात है, एक अघोरी मन्दिर के अन्दर आकर बैठ गया,उसका सारा शरीर तेल और गन्दगी, मैल और चिकट से भरा हुआ था, जिसकी वजह से उस पर मक्खियां भिनभिना रहीं थी, और शरीर से दुर्गन्ध सी आ रही थी, मैंने उस अघोरी को वहा से चले जाने के लिए कहा परन्तु वह अपनी साधना के मद में डूबा हुआ था, इसलिए अवज्ञा से हंस दिया ।

दूसरे तीसरे दिन तो गजब ही हो गया जब उसने शिवलिंग उखाड़ कर मन्दिर के बाहर ले जा कर रख दिया, यद्यपि दो तीन दिन से स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी चिढ़े हुए से थे, परन्तु आज की इस घटना से वे अत्यधिक क्रोधित हो गये परन्तु फिर भी अपने आपको संयमित बनाये रखा ।

हमारे देखते-देखते उसने मन्त्र बल से सामने के चार पेड़ जला डाले, ये पेड़ हरे भरे, घने और छायादार थे, परन्तु पांच मिनट में ही उनको जलाकर फूंक डाला, मारक प्रयोगों पर बह सिद्धहस्त अघोरी था, और रात्रि को नित्य श्मशान जागरण क्रिया में संलग्न रहता था, जिसकी वजह से बहुत ही अधिक आवाज, शोर और व्यतिपात होता और हमारी साधना में व्यवधान होता रहता, मैंने और स्वामी जी ने चार-पांच बार समझाया भी परन्तु उसने कोई ध्यान नही दिया ।

और चाहे कुछ भी हो स्वामी जी अपने शिष्य की पूरी-पूरी रक्षा करते है, और उसके सम्मान का पूरा पालन करते हैं, उन्होंने यह देखकर अघोरी को डांटा मगर इससे अघोरी और चिड़ गया और उसने मुझ पर मारण प्रयोग कर दिया, फलस्वरूप मेरे मुंह से खून गिरने लगा और अपने आप में कमजोरी सी अनुभव करने लगा ।

मैंने देखा कि स्वामी जी का चेहरा लाल सुर्ख हो गया है और उन्होंने एक क्षण में निर्णय ले लिया, मेरे ऊपर किये गये मारण प्रयोग को तो दूर किया ही पलट कर उस अघोरी पर ऐसा तीव्र मारण प्रयोग किया कि वह जमीन पर गिर कर धूल चाटने लगा, आंखें पथरा गई और सारा शरीर नीला पड़ने लगा, हम सब के बहुत अधिक अनुनय विनय करने पर ही स्वामी जी का क्रोध शांत हुआ और उस अघोरी को जीवन दान मिला ।

एक तरफ तो इतना अमोघ और कठोर वक्षस्थल और दूसरी ओर उनके जीवन की एक छोटी सी घटना और —

उसी मन्दिर में एक चिड़िया ने घौंसले में अंडे दिये थे, कुछ दिन बाद अंडों में से बच्चे बाहर निकल आये और इधर-उधर फुदकने लगे, स्वामी जी उनको दान-पानी आदि की व्यवस्था करते और ठीक उसी प्रकार पालन - पोषण करते, जिस प्रकार कोई मां अपने बच्चे का पालन पोषण करती है ।

एक दिन कुछ ऊंचाई से चिड़िया का एक बच्चा गिर गया, और तड़फने लगा, स्वामी जी साधना रत थे, उन्होंने उसी समय मन्त्र जप को छोड़ दिया, माला एक तरफ रख दी और चिड़ियां के बच्चे को उठा लिया, उनकी आंखों में आंसू छलछला आये, आगे के पांच दिन वे बड़े ही उदास, खिन्न और चिन्तित रहे, इन पांच दिनों में एक बार भी मन्त्र जप नहीं किया अपितु पूरा समय बच्चे की देख रेख और परवरिश में ही बिता दिया, इन पांच दिनों में उन्होंने खाना भी नहीं खाया, इतना उदात्त , इतना ममत्व तो मां को भी अपने बच्चे के प्रति नहीं होता।

एक सप्ताह बाद जब चिड़िया के बच्चे की टांग ठीक हुई और अपने पंखों से उड़ान भरी, तभी स्वामी जी ने राहत की सांस ली और अपनी साधना में लगे ।

निखिल रहस्यम्

त्वहं प्रेमत्रूपं परम मधुर श्रेय इति च न सक्यत्वं ज्ञान श्रिय प्रिय इति वैं श्रियमहो।
त्व संसर्ग देह भवत परमोच्च सुख वदै द्वै किन्नं स्वर्ग त्वं सुर वदन प्या तृप्त इति नः ॥

हे, गुरूदेव ! सिद्धाश्रम के योगियों ने आप को "प्रेमपय" शब्द से सम्बोधित किया है, वह वास्तव में ही सत्य हैं, क्योंकि आपका सारा शरीर प्रेममय है, आपने अपने जीवन में प्रेम को ही बांटा है, और पृथ्वी को ज्यादा प्रसन्न, ज्यादा आनन्दयुक्त बनाने का प्रयास किया है, जब हम उच्चकोटि के सन्यासी आपके विशुद्ध और निश्छल प्रेम को भली भांति नहीं समझ सकते, तो सामान्य सांसारिक व्यक्ति यदि उस प्रेम को वासना, या तुच्छता समझ ले, तो इसमें उनका क्या दोष, क्योंकि जो स्वयं जैसा होता है, दूसरों को भी वैसा ही समझता है, आप द्वारा प्रेम पाना और आपकी सामीप्यता प्राप्त हो जाना तो कई-कई जीवन का सौभाग्य है, वास्तव में वे ही धन्य हैं, सिद्धाश्रम और देवलोक की अप्सराएं, किन्नरियां, गर्न्धव, और स्वयं ऋषि आपके शरीर का स्पर्श, सामीप्यता, साहचर्य और संसर्ग-सुख प्राप्त करने के लिए अभिलषित रहते हैं, तो फिर सामान्य सांसारिक व्यक्ति ऐसा चिन्तन रखें, तो इसमें आश्चर्य क्या ? ॥

न सक्यत्त्वं ज्ञानं न च विधुर प्रेम श्रिय महो न ज्ञानत्वं रूपं नहि वदति पार्थक्य श्रियते।
परं सौभाग्यं वै सहत सहचर्य विधुरवै दिवं देहं नित्यं भव मधुर स्वर्ग मह सहौ।।

हे, गुरूदेव ! मुझे आश्चर्य तो तब होता है, जब आपके साथ रहकर भी ये योगीजन आपकी गहराई और सूक्ष्मता को नहीं समझ पाते, वे निरन्तर आपके पदचिन्हों पर चल कर भी आपकी पूर्णता को अनुभव नहीं कर पाते, वे तभी ऐसा अनुभव कर सकते हैं, जब तत्व ज्ञान से अनुप्रेरित हों, एक सामान्य मनुष्य पूरे समुद्र को नहीं नाप सकता, एक सामान्य पक्षी पूरे नभमण्डल में विचरण नहीं कर सकता, ठीक उसी प्रकार एक सामान्य सन्यासी या योगी आपकी गहराई या आपकी उच्चता को नहीं परख सकता, इसके लिए तो उसे कई-कई जन्म लेना पड़ेगा, तब जाकर वह आपके ज्ञान और चिन्तन का कुछ हिस्सा समझ सकेगा, वास्तव में ही व नर-नारी सौभाग्यशाली हैं, जिन्हें आपकी समीपता और आपका साहचर्य प्राप्त है, वास्तव में वे ही लोग संसार में सर्वाधिक भाग्यशाली हैं, जो आपकी सेवा में रत हैं, या आपने उनकी सेवा स्वीकार की है ॥

एक तरफ तो इतना कठोर हृदय और दूसरी ओर इतना अधिक संवेदनशील ममत्व भरा व्यक्तित्व ।

परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी को मैं अत्यन्त निकट से जानता हूँ । सदियों में एकाध व्यक्तित्व ही ऐसा होता है, जिसके बारे में कुछ कहा जा सकता है जिसके बारे में लिखने से आनन्द की अनुभूति हो सकती है, जिसके पास बैठने से कुछ ऐसा एहसास होता है कि हम इस व्यक्तित्व से कुछ प्राप्त कर रहे हैं और ऐसे ही व्यक्तित्व के धनी हैं, स्वामी निखेलेश्वरानंद जी ।

परन्तु इनकी न्यूनता यह है कि इन्होंने अपने आपको प्रचार प्रसार में बहुत दूर रखा है,अपने आपको विज्ञापित करना या प्रचार पाने की कोशिश करना इनके स्वभाव में ही नहीं है। उच्चकोटि के सन्यासी - सम्मेलनों में जब इन्हें अध्यक्ष पद के लिए आमंत्रित किया जाता था तो ये अत्यन्त विनम्रता पूर्वक मना कर एक तरफ हट जाते थे, अगर इनकी जगह कोई दूसरा व्यक्ति होता और जो ज्ञान इनके पास है, जितनी शक्ति और सामर्थ्य इनके पास है, उसका सौवा हिस्सा भी यदि किसी के पास होता तो वह चीख-चीख कर अपने बारे में बताता रहता, पूरी दुनिया उसके चारो तरफ घेरा डाले रहती , परन्तु इस व्यक्ति में ऐसा कुछ भी नहीं है, या मैं यूं कहूं कि यह व्यक्ति प्रचार -भीरु है तो ज्यादा सही होगा ।

जो दर्प जो विशालता जो प्रखरता और जो प्रचंडता इनके सन्यासी जीवन में मैंने देखी ,जो त्यागवृत्ति और निष्पहता मैंने सन्यास जीवन में इनके प्रति अनुभव की हैं वह अपने आपमें एक मिसाल है, सैकड़ों - सैकड़ों सन्यासी शिष्य आतुर रहे है इनका शिष्यत्व प्राप्त करने के लिए हजारों योगी और सन्यासी व्यग्र रहे हैं, इनके पास कुछ क्षण बैठने के लिए, इनसे कुछ सीखने के लिए और इनसे बहुत कुछ प्राप्त करने के लिए, और इन्होंने सभी को बहुत कुछ देने का प्रयास किया, इनके द्वार हमेशा सब के लिए खुले रहे , न किसी प्रकार का व्यस्तता का भाव रखा और न व्यर्थ का अहंकार, इसीलिए आज हिमालय के हजारों - हजारों सन्यासी परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी का नाम स्मरण करते ही श्रद्धा से झुक जाते हैं, फिर भले ही उन्होंने इस विराट व्यक्तित्व को देखा हो या नहीं, परन्तु हिमालय के कण-कण में उनका व्यक्तित्व गुंजरित है, और उन्होंने हिमालय को पूरे भारतवर्ष से परिचित कराने में जो योगदान दिया है, साधना की पूर्णता के लिए जो प्रयत्न किया है उसकी अपने आपमें कोई मिसाल नहीं है ।

महामुनि भृगु महाराज से तो सभी परिचित हैं उन्होंने बताया —

मैंने उसे कई-कई रूप में देखा है कठिन साधनाओं के द्वारा सफलता प्राप्त करते हुए विचलित साधकों को धैर्य बंधाकर साधनात्मक पूर्णता देते हुए सिद्धाश्रम के कठोर और जड़ नियमों के प्रति खड़े होकर परिवर्तन लाते हुए अपने शिष्यों के प्रति जूझकर, लड़कर उन्हें अधिकार दिलाते हुए उनके दुःख में भावविह्वल होते हुये, क्रोध से अग्नि पुंज बनते और शिष्यों की परीक्षा लेते समय असहाय और असमर्थता व्यक्त करते हुए, विपरीत परिस्थितियों के सामने सीना तानकर खड़े होते हुए, अविचलित गति से आगे बढ़ते हुए प्रवचनों से लाखों लाखों लोगों को मन्त्र मुग्ध करते हुए मैंने देखा है, उनके जीवन में सैकड़ों रूप है और प्रत्येक रूप में वे सर्वांगपूर्ण हैं । ऐसा व्यक्तित्व साधकों के लिए आदर्श है , तो सिध्दों के लिये गौरव मय भी ।

मुझे विश्वास है अपने गुरु कर्तव्य को पूर्णता देने के बाद ये सिद्धाश्रम में आकर अपने कहकहों से तथा साधनात्मक तेजस्विता से इस सिद्धाश्रम को प्राणवान चैतन्य और सुगंधित रूप से महका सकेंगे , तथा सिद्धाश्रम का संचालन अपने हाथों में लेकर इसे अधिक दिव्य तेजस्विता युक्त और पूर्णता प्रदान कर सकेंगे ।

इसी प्रकार योगी ने निर्मलदेव उनके प्रति अपने विचार प्रकट करते हुए कहा —

परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी को व्यक्तित्व अपने आप में अप्रतिम, अद्भुत और अनिवर्चनीय रहा है, उनमें हिमालय ती ऊंचाई है तो सागरवत् गहराई भी साधना के प्रति वे पूर्णतः समर्पित व्यक्तित्व हैं तो जीवन के प्रति उन्मुक्त सरल और सहृदय भी वेद् कर्मकांड और शास्त्रों के प्रति उनका अगाध और विस्तृत ज्ञान है मन्त्रों और तन्त्रों के बारे में पूर्णतः जानकारी भी, यह एक पहला ऐसा व्यक्तित्व है जिसमें प्रत्येक प्रकार की साधनाएं समाहित है, उच्चकोटि की वैदिक और दैविक साधनाओं में जहां यह व्यक्तित्व अग्रणी है वहीं औघड़ , श्मशान और साबर साधनाओं में भी अपने आप में अन्यतम हैं, ऊंचे से ऊंचा विद्वान भी उनसे मार्गदर्शन प्राप्त करता है तो सामान्य गृहस्थ व्यक्ति भी अपनी समस्याओं का समाधान पाकर राहत अनुभव करता है, कुछ योगी किसी एक क्षेत्र में ही निष्णात और सिद्ध होते हैं, संसार में शायद बहुत ही कम बिरले व्यक्तित्व होंगे जिनमें इतने विचित्र विरोधाभासों और विविध साधनाओं का समन्वय स्वरूप होगा, स्वामी निखिलेश्वरानंद जी का व्यक्तित्व ऐसा ही अनिग्र अनिवर्चनीय और अप्रतिम व्यक्तित्व है, ।

ऐसे ही दिव्य योगीराज आज हमारे सामने एक सरल सहज रूप में अपने आपको छुपाये हुए डा० नारायणदत्त श्रीमाली जी हैं। आज वे स्वयं को तिल-तिल कर जलाते हुए दिन-रात कार्यरत हैं । त्रिजटा अघोरी ने उनके प्रति छलछलाते हुए नेत्रों से देखते हुए कहा किवे दूसरो के रोग, परेशानियों को अपने ऊपर ले लेते हैं । इससे उनके शरीर पर प्रतिकूल असर पड़ता है और यह तो उनका दमखम है वरना इतने प्रयोगों और रोगों को अपने ऊपर लेने से तो व्यक्ति समाप्त ही हो जाए। उनके पास सन्यासी शिष्य भी रहना चाहते हैं एक बार स्वामी योगात्रयानंद जी को एक दिन उनके साथ जोधपुर रहने का अवसर मिला, स्वामी योगत्रयानंद जी बताते हैं—

एक दिन मैंने विगलित कंठ से उन से निवेदन किया कि मैं केवल एक दिन के लिए आपके पास आना चाहता हूँ और जो कुछ मैं मन में धारणाएं है जो कुछ मैंने सन्यासी शिष्यों से सुना है, उसके बारे में जान लेना चाहता हूँ आश्वस्त हो जाना चाहता हूँ और मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उन्होने अपने,साथ एक दिन रहने की स्वीकृति दे दी ।

मै जब उनके पास पहुंचा तो प्रातः कालीन लगभग ४ बजे थे, शायद उन्हे मेरे आने का पहले ही पता चल गया था । उनसे क्या छिपा है, उन्होंने सेवक से दरवाजा खुलवा कर मुझे ऊपर ही बुला लिया, ऊपर छत पर वे प्रातः कालीन सध्या वंदन सम्पन्न कर रहे थे ।

यद्यपि शहरी वातावरण और जंगल के वातावरण में अत्यधिक अन्तर होता है, जंगल का वातावरण उन्मुक्त खुला और स्वच्छ होता है, जबकि शहर का वातावरण घुटा-घुटा सा बोझिल और भरा-भरा सा होता है। परन्तु मुझे छत पर अच्छा ही लगा मधुर और आनन्ददायक पवन बह रहा था मृग चर्म पर गुरुदेव पूर्व की ओर मुंह किये सन्ध्या वंदन सम्पन्न कर रहे थे और जैसा कि शौनकीय उपनिषद में बताया गया है कि त्रिकाल सन्ध्या प्रातःकाल ही सम्पन्न कर लेना श्रेष्ठ है, और वे इस उपनिषद के अनुसार सन्ध्या सम्पन्न कर रहे थे, उन्होंने त्रिकाल सन्ध्या सम्पन्न की, सूर्य को साक्षात जल प्रदान किया, अर्घ्य दिया और ब्रह्म गायत्री मन्त्र के द्वारा अपने आपको शून्य आधारित कर मन्त्र जप एवं पुरश्चरण सम्पन्न किया ।

मैंने देखा कि अभी भी रात्रि थी, आकाश में तारे चमक रहे थे, दूर पूर्व में हलकी सी रोशनी थी,पर मैं गुरुदेव के चेहरे को ध्यान पूर्वक देख रहा था, यद्यपि वे कुछ दुबले अवश्य हो गये थे, जैसा उनका शरीर सन्यासी जीवन में था, वैसा तो दिखाई नहीं दे रहाथा, परन्तु फिर भी उनका शरीर सौष्ठव अपने आप में आकर्षक और प्रभाव पूर्ण था,चेहरे पर एक अजीव सा लावण्य और तेज बरस रहा था, जिसे सौभाग्यशाली ही अनुभव कर सकते हैं ।

ब्रह्म गायत्री मन्त्र समाप्त कर वे कुछ क्षणों के लिए एकस्थ हो गये, मैंने अनुभव किया कि प्रातः ५ बजे से ६ बजे के वीच में वे सम्पूर्ण भारत के शिष्यों से संबंधित रहते हैं, उस समय वे अपने आपको पूरे ब्रह्मांड में फैला देते है, उनका शरीर तो मृग चर्म पर बैठा रहता है, परन्तु उनके प्राण और उनका सूक्ष्म शरीर संसार में व्याप्त हो ही जाता है, कही पर भी कोई भी शिष्य यदि इस अवधि में पवित्र हो कर पूज्य गुरुदेव के चित्र के सामने अपनी जो भी वात कहता है उसे पूज्य गुरुदेव सुन लेते है, और यथा संभव उस समस्या का समाधान भी कर लेते हैं।

मैंने जान बूझ कर एक दो वार खखारा भी फिर भी वे निश्चल थे, इसका तात्पर्य इस समय मेरे सामने मात्र उनका शरीर ही था, प्राणश्चेतना तो पूरे ब्रह्मांड में व्याप्त था ।

लगभग ६ बजे उनके शरीर में स्पदन हुए और अपनी कमलवत् आंखे खोली, उनकी आंखों में अद्भुत करुणा व्याप्त थी, मुझे देखते ही उन्हें प्रसन्नता का आवेग आ गया, मैने उनके चरणों में साष्टांग दंडवत किया तो उन्होंने मेरी पीठ पर हाथ रख कर सिद्धिप्रद हो ऐसा आशीर्वाद दिया, कई वर्षों वाद मैं उनकी उगलियों का स्पर्श अनुभव कर रहा था और मैं अपने आप में ही पुलकित एवं रोमांचित महसूस कर रहा था।

लगभग साढ़े ६ वजे वे अपने आंसन से उठ खड़े हुए और छत के नीचे उतर आये मैं भी उनके साथ था, तव तक माताजी ने स्नान आदि से निवृत हो कर उनके लिए दूध का गिलास तैयार कर के उनके सामने रख दिया था, कई वर्षों वाद मैं माताजी के दर्शन पाकर अपने आप में ही पुलकित था ।

इसके वाद उन्होंने प्रातः काल कुछ विशेष पत्रों के जवाव लिखवाने प्रारम्भ किये यद्यपि नित्य ढेर सारी डाक मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र पत्रिका कार्यालय मैं आ जाती है, परन्तु उनमें से कुछ चुने हुए पत्रों का जवाव ही वे लिखा रहे थे, लगभग नौ साढ़े नौ वजे वे इस कार्य से निवृत हुए और घर में ही वने हुए अपने आफिस में वैठ गये, अब तक मैंने देखा कि पूरे भारतवर्ष से आए आगन्तुक पुरुष और महिलाएं उनसे मिलने के लिए आतुर थी, ये सभी लोग अपनी - अपनी समस्याएं ले कर आए थे, गुरुदेव प्रत्येक को वारी-वारी से बुलाते, मैने देखा कि जव वे लोग आफिस में मिलने के लिए घुसते तो उनके चेहरे पर तनाव होता, परन्तु आफिस से बाहर निकलते समय उनके चेहरे पर संतुष्टि और पूर्णता का भाव होता, ऐसा लगता कि जैसे उन्होंने अपनी सारी बात गुरुदेव को कह दी और स्वयं निश्चित हो गये हों, लगभग १२ वजे तक यही क्रम चलता रहा।

इसके वाद प्रातः कालीन ढेर सारे पत्र आ गये थे, जिनको सरसरी दृष्टि से देखा । तब तक अतिथि कक्ष में कुछ और व्यक्तित्व आ गये थे, जिनमें कोई सेक्रेटरी था, कोई अभिनेता इन सभी से भी पूज्य गुरुदेव मिले इनकी गोपनीय और महत्वपूर्ण समस्याओं का समाधान उन्होंने किया। लगभग एक वजे उन्होंने अपने परिवार के साथ भोजन स्वीकार किया, और इसके वाद वे मुझे ले कर अपने साधना कक्ष में चले गये ।

वास्तव में ही साधना कक्ष अपने आप में अद्वितीय कक्ष है, जो कि तेजस्विता से संचालित है, यदि सामान्य व्यक्ति इस में घुसे तो

अचानक उसे ४४० वोल्ट का करेन्ट सा अनुभव होगा, जो उच्चकोटि की साधना से सम्पन्न है, शायद वे ही इस साधना कक्ष में बैठ सकते हैं वहां पर पूज्य गुरुदेव ने लगभग ३ घंटे बिताये और इस अवधि में वे सूक्ष्म शरीर से सिद्धाश्रम जा कर वहां के ऋषियों से सम्पर्क - संबंध स्थापित किया, यह मेरा सौभाग्य था कि आज के दिन उन्होंने मुझे भी सूक्ष्म शरीर से अपने साथ चलने को कहा ।

इन तीन घंटो में एक प्रकार से देखा जाय तो उन्होंने करोड़ो सन्यासी, शिष्यों को समझाया उनका मार्गदर्शन किया , आगे की साधना सिखाई और उनकी समस्याओं का समाधान किया, लगभग ५ बजे वे पुनः शरीरस्थ हुए, मैने आंखें खोली तो उसी साधना कक्ष में गुरुदेव के साथ था ।

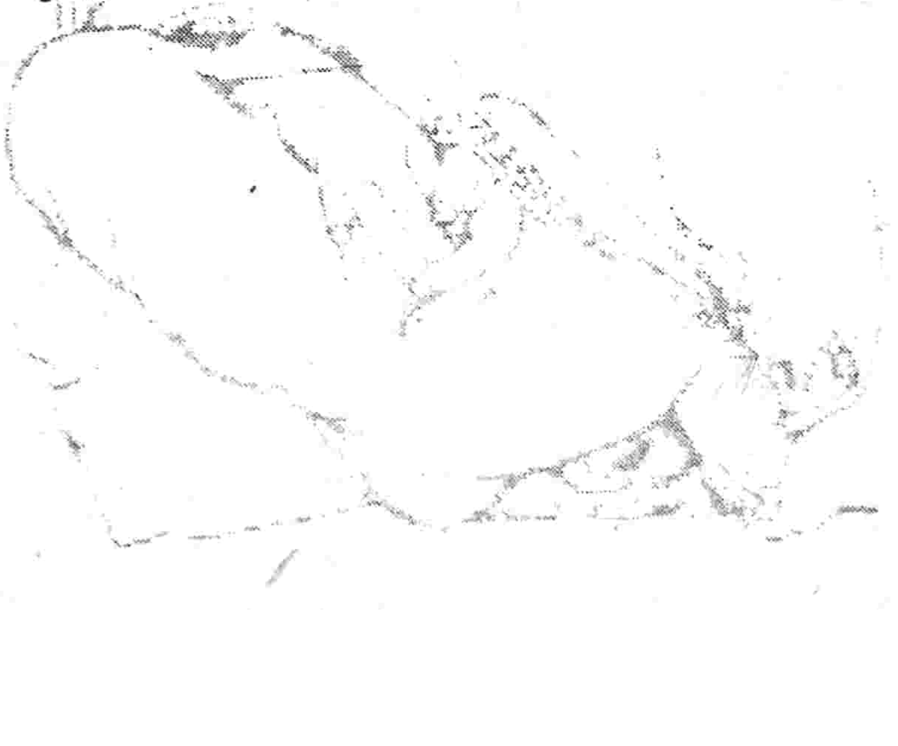
साधना कक्ष से बाहर आकर सांयकालीन आने वाले शिष्यों से मिलने लगे उनका मार्गदर्शन करने लगे, जितनी भीड़ सुबह उनसे मिलने वालों की थी, उससे भी ज्यादा भीड़ शाम को,परन्तु उनके चेहरे पर किसी प्रकार का तनाव नहीं था, इस क्रम को लगभग ७ बज गये, तब वहां से उठ कर वे अपने पूजा गृह में चले गये और परिवार वालों के साथ सांय कालीन आरती कार्य सम्पन्न किया ।

इसी बीच कई घनिष्ठ व्यक्ति दूर-दूर से उनसे मिलने के लिए आये हुए थे, जो कि इनके घर पर ही ठहरे हुए थे, उन सब से मिलते - मिलते साढ़े नौ के लगभग बज गये, इसके बाद वे मुझे ले कर मकान के नीचे स्थित स्वाध्याय कक्ष में चले गये और ब्रह्म सूत्र से सम्बन्धित पुस्तक लेखन में लग गये, ब्रह्म सूत्र अपने आप में अद्वितीय ग्रन्थ होगा और एक प्रकार से कहा जाय तो यह सही अर्थों में निखिल भाष्य ही है ।

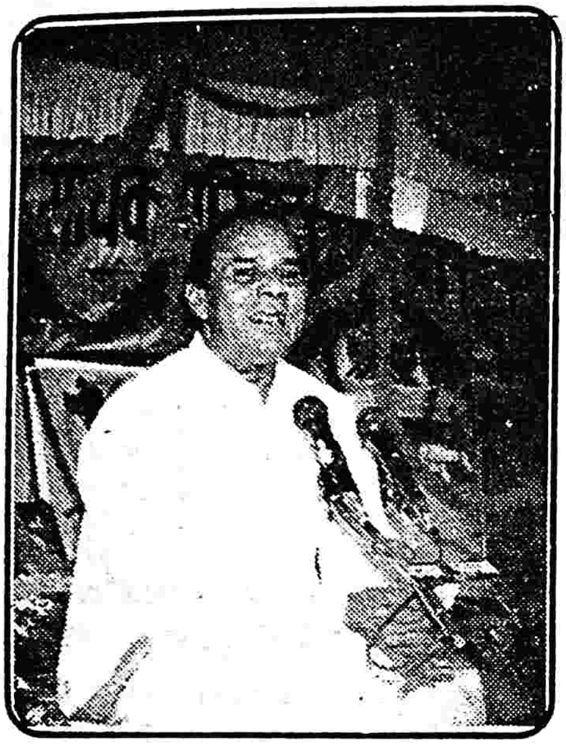
रात्रि को ११ बजे वे अपने कक्ष में चले गये, और उच्चकोटि की साधना में रत हो गये, कुछ समय तक तो मैं उस कक्ष में बैठा रहा परन्तु उनकी गति और उनके सूक्ष्म शरीर को मैं देख नहीं पा रहा था, न मालूम वे सशरीर कहां गये थे, योगियों की गति योगी ही जाने।

तब तक ४ बज गये थे, उन्होंने जल्दी से स्नान किया और मेरे साथ छत पर आ कर मृग चर्म पर बैठ कर प्रातः कालीन सन्ध्या वंदन प्रारंभ कर दिया ।

इस पूरी अवधि में (यह उनकी दैनिक दिनचर्या है) वे कब नींद लेते हैं, कब विश्राम करते हैं; कुछ पता ही नहीं चलता, परन्तु वे ये सारे कार्य बराबर निष्प्रह भाव से करते रहते हैं,इसके अलावा भी पुस्तक लेखन, पत्रिका का कार्य, सांसारिक कार्य,यात्राएं,शिविर संचालन, साधकों का मार्गदर्शन आदि सैकड़ों हजारों कार्य हैं, जो वे हजार- हजार रुपों में करते रहते हैं, ऐसे व्यक्तित्व को न तो मैं पहले सन्यासी जीवन में समझ पाया था और न मैं गृहस्थ जीवन में ही समझ पाया हूँ, वास्तव में ही उनका एक - एक क्षण अपने आप में समर्पित है।



युगपुरुष डा० नारायण दत्त श्रीमाली जी



गुरुदेव विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों तथा मतों में

परम पूज्य गुरुदेव कभी भी, कहीं भी, स्वयं को स्पष्ट नहीं होने देते । बेताल भट्ट ने कहा है कि वे अपने को लुप्त रखकर ठोस कार्य करते रहना चाहते हैं, यदि उनके ज्ञान का शतांश भी किसी के पास होता तो वह स्वयं को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध मानता और प्रदर्शन, प्रचार में ही लीन रहता परन्तु गुरुदेव तो हम सभी की समस्याओं को सुलझा कर हमें जीवन प्रदान कर रहे हैं उन्हें प्रचार से जितना दूर भागते हम सभी ने देखा है उतना ही आप सभी ने अनुभव भी किया होगा।

भारतवर्ष में एक ऐसा भी समय था जब गुरु गोरखनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ ने तन्त्र की सहज, सरल पद्धति को स्पष्ट किया, शंकराचार्य ने साधनाओं को समन्वय करने की चेष्टा की, धनवन्तरी जैसे ऋषियों ने आयुर्वेद की विशिष्ट स्थितियों को प्रस्फुटित किया, नागार्जुन प्रभृति विद्वानों ने रसायन शास्त्र को पूर्णता देने का साहस किया, दिव्यानंद तथा अवधूतानंद ने साबर साधनाओं को उनके शिखर पर पहुंचाने का प्रयास किया परंतु आज तो सभी क्षेत्रों के एक ही मसीहा हैं, उन सभी का सम्मिलित स्वरूप ही हमारे पूज्य गुरुदेव हैं, जो किसी एक ही नहीं समस्त क्षेत्रों में पूर्ण हैं, निष्णात हैं । हिंदु , मुस्लिम, ईसाई तथा अन्य जितनी भी मान्यताएं हैं गुरुदेव ने सभीको उनके श्रेष्ठ रूप में आज प्रकट किया है । वर्ष १९८७ में जब इस्लामी प्रयोगों पर गुरुदेव ने शिविर सम्पन्न किया था तो एक बारगी ऐसा आश्चर्य होता था कि शायद किसी मुस्लिम भाई ने भी इतनी गहराई तक झांकने का प्रयास नहीं किया होगा।

चाहें जैन पद्धति हो या बौद्ध, चाहे पाशुपत सम्प्रदाय हो या शाक्त, चाहें दांडी मार्ग हो या शैव, चाहें चामुंडा सम्प्रदाय हो या साधना मार्ग, चाहें वाम मार्ग हो या अघोर पंथ - सभी की सीमा हैं - हमारे परमपूज्य गुरुदेव। आज, उनसे श्रेष्ठ रसायन तथा पारद विज्ञानी कोई भी नहीं है । १९८८ में गुरुदेव ने चंद्रोदय जल निर्माण की विधि और उससे सभी प्रकार के रोगों का उपचार जिस प्रकार बताया था वह आश्चर्यजनक था क्योंकि चंद्रोदय जल पारद को बांधने में प्रयोग किया जाता है । ऐसे दिव्य परम पूज्य गुरुदेव के चरणों में हम बैठ सके हैं, हमें इसका गर्व है ।

अद्वितीय ज्योतिषी डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी



भविष्य ज्ञान के लिए ज्योतिष, हस्तरेखा का समुचित ज्ञान होना चाहिए आज के ज्योतिषी काल दर्शन से संबंधित छोटी मोटी या विशेष साधना से सम्पन्न होते हैं । आज कर्ण पिशाचिनी सिद्ध बहुत से भविष्य वक्ता मिल जाएंगे जो कर्ण पिशाचिनी से पूंछ कर आपका भूतकाल स्पष्ट कर आश्चर्यचकित कर देंगे और फिर अनाप-शनाप जो भी भविष्य बता कर आपसे मोटी रकम तो ऐंठ लेंगे पर यह भविष्य वे ही जान सकते हैं कि उन्हें कैसे पता चला क्योंकि कर्ण पिशाचिनी से भूत ज्ञान तो संभव है परंतु भविष्य नहीं पता चलता । ज्योतिष का ज्ञान आज बहुत ही विरलों को है । परम पूज्य गुरुदेव ने उसकी आवश्यकता को समझते हुए लगभग सौ से अधिक ग्रन्थों की रचना कर ज्योतिष की पुनःस्थापना की है ।

ज्योतिष के लुप्त प्राय सूत्रों तथा योगों को उन्होंने खोजा है । पूज्य गुरुदेव ने ज्योतिष के माध्यम से समाज के समस्त तनावों को समाप्त कर आनंद प्राप्ति का मार्ग दिखाया है । वास्तव में ज्योतिष के माध्यम से गृहों की गति स्थिति आदि स्पष्ट कर सृष्टि की उत्पत्ति तथा लय का ज्ञान प्राप्त करना था वही चिंतन जब एक मानव, समाज, देश अथवा प्रकृति के लिए समझा जाता है तो वह उसका भूत - भविष्य भी स्पष्ट कर देता है ।

जोधपुर की चिलचिलाती तेज़ धूप भरी दोपहरी, डा० श्रीमाली जी के समक्ष दिल्ली से आये एक नेता अपना हाथ दिखा रहे थे उन्हें मंत्रिमंडल में फेर बदल को लेकर अत्यधिक चिंता थी क्योंकि उन्हें अपनी कुर्सी हिलती नजर आ रही थी । तभी थोड़े से खुले दरवाजे के बाहर धीरे-धीरे रोटी खाता भिखारी हाथ बड़ा कर बोला - दो - चार पैसे मिलेंगे बाबा । दरियांदिल डा० श्रीमाली जी उठे और चार आने का सिक्का देते - देते अचानक रुके क्योंकि उनकी दृष्टि एक रेखा पर थी वे कुछ सोचने लगे और फिर उन्होंने भिखारी का हाथ पकड़कर उसे अन्दर खींच लिया । नेताजी से यह देखा न गया और उन्होंने पूछा कि इस उजड्ड को यहां कहां ले आए । श्रीमाली जी बोले इसकी रेखाओं से स्पष्ट है कि यह धनवान है और गुप्तचर विभाग में सेवारत है । मजबूर होकर जब उस व्यक्ति ने अपना परिचय पत्र दिखाया तो नेता जी भी आश्चर्यचकित हुए बिना नहीं रह सके ।क्योंकि वह गुप्तचर विभाग में उच्च पद पर से वारत था ।

परम पूज्य गुरुदेव की पुस्तकों ने भी आज समाज में ज्योतिष और ज्योतिषियों को ज़ो सम्मान दिलवाया है वह अत्यन्तोच्च है । श्री चरणों में स्थान पा कर यदि हम भी सागर की कुछ बूंदे प्राप्त कर ले तो जीवन्न चमत्कृत हो उठेगा।



आयुर्वेदाचार्य डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी

परम पूज्य गुरुदेव ने बताया कि चिकित्सक औषधी से बाह्य शरीर की चिकित्सा तो कर देता है जब कि रोग तो सीधे आन्तरिक शरीर को प्रभाव में ले लेता है इसलिए आज की इन औषधियों से पूर्ण चिकित्सा संभव नहीं है। पूज्य गुरुदेव ने जहां बहुतों को निरोग किया है वहीं आयुर्वेद में वर्णित ६४ दिव्यौषधियों को प्रामाणिकता के साथ खोज कर उनके लाभ तथा प्रयोगों से सभी को अवगत कराकर रोगोंपचार कों तथा आयुर्वेदाचार्यों का कल्याण कर दिया है । पूज्य गुरुदेव ने आयुर्वेद को नये आयाम दिये हैं। कायाकल्प के लिए उन्होंने अभी तक बहुत से प्रयोग पत्रिका में प्रकाशित किये हैं , जिससे सभी लाभान्वित हो सकें । उनमें श्री मोदक एक ऐसा विधान है जो कि वास्तव में स्पष्ट नहीं हो पा रहा था उसको इतने सरल रूप में स्पष्ट करना मात्र गुरुदेव के ही बस की बात थी ।

मौद्गलस उपनिषद में महर्षि मुदगल ने पूर्ण विवेचन करते हुए लिखा हैं कि गर्भ में ही मनुष्य का पूर्ण निर्माण होता है और उसके लिए इक्कीस माह का गर्भ धारण करना चाहिए । परम पूज्य गुरुदेव के इन वचनों को सुनकर सुभद्रा बहिन जो कि मूलतः अहमदाबाद से हैं, ने अपने पति के साथ उपस्थित होकर इस प्रकार के गर्भ धारण का आग्रह किया, गुरुदेव दो महीने तो कुछ नहीं बोले परंतु फिर उन्होंने कहा कि हरिद्वार में दो वर्ष आप दम्पत्ति रहें सुभद्रा बहिन ने यह स्वीकार कर लिया और फिर पन्द्रह दिन बाद गुरुदेव ने ग्यारह जड़ी -बूटियों को मिलाकर उनसे इन्द्र संहिता में वर्णित अश्वनी आहार बनाकर खाने को दिया । सुभद्रा बहन कहती है - हम पति-पत्नि ऋषिकेश में गंगा किनारे जाकर रहने लगे, समय पर गर्भ धारण के बाद से मेरे शरीर और चेहरे की सुन्दरता में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई, मुझे आश्चर्य तो नहीं हुआ परंतु मैं स्वयं में रोमांचित और गौरवान्वित अनुभव कर रही थी धीरे-धीरे इक्कीस महीने बीत गये मुझे जरा भी भारीपन या कष्ट कभी भी अनुभव नहीं हुआ और फिर मैंने एक श्रेष्ठ और पुष्ट बालक को जन्म दिया । जब यह बालक ऋषि कुमार पांच-छः वर्ष का था तभी इसे बहुत से ग्रन्थ कंठस्थ थे तथा यह धारा प्रवाह रूप से घंटों प्रवचन करता रहता था ।

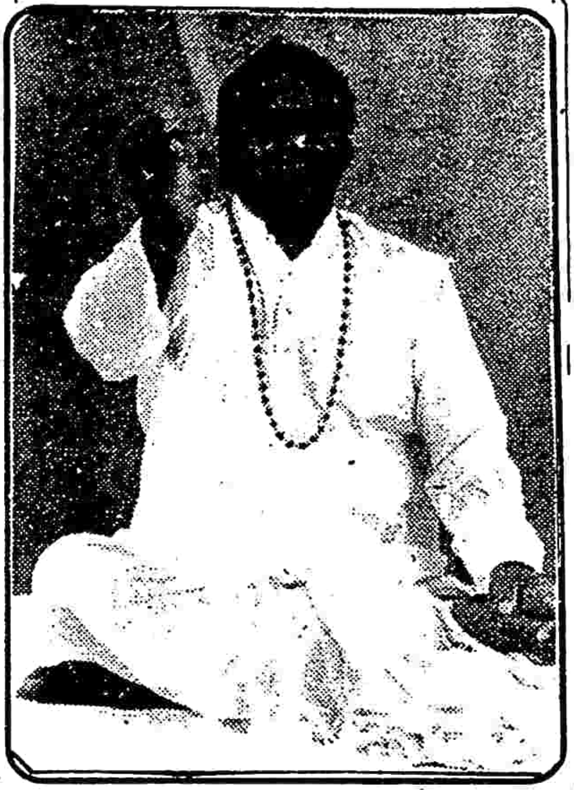
ऋषि को जन्म देकर मैं अपने आपको सौभाग्यशाली समझती हैं । परम पूज्य गुरुदेव आयुर्वेद के अन्यतम आचार्य हैं उनके चरणों में बैठ हमें भी इस सागर से कुछ बूंदे तो प्राप्त कर ही लेनी चाहिए ।वर्ष १९८५ में जोधपुर में एक प्रयोग किया गया। एक गुरु बहन नाम था कृष्णा जो लगभग साठ वर्ष की है, शिविर में सेवा कार्य से बराबर आती जाती हैं । उसका रंग तवे की तरह काला और चेहर पर झुर्रिया थीं उसने मजाक में कहा - मैने तो जीवन में गोरापन क्या होता है देखा ही नहीं ।

पूज्य गुरुदेव ने कृपाकर गोरांगना क्रीम उसके चेहरे पर और हाथों पर लगाने के लिए दीं और कुछ क्रीम अलग डिब्बे में डाल कर उसे दें दी कि रात को सोते समय भी इसका प्रयोग चेहरे पर तथा हाथों पर कर लेना, उसने अपने घर जा कर ऐसा ही किया।

दूसरे दिन जब उसने स्नान किया तो शीशे में अपना चेहरा देखकर दंग रह गयी, उसका काला चेहरा गोरा हो गया था । और इससे बड़ी आश्चर्य की बात यह है कि सारी झुर्रियां समाप्त हो गयी थी, उसका बांकी शरीर तो दुबला कमजोर और वृद्धावस्था को लिये हुए हैं पर यदि उसके चेहरे को देंखे तो ऐसा लगेगा कि जैसे कोई बीस वर्ष की सुन्दर युवती हो ।

इस प्रयोग को किये हुए लगभग नौ वर्ष हो गये है परन्तु आज भी कोई व्यक्ति उस कृष्णा बहन को आकर देख सकता है। पैर और बाकी शरीर का रंग काला परन्तु उसका चेहरा गोरा, आकर्षक, और सौन्दर्ययुक्त बन गया है । वास्तव में पूज्य गुरुदेव आर्युवेद के अन्यतम आचार्या है। आज रोग निवारणार्थ पूज्य गुरुदेव धनवन्तरी दीक्षा द्वारा अपनी तपस्या के अंश को प्रदान कर देते हैं और सभी प्रकार के रोगों से मुक्ति के लिए यह दीक्षा प्राप्त होना सौभाग्य ही है ।

उद्भट दार्शनिक तथा उत्तम संगीतज्ञ



परम पूज्य गुरुदेव अमरकंटक में एक ऊंची शिला पर बैठे थे। उन्होंने एक पत्थर उठाकर पूंछा कि यह क्या है? सभी ने इस पत्थर को हाथ में लेकर अनुभव किया और बताया कि यह तो पत्थर है । गुरुदेव ने समझाते हुए कहा - यह कुछ भी हो सकता है परन्तु यह पत्थर नहीं हो सकता और फिर अपन 'शिष्य निर्मल देव से पत्थर पकड़कर खड़े होने को कहा और उसको निर्निमिष दृष्टि से देखने लगे कुछ ही देर में वह पत्थर जूही के पुष्प में वदल गया। गुरुदेव ने स्पष्ट किया -- हमारे दृष्टिपथ में जो कुछ भी है वह अपने आप में संपूर्ण है परंतु उसकी यह सम्पूर्णता ही दूसरी दृष्टि से अपूर्णता है क्योंकि हम जो कुछ देखते हैं वह उसका भाग ही होता है, इसका जब हम सम्पूर्णता में समावेश करते हैं, तो देखी हुई वस्तु का विलीनीकरण हो जाता है । गुरुदेव के द्वारा हमारे दृष्टिपथ में पड़ी हुई वस्तु की पूर्णता और अपूर्णता की कैसी अद्भुत व्याख्या है, इसी प्रकार जीवन दर्शन पर स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा – जीव, जो कि माया में ग्रस्त हो और वन जो कि व्रह्म से, आनंद से,मुक्तावस्था से भरा है, ऐसा ही जीवन कहलाता है। कितनी सरल भाषा में इतना गूढ़ रहस्य स्पष्ट करना – वास्तव में पूज्य गुरुदेव के लिए ही संभव हैं ।

आज के युग में पूज्य गुरुदेव डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी अद्वितीय दार्शनिक हैं और उनसे दर्शन चेतना प्राप्त करना जीवन की उपलब्धि है ।

पूज्य गुरुदेव जैसा संगीतज्ञ आज के संसार में है ही नहीं जो प्राण धुन वजाता है, जब गाता है तो हजारों-हजारों की भीड़ को अपने साथ रुलाता- हंसाता -नचाता है ।चाहे वह अनाहत नाद हो या आहत नाद हो गुरुदेव तो दोनों में ही निष्णात हैं आज के युग में तीनों ग्रामों का अर्थ, चिंतन तथा उनका उपयोग कोई नहीं जानता परंतु गुरुदेव के लिए कुछ भी असंभव नहीं है । स्वर्गीय संगीत का आनंद वही संगीतज्ञ दे सकता है जो गांधार ग्राम को जानता हो तथा धरा पर लाने की सामर्थ्य रखता हो । गुरु पूर्णिमा १६८६, लखनऊ में सम्पन्न हुई उस समय गुरुदेव अवध - होटल में ठहरे हुए थे । रात काफी हो चुकी थी लखनऊ शहर के वड़े-वड़े अफसर, आई०ए०एस० पदाधिकारी आदि बैठे थे।देव संगीत पर चर्चा चल निकली । गुरुदेव ने सभी की इच्छा जानकर तवला, हारमोनियम आदि अपने चरणों के नीचे रख दिये और पैरों को कपड़े से ढंक लिया । फिर प्रारंभ हुआ संगीत और सभी उसमें ऐसे लीन हुए कि चार घंटे कब बीत गये किसी को होश नहीं था ।

आज इस धरा पर ओढ़व से नीचे की अन्य जातियों का ज्ञान वहुत कम लोगों को है जिनमें पूज्य गुरुदेव ही ऐसे व्यक्तित्व हैं जोकि इन सभी जातियों की गरिमा और महिमा को बनाये रखे हैं। यह जातियां मुख्य रूप से वेद मंत्रोंच्चारण आदि में प्रयुक्त होती है ।

गुरुदेव का नृत्य तथा मुद्राओं का ज्ञान अन्यतम है जिसकी थाह पाना संभव ही नहीं है।इन मुद्राओं के तात्विक चिंतन, नृत्य में उपयोग रोग निवारक क्षमता आदि का आज एकमात्र उन्हीं को ज्ञान है ।

पूज्य गुरुदेव के चरणों में बैठकर यदि संगीत का विधिवत ज्ञान प्राप्त किया जा सके या गंधर्व दीक्षा प्राप्त की जासके, तो यह जीवन की उपलब्धि ही है ।



अद्वितीय पारद विज्ञानी, श्रेष्ठ रसायनज्ञ

धातु परिवर्तन करके एक बार नहीं हजार बार हमारे योगियों ने बताया है । आज इस विद्या का कोई जानकार ऐसा है ही नहीं जिसने पारद के दो - चार से अधिक या पूरे १०८ संस्कारों को समझा, सीखा हो और उसे सम्पन्न कर सके, इसलिए आज पदार्थ परिवर्तन तो एक स्वप्न बनकर ही रह गया है । ऐसे में परम पूज्य गुरुदेव ने पारद विज्ञान के १०८ संस्कारों के नाम तथा विधि को एक बार नहीं कई-कई बार स्पष्ट करके दिखाया है ।

पारद को शिव वीर्य कहा जाता है, इसको बांधकर पारद शिवलिंग का निर्माण अत्यंत ही दुर्लभ है ।गुरुदेव ने ऐसे पारद शिवलिंगों को बनाकर अपने शिष्यों को अपनी कृपापूर्वक प्रदान किया है ।१४ से १६ किलो का पारद शिवलिग का निर्माण तो फिर भी संभव हैं परन्तु २१ किलो को एक स्थान पर, एक रूप में बांधा जा ही नहीं सकता परंतु पूज्य गुरुदेव ने २१ किलो के भी कई पारद शिवलिंगों का निर्माण किया है ।

नागार्जुन ने बहुत वर्षों पूर्व स्वर्ण का एक रासायनिक घोल तैयार किया था जिसके एक बार के सेवन से रोगों पर सदा के लिए विजय पाई जा सकती थी यह विधि कालांतर में भारत से मिस्त्र चली गई परन्तु हम इसे भूल गये । यही नहीं रासायन विद्या के चमत्कारों से हमारे ग्रन्थ भरे पड़े हैं और हमें आज उन धातुओं, उन प्रयोगों की नाममात्र की भी जानकारी नहीं रह गई है ।

पूज्य गुरुदेव के निर्देशन में अमृतवल्ली की नवीनतम खोज मानव जाति के लिए आश्चर्यजनक वरदान स्वरूप है, और कायाकल्प की दृष्टि से तो यह अद्वितीय है, इसको आधुनिक स्वरूप देते हुए इसके बीजों को निकाल कर जब वे बीज स्वतः द्रव्य रूप में परिणित हो गये तो उसकी सिरिंज भर ली और एक ६६ वर्ष के वयोवृद्ध व्यक्ति की नाड़ी में लगा दी।

रात्रि को उसे सुला दिया, सारी रात उसे प्यास लगती रही और हम उसे उबला हुआ स्वच्छ पानी पिलाते रहे, प्रातः काल तक उसके सिर के आधे से अधिक बाल काले रंग में परिणित हो गये थे, चेहरे की झुर्रियां मिटने लगी थी और आंखों में एक नयी चमक तथा ओज दिखाई दे रहा था।

केवल एक इंजेक्शन से ही उसके शरीर में आश्चर्यजनक रासायनिक परिवर्तन हो रहे थे, और तीन दिन में वे चालीस वर्ष का जवान महसूस हो रहा था।

ऐसे में यह परम पूज्य गुरुदेव की महती अनुकंपा ही है कि उन्होंने रसायन के क्षेत्र में इन सभी प्रक्रियाओं को प्रकाशित किया, समझाया और सिखाया । आनेवाला समय ही इस बात को अनुभव कर सकेगा कि इस विश्व में हजारों वर्षों में कोई ऐसा व्यक्तित्व आता है जो इतने क्षेत्रों और इतना ज्ञान धारण किये होता है । यह हमारा सौभाग्य है कि परम पूज्य गुरुदेव सशरीर हमारे बीच उपस्थित हैं अतः हमें उनके चरणों में उपस्थित हो रसायन विद्या को अवश्य हृदयंगम करना चाहिए ।

श्रेष्ठ वेदांती एवं अद्भुत कर्मकाण्ड



पूज्य गुरुदेव को जितना सटीक ज्ञान वेदों का, वेद मंत्रों और वैदिक चिंतन का है, उतना आज धरा पर किसी भी गृहस्थ को नहीं है । इतना ज्ञान होने पर भी वह अत्यंत सरल - सहज रूप में सभी के लिए उपलब्ध हैं । यह सभी के समक्ष एक वार नहीं कई बार स्पष्ट भी हो चुका है ।वाराणसी में हिंदु विश्वविधालय के प्रांगण में जब गुरुदेव यज्ञ हेतु उपस्थित हुए, तो वाराणसी के सभी पंडितों ने उन्हें चैलेंज दे दिया की वह या तो शास्त्रार्थ करें या वह यज्ञ वाराणसी के बाहर करें और जब प्रवचन देते हुए मंच से पूज्य गुरुदेव ने अथर्ववेद के १८ पृष्ठों के प्रथम गुप्त मंत्र का स्पष्ट उच्चारण कर उन्हें मात्र उसकी पुनरावृत्ति के लिए कहा तो कोई भी पंडित लौटकर नहीं आया । वास्तव में उन्होंने स्वीकार किया कि डॉ० श्रीमाली जी के ज्ञान के आगे आज सारा विद्वत समाज भी बौना है ।

यज्ञ एक ऐसा दुरुह विषय है जिसे समझना और सम्पन्न करना अत्यधिक कठिन है। शास्त्रों में इतने प्रमाण और इतना चिंतन भरा हुआ है कि यज्ञ प्रक्रिया को पूरी तरह समझ पाना असंभवसा ही है । जहां पुत्र प्राप्ति के लिए पुत्रेष्टि यज्ञ होता है, वहीं ग्रह कलह शान्ति के लिए शान्ति यज्ञ, शत्रु बाधा नाश हेतु विजय यज्ञ, आध्यात्मिक उन्नति हेतु वाजपेय, अश्वमेध आदि और इन सभी का विधि विधान अलग-अलग है । अग्नि स्थापना, पूजन, ऊर्ध्वमुखीकरण, वेदी निर्माण आदि सभी जटिलतम क्रियाओं को गुरुदेव ने स्पष्ट कर अब गोपनीय नहीं रहने दिया है । अभी तक सर्वत्र यही मान्यता थी कि यज्ञ में समर्पित आहुति देवता तक अग्निदेव के माध्यम से पहुंचाई जाती है परंतु गुरुदेव ने स्पष्ट किया कि ऐसा नहीं है अपितु देवता अग्निकुंड में उपस्थित होकर हविष्यान्न ग्रहण करते हैं । कुरुक्षेत्र में विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया, जब लक्ष्मी मंत्रों से आहुति दी जा रही थी, बहुत से कैमरों के फ्लैश चमके और उनमें से एक कैमरे में पूर्णतः स्पष्ट लक्ष्मी का चित्र आ गया था । सभी आश्चर्य चकित थे उस चित्र को देखकर मुकुट धारण किये एक लम्बी स्त्री, पल्ला - हवा से उड़ता हुआ, चरण गतिशील से शरीर पर धोतीं जैसे वस्त्र को धारण किया हुआ । यह एक चमत्कार से कम नहीं था । यह खोज वास्तव में हम सभी के लिए एक वरदान है और गुरुदेव के ज्ञान की एक बूंद भी पाकर जीवन धन्य हो उठता है ।

परम पूज्य गुरुदेव के चरणों में बैठ कर यदि वेदांत मीमांसा तथा कर्मकांठ को जाना जाय तो यह जीवन की श्रेष्ठ उपलब्धि ही है।



तंत्रेश्वर एवं मंत्रेश्वर

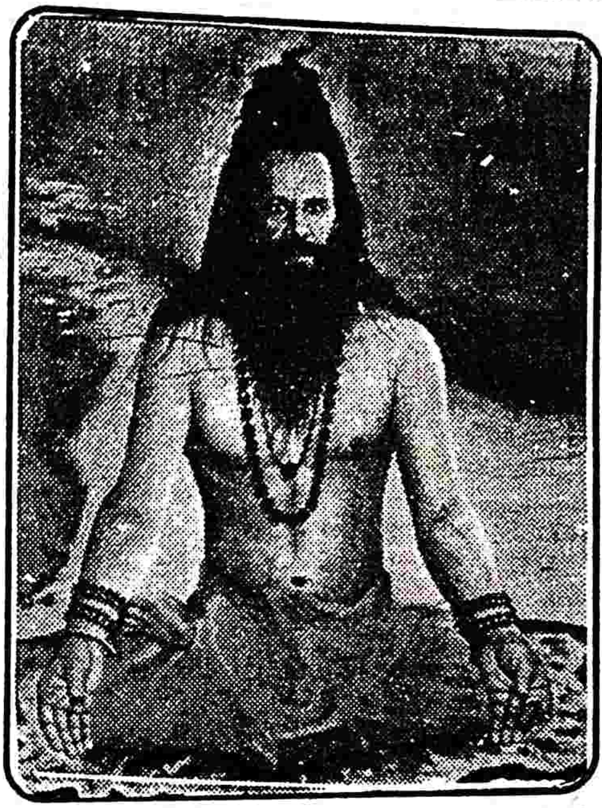
वाम, दक्षिण, कौल मार्ग हो, अघोर पंथ हो या परंतु गुरुदेव की गति सभी क्षेत्रों में समान है तंत्र की सर्वश्रेष्ठ अष्ट सिद्धियों को जहां गुरुदेव ने स्पष्ट किया वहीं परम दुर्लभ स्थितियों को भी सभी को समझाया । परकाया प्रवेश - जिसमें अपने शरीर को छोड़कर दूसरे मृत शरीर में चेतना संचार किया जाता है, हादी विद्या - जिससे भूख - प्यास , मल-मूत्र विसर्जन से मुक्ति मिलती है, कादी विद्या -जिससे सर्दी, गर्मी, वर्षा का शरीर पर प्रभाव व्याप्त नहीं होता, मदालसा विद्या - जिससे शरीर को कितना ही बडा या छोटा आकार दिया जा सकता है, वायुगमन सिद्धि, सूर्य सिद्धांत, मृतसंजीवनी विद्या, कनक धारा सिद्धि आदि इतनी दुर्लभ गोपनीय एवं जटिल क्रियाओं को भी पूज्य गुरुदेव ने सभी के लिए प्रकाशित किया और शिविरों में प्रयोगिक रूप में समझाया ।

पूज्य गुरुदेव मंत्रों के क्षेत्र में अप्रतिम हैं समस्त गोपनीय और लुप्त मंत्रों को उन्होंने शिविरों के माध्यम से, पत्रिका के माध्यम से और निजी तौर पर सभी को समझाया है । जितने भी शिविर हुए हैं और उन सभी में यदि एक साधना को दुबारा कराया भी है तो मन्त्र कभी भी दोहराया नहीं अपितु सर्वदा एक नये मंत्र, नये विधान से ही साधना करवाई है ।

१९८७ में तंत्र साधना शिविर सम्पन्न हुआ था जिसमें तंत्र की बारीकियों को इतनी सरल भाषा में गुरुदेव ने स्पष्ट किया था कि उपस्थित सभी साधक एवं शिष्य इतना सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त कर आह्लादित थें ।

कुल्लू में शिविर चल रहा था । शिविर के पांडाल के बाहर एक शिला पर एक वाममार्गी बैठा हुआ था। वह गुरुदेव पर मारण प्रयोग कर रहा था, प्रवचन चल रहा था और गुरुदेव सभी को गूढ़ ज्ञान चिंतन समझा रहे थे अचानक उन्होंने बोलते -बोलते ही दोनों हाथों की तर्जनी उंगलियों को पास में लाकर झटके से दूर कर दिया और एकदम से धड़ाम की सी आवाज सुनाई दी और जब कुछ शिष्यों ने बाहर जाकर देखा तो पाया कि वह तांत्रिक धरा पर गिरा हुआ था । वास्तव में ही वे तंत्रेश्वर हैं बिना मंत्र के भी प्रभाव उत्पन्न करना उनके ही बस की बात है ।आज सभी को समय न खोते हुए इन श्रीचरणों का आश्रय शीघ्र ही ले लेना चाहिए क्योकि ऐसे दिव्य पुरुष के दर्शन के बाद भी यदि हम छुद्र चिंताओं से, समाज के डर से बंधे रहे तो फिर जीवन का उत्थान कभी भी संभव नहीं हो सकेगा।

योगेश्वर डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली



पूज्य गुरुदेव ने कहा है - पूर्णत्व हेतु योग, वैराग्य और ज्ञान को पूर्णता के साथ प्राप्त करना आवश्यक है । योग को हम साधारण भाषा में किन्हीं दो के एक होने को कहते हैं। यह शब्द संस्कृत की युज - धातु से बना है और इसका सीधा सा अर्थ मिलना है, एक होना है। योग को बहुविधि समझा गया है । श्री कृष्ण ने गीता में कहा हैं 'योगः कर्मसु कौशलम्' महर्षि पंतजली ने कहा है 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' आदि परंतु गुरुदेव ने इसका एक नया अर्थ स्पष्ट किया है उन्होंने बताया कि गुरु ब्रह्मत्व को भी जानता है और माया को भी समझता है इसलिए शिष्य का गुरु में विलीनीकरण ही वास्तव में योग है और सर्वत्र इसका ही अनुभव करना वैराग्य है और यह चिंतन सर्वदा रहे यही ज्ञान है ।

सूर्य सिद्धांत शिविर चल रहा था, एक महिला ने खड़े होकर अविश्वास व्यक्त करते हुए पूंछ ही लिया - गुरुदेव ! क्या वस्तव में लोहा स्वर्ण मे परिवर्तित हो सकता है?क्या सूर्य सिद्धांत इतना सक्षम है? गुरुदेव दो क्षण चुप रहे, फिर बोले- ला, तेरे पास लोहे का कुछ है?उस महिला ने अपने सिर से बालो की चिमटी निकाल कर नमन युक्त होते हुए गुरुदेव को दे दी ।पूज्य गुरुदेव ने उसको हाथ में लिया और सूर्य सिद्धांत को स्पष्ट करते हुए चिमटी को स्वर्ण की बना दिया ।

श्रीमती शकुंतला अडियार दक्षिण भारत की सुप्रसिद्ध गायिका और सामाजिक कार्य करती है, पूरे दक्षिण और भारत में उनके गायन की ख्याति है- साथ ही साथ सामाजिक क्षेत्र में उन्होंने जो कार्य किया है, वह अपने आप में आश्चर्यजनक है, लगभग चालीस से ज्यादा सामाजिक संगठनों की अध्यक्ष या मंत्री है तथा उनके जीवन का प्रत्येक क्षण समाज सेवा तथा देश सेवा के लिए समर्पित है । उनके ही शब्दों में - मैं चाहती थी कि मुझे योग्य गुरु मिले जिनके चरणों में बैठ सकूं, अपने मन की व्यथा उनको कह सकूं और उनसे रास्ता ज्ञात कर सकूं, जिससे इस जीवन में ही उस परम ज्योति में लीन होने में समर्थ हो सकूं, जो कि जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है।

इसी प्रकार की उधेड़बुन के दिनों में एक बार श्रीमाली जी से भेंट हुई, मुझे उनके ज्ञान से, प्राणायाम की क्रियाओं से लाभ और शांति मिलने लगी। उन्होंने स्वयं ही मेरे अनुरोध पर एक दिन कहा कि अब तुम उस स्थिति में हो कि शक्तिपात के द्वारा तुम्हारे चित्त को परमानन्द में लीन कर सके।शक्तिपात के दिन मैं सुबह से ही भूखी थी।प्रातः स्नान आदि से निवृत होकर गुरु पूजा, इष्ट पूजा समाप्त की तथा प्रातः लगभग दस बजे गुरुदेव के सामने उनकी आज्ञा से आसन पर बैठ गयी मेरे सामने गुरुदेव खड़े थे, परन्तु मुझे उस क्षण ऐसा लग रहा था जैसे कोई विद्युत - स्फुर्लिंग मेरे सामने खड़ा हो, उनका सारा शरीर तमतमा रहा था, चाह कर भी मेरी दृष्टि उनके चेहरे पर जम नहीं रही थी, उनके दोनों हाथ आकाश की तरफ उठे हुए थे और मैं उनसे लगभग एक फीट की दूरी पर बैठी हुई थी, परन्तु धीरे-धीरे मैं विधुत प्रवाह अनुभव कर रही थी, देखते ही देखते मेरा पूरा शरीर तापित होने लगा, और दूसरे ही चरण उनके दोनों हाथ मेरे सिर पर स्थिर हो गये, मेरे मुह से ॐ कार की ध्वनि दीर्घ घंटानाद के समान तार स्वर से उच्चारण करते - करते वह मूर्द्धा का स्पर्श करने लगी, और मेरी सुप्त चेतना जागृत होकर आकाश के समान निर्मल रूप से विस्तृत हो गयी, पूरे शरीर में तथा आंखों के सामने श्वेतवर्ण सा सकार हो गया । और प्रणव की तीसरी यात्रा के साथ ही स्वतः पूरक प्राणायाम हुआ, और उसी क्षण ऐसा अनुभव हुआ मानों मेरे प्राण चैतनता की अमृतधारा में डूब गये हों। इससे अत्यंत शीतलता का अनुभव हुआ और मेरी प्राण वायु ने चन्द्र मंडल का स्वरूप धारण कर लिया, यह अमृत के समान था और दूसरे ही क्षण मेरी समाधि लग गयी।

मैं एक अनिवर्चनीय आनन्द में लीन हो गयी । उसके बाद मेरी समाधि लगभग छः घंटे बाद खुली, सूर्य मध्यान्ह से आगे बढ़ चुका था । वास्तव में योगीराज स्वामी सच्चिदानंद जी के शिष्य स्वामी निखिलेश्वरानंद योगेश्वर है,योगीश्वर है। उनके चरणों का ही यह प्रताप है कि आज जहां समाज आसनों को ही योग मान बैठा था, पुनः योग की गहराइयों, गूढ़ताओं, स्वर शास्त्र आदि को समझ पा रहा है । योग के क्षेत्र में इतनी नवीनता, इतनी खोजों को स्पष्ट किया है पूज्य गुरुदेव ने ।



जड़ी - बूटियों, चौसठ दिव्यौषधियों को प्रकाश में लाने वाले डा० नारायण दत्त श्रीमाली

हमारे भारतवर्ष में कई ऐसी जड़ी - बूटियां हैं जिनका पता अभी तक हमें नहीं लग सका है,इसीलिए तो हिमालय को स्वर्ग कहा गया है इसके गर्भ में सैकड़ो ऐसी जड़ी-बूटियां हैं जो कि देव दुर्लभ मानी गई हैं आयुर्वेद के ग्रन्थों में जिन चौसठ दिव्य जड़ी - बूटियों का वर्णन मिलता है,उनका प्रमाणिक पता तथा उनके आकार - प्रकार का ज्ञान अभी तक अत्यन्त दुर्लभ रहा है ।बहुत से आयुर्वेदाचार्यों ने इनकी खोज करनी चाही परंतु यह अब तक यह संभव नहीं हो सका ।इन चौंसठ दिव्य औषधियों में एक से बढ़कर एक गुणकारी जड़ी - बूटियां हैं । संजीवनी से तो सभी श्री रामायण के माध्यम से परिचित हैं पर इसके अलावा भी तेलियाकन्द, मयूरकन्द आदि कई ऐसी दिव्य औषधियां हैं जिनके सेवन मात्र से जीवन की श्रेष्ठ सिद्धियां, स्थितियां प्राप्त की जा सकती हैं ।

कुछ वर्ष पूर्व एक गुरु भाई को पूज्य गुरुदेव की कृपा से तेलियाकंद को जानने का मौका मिला, वे गुरुदेव के साथ कार से निकले, राह में सांयकाल होने पर एक गेस्ट हाउस में रुक गये। पूज्य गुरुदेव ने उन्हें बताया कि यहां तेलिया कन्द प्राप्त हो सकता है और पास के जंगल में विचरण कर गुरुदेव ने आज्ञा देकर एक लम्बी रस्सी, मिट्टी खोदने के लिए कुदाल आदि मंगा लिए । गुरुदेव के निर्देशन में एक छोटे पौधे के चारों ओर की मिट्टी खोदी गई तथा फिर उसके तने को रस्सी से बांध कर एक पेड़े पर चढ़ गए । रस्सी के दो - तीन झटको से वह पौधा उखड़ गया । वहां की सारी धरती तेल के फूटते सोते से तर हो रही थी । तभी वहां एक सर्प निकला और कुछ न देखा वह जोर - जोर से कुदाल पर प्रहार करने लगा और उसने वहीं प्राणत्याग दिये । उस कुदाल को देखने से ऐसा लगता था कि यदि वहां कोई व्यक्ति होता तो उसको समाप्त होने में एक क्षण भी नहीं लगता ;

पूज्य गुरुदेव की कृपा से वाराणसी के एक ब्राह्मण दीक्षित परिवार में जन्में श्री किशोर ने तेलियाकंद प्राप्त कर लगभग दस ग्राम पारे को शुद्ध स्वर्ण में परिवर्तित कर दिया था ।

दीर्घजीवी होने के लिए यह आवश्यक है कि हमारे शरीर में जो कोशिकाएं हैं वह देर तक अशक्त न हों और आज के विज्ञान की यह मान्यता है कि यदि कोशिकाओं में होने वाले परिवर्तन को धीमा किया जा सके और इन कोशिकाओं को स्वस्थ और पुष्ट बनाया जा सके तो व्यक्ति रोग रहित व दीर्घजीवी हो सकता है । कुछ वर्ष पूर्व जापान से डा० माकीची के नेतृत्व में एक दल भारत में दीर्घजीवी होने के उपाय को खोजने के लिए आया था ।

उनका लक्ष्य मयूरकन्द की खोज था क्योंकि आयुर्वेदानुसार यही दीर्घजीवन का रहस्य है । इस दल ने भारतीय आयुर्वेद विशेषज्ञों के साथ मिलकर पांच महीने तक हिमालय में मयूरकन्द की खोज की तथा बाद में जब यह दल जोधपुर जाकर पूज्य गुरुदेव से मिला तब कहीं उनको मयूरकन्द के विषय में विशेष जानकारी, पौधे के गुण लक्षणादि तथा उसके मिलने के स्थान आदि के बारे में प्रामाणिक एवं विस्तृत जानकारी मिली ।

वास्तव में परम पूज्य गुरुदेव को हिमालय के चप्पे-चप्पे तथा वहां होने वाली वनस्पति का पूरा-पारा ज्ञान है । पूज्य गुरुदेव ने इन लुप्त होती औषधियों की रक्षा हेतु नैनीताल के पास एक फार्म बनाकर उसमें इनको लगाया है जिससे आने वाले समय में इनका विकास हो सके । इन जड़ी बूटियों से मात्र रोग निवारण ही नहीं होता बल्कि इनके विशेष योगों के सेवन से सिद्धियों की प्राप्ति संभव होती है। परमपूज्य गुरुदेव से इस क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त करने का अर्थ स्वयं में अद्वितीयता प्राप्त करना है ।

रत्न विशेषज्ञ डा० नारायण दत्त श्रीमाली जी



रत्नों का ज्ञान सदियों से चला आ रहा है और अधिकांश इस बात को जानते और मानते हैं कि रत्नों के माध्यम से भाग्य बदला जा सकता है। संसार में चौरासी रत्न विश्व विख्यात है, इनमें से नौ रत्न सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और मुख्य कहे जाते हैं यो चौरासी रत्न शरीर में पाये जाने वाले १६८ रोगों की औषधियां भी है।

रत्नों के गुणों को समझना तथा इनका समुचित उपयोग करना अभी तक पूरी तरह से स्पष्ट नहीं था । पूज्य गुरुदेव ने रत्नों के रहस्य को जहां समाज के सामने रखा वहीं विभिन्न पद्धतियों द्वारा उनके उपयोग , प्रयोग के मार्ग को प्रशस्त किया है ।

वास्तव में मनुष्य का पूरा जीवन ग्रहों से संचालित होता है और ग्रहों की रश्मियों के सन्तुलन से ही व्यक्ति स्वस्थ रहता है, यह सन्तुलन ज्यों ही बिगड़ता है, व्यक्ति वीमार पड़ जाता है, उस समय यदि न्यून रश्मियों की पूर्ति कर दी जाय तो वह व्यक्ति निश्चय ही बलवान और स्वस्थ बन सकता है । इसके लिए रत्न धारण किए जाते हैं ।

रत्नों के उपयोग के लिए उनकी भस्म आदि का भी निर्माण होता है । रत्न चिकित्सा अपने आप में जटिल और अनुभवजन्य कही जाती है, इसके लिए अच्छा हस्तरेखा विशेषज्ञ होना भी जरुरी है, साथ ही साथ हाथ की रेखाओं से रोग का अनुमान लगाने की उसमें क्षमता होनी चाहिए पूज्य गुरुदेव ने रत्न प्रभाव से गोलियां बनाने की विधि भी स्पष्ट करी।उन्होंने बताया कि यदि पहले ५ रत्ती का पन्ना सात दिन तक तथा बाद में सवा रत्ती का माणिक्य शुद्ध दो ग्राम अल्कोहल में डालकर बंद करके रखा जाए तब इससे जो गोलियां तैयार होंगी वे श्वास रोग अस्थमा पर पूर्णतः प्रभावशाली रहेंगी । इसी प्रकार मिर्गी के दौरे के समूल नाश हेतु बरीवर तौल माणिक्य एवं नीलम को इक्कीस दिन अल्कोहल में रख कर जो गोलियां बनाई जाएगी, वह पूरी तरह कारगर सिद्ध होंगी ।

पूज्य गुरुदेव ने रत्नों को पंचतत्वों से संबंधित कर शरीर के तात्विक संतुलन को बनाने का मारर्ग प्रशस्त किया है ।

दिल्ली के एक जौहरी की कहानी मुझे ध्यान है, वे करोडपति थे, परन्तु काल के प्रभाव से धीरे-धीरे आर्थिक दृष्टि से विपन्न हो गये, और चारों भाई लगभग कंगाल बनने की स्थिति तक पहुंच गये, उनके मकान विक गये, दुकान बन्द सी हो गयी और गाड़ियां आदि समाप्त हो गई, इन्हीं दिनों में उनके बड़े भाई पूज्य गुरुदेव से मिले और अपनी दुख कथा कह सुनाई, पूज्य गुरुदेव ने उनका हाथ देख कर बताया यों तो खूनी नीलम धारण करना कोई भी पसन्द नहीं करता, परन्तु तुम्हारे लिए वह लाभदायक हैं, यदि तुम कहीं से प्रयत्न कर खूनी नीलम प्राप्त कर धारण कर लों, तो वापिस तुम उन्नति कर सकते हों ।

उन्होंने प्रयत्न किया तो एक व्यक्ति ने कहा कि मेरे पास खूनी नीलम है, पर इसके प्रभाव से मैं बरवाद हो गया हूँ, मैंने तो उसे लॉकर में रख छोड़ा है, मैं तो जाकर हाथ भी लगाऊंगा नहीं, यदि आप चाहें तो मेरे साथ चलकर उसको ले सकते हैं, जो भी धनराशि देंगे, मैं स्वीकार कर लूंगा ।

जौहरी को वह दो लाख का खूनी नीलम मात्र दस हजार में प्राप्त हो गया, उन्होंने वह नीलम सोने की अंगूठी में जड़वा कर धारण कर लिया, उसी दिन से उनके भाग्य ने पलटा खाया और मात्र छः महीनों में ही नीलम ने ऐसा चमत्कार दिखाया कि वह फर्म वापस करोड़ों में खेलने लगी, और आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक मजबूत हो गई, आज भी वे अपनी उन्नति का कारण खूनी नीलम को ही मानते हैं, और वे जौहरी हर समय उसे पहने रहते हैं ।

ऐसी एक नहीं कई घटनाएं है और इनसे पूज्य गुरुदेव का रत्न ज्ञान, चिंतन हमें स्पष्ट होता है परंतु गुरुकृपा से जितना उन्होंने बताया वह तो स्पष्ट है परन्तु उससे कहीं अधिक तो हमें अभी उनसे सीखना है । पूज्य गुरुदेव ने इसको विभिन्न आयाम दिये हैं और उनके चरणों में बैठकर इस ज्ञान को प्राप्त करना ही वास्तव में रत्न विषारद बनना है ।

संस्थाओं के जनक तथा शिविरों के प्रणेता



पूज्य गुरुदेव डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली जी ने अपने सन्यासी जीवन में दिव्याश्रम की स्थापना की थी जिससे वहां साधना, सिद्ध कर सन्यासी शिष्य सिद्धाश्रम में प्रवेश पा सकें और आज आपने सिद्धाश्रम साधक परिवार एक विश्व परिवार की स्थापना की है जिसमें पल-बढ़कर एक व्यक्ति साधक बनकर तथा साधनाओं की पगडंडी से गुजरता हुआ सिद्धाश्रम में गुरु कृपा से प्रवेश पास के।

सिद्धाश्रम साधक परिवार, कोई संस्था नहीं है बल्कि एक परिवार है। इसमें गुरुदेव हैं, माताजी हैं और उनके सभी पुत्र-पुत्रियां अर्थात् हम सभी शिष्य हैं इस विश्व परिवार की स्थापना कर गुरुदेव ने हम सभी दिग्भ्रमितों को मार्ग दिखाया है, लक्ष्य बताया है।

पूज्य गुरुदेव के नाम से और भी बहुत सी संस्थायें कार्य कर रही हैं, विशेष उल्लेखनीय हैं —अखिल भारतीय ज्योतिष अध्ययन एवं अनुसंधान केंद्र, जोधपुर; मंत्र शक्ति केन्द्र तथा अरविंद प्रकाशन,जोधपुर डा० नारायण दत्त श्रीमाली फांऊडेशन इन्टरनेशनल आदि । देश में ही नहीं अमरीका,मारिशस, नेपाल आदि में बहुत सी संस्थाएं गुरुदेव से जुड़कर उनके नाम से युगान्तर का सूत्रपात कर रही हैं।

विभिन्न स्थानों पर निखिलेश्वर धाम, नारायण निवास आदि नामों से विभिन्न गुरु चेतना केन्द्र बने हैं जहां सामाजिक प्राणियों की समस्याओं के निदान हेतु अनुष्ठान आदि निरंतर संपन्न होते रहते हैं । इसके अतिरिक्त विद्यालयों, साधनालयों आदि की भी स्थापना हुई है और गुरुदेव की छत्र-छाया में उनके शिष्य दसों - दिशाओं में गतिमान हो रहे हैं ।

परम पूज्य गुरुदेव ने इस जन चेतना जागरण हेतु, हमारी लुप्त विद्याओं की पुर्नस्थापना हेतु अत्यधिक श्रमयुक्त जीवन ही जीया है दिन में २४-२५ घंटे भी कार्यरत रहे हैं । शिविरों का प्रारंभ भी महाप्रभु ने किया और आज आध्यात्म के क्षेत्र में शिविर परंपरा के वे जनक कहे जाते हैं। शिविरों में गुरुदेव प्रवचन द्वारा प्रकृति के गोपनीय रहस्यों को अनावृत्त करते हैं । प्रवचन शैली के विषय में योगद्वयानंद जी कहतें है –

वे प्रवचन देते नहीं है, अपितु प्रवचन के साथ-साथ पूरे जनसमुदाय को बहाये चले जाते हैं,उपस्थित समुदाय प्रवचन के साथ-साथ उनकी इच्छानुसार हंसते है, गम्भीर होते हैं, मुस्कराते है,रोते है और तन्मय हो जाते है, एक प्रकार से श्रोताओं को ऐसा अनुभव होता है, मानो एक तीव्रगामी बहाव में बहे चले जा रहे हों, जहां रुकने का या विश्राम करने का कोई ठौर नहीं है और उस तेज बहाव में कोई रुकना भी नहीं चाहता ।

साथ ही होती है दीक्षाऐं, जिसमें गुरुदेव अपनी तपस्या के अंश को साधक के शरीर में प्रवाहित कर उसे साधना सिद्धि प्रदान करते हैं, और यही नहीं साथ ही साथ गोपनीय, दिव्य तथा अत्यन्त दुर्लभ साधनाओं , उनकी विधियों आदि पर प्रकाश डाला जाता है तथा उनको सम्पन्न कराया जाता है। शिविर का वातावरण कुछ ऐसा होता है कि साधक उन भजनों में मस्त हो नृत्यमय हो जाता हैवह सभी तनावों से मुक्त हो निर्द्वन्द्व, निर्भय हो साधना पथ पर अग्रसर हो जाता है ।

हमारे परम पूज्य गुरुदेव के वरदानं स्वरूप है,उनकी ही वाणी अर्थात मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान। मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान का प्रकाशन वर्ष १६८१ से प्रारंभ हुआ और गुरु कृपा से सभी शिष्यों का आज भी मार्गदर्शन कर रहा है।मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान अपने आप में एक अनूठी मासिक पत्रिका है जो हर वर्ग, हर धर्म, हर उम्र के लिए समान रूप से लाभदायक है । इसमें किसी एक विषय विशेष पर ही चिंतन नहीं रहता अपितु आर्युवेद, मंत्र तंत्र साधनाएँ, जिज्ञासा समाधान, ज्योतिष,योग, रसायन आदि पर समान रुप से लेख दिये जाते हैं । जिससे जनसाधारण प्रयोग कर लाभ उठा सके और अभी तक हजारों ने इसके माध्यम से अपनी खोती हुई जिंदगी में प्रकाश प्राप्त किया है और अपने लक्ष्य को पाया है। यह जितनी उपयोगी एक गृहस्थ के लिए है उतनी ही सन्यासी के लिए भी । जितनी यह एक वृद्ध के लिए आवश्यक है उतनी ही युवा व बालक के लिए है । वास्तव में मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान पूज्य गुरुदेव रूपी अमृत कलश से छलकती हुई बूंदो की तरह है और हमें लपक कर इसे प्राप्त कर अपने जीवन को प्रकाशमय बना देना चाहिए ।

निखिल रहस्यम्

महोत्कांचं रूपं विवशति भवद् भू प्रतिरतं दिवे नित्यं चिन्त्यं विवशत महोत्स्पर्श क्रियते ।
नवोन्मेषं रूपं पदम पर गंध श्रुवयति भवेत्पूर्ण पुण्यं पुरूषमपरोत्तं भव निति: ॥

हे, गुरूदेव ! आपका सारा शरीर देवताओं की तरह सुन्दर, और आकर्षक है, कामदेव के समान पुष्ट और यौवन-प्रदायक है, आपको कोई भी स्त्री या पुरूष देखता है, तो टकटकी बांध कर देखने के लिए विवश हो जाता है, आपके विशाल और चौड़े स्कन्ध, हिमालय का स्मरण दिलाते हैं, और वक्ष-स्थल ऐसा प्रतीत होता है, कि मानो तूफान से भरा हुआ समुद्र उमड़ रहा हो, सारा शरीर एक विशेष ढांचे में ढला हुआ अत्यन्त सम्मोहक और आकर्षक प्रतीत होता है, जैसे कि उसमें चुम्बकीय आकर्षण हो, प्रत्येक स्त्री और पुरूष समीप आने, और निकट जाने की इच्छा मन में रखे हुए विवश से खड़े रहते हैं, वास्तव में ही आपके इस दिव्य देह से जो "पद्म गन्ध" और "अष्ट गन्ध" प्रवाहित होती है, वह देवताओं के लिए भी दुर्लभ और अपने आप मे सोलह कलाओं से पूर्णता युक्त पुरूषोत्तम का प्रतीक है, मैं आपको भक्ति भाव से प्रणाम करता हूं ॥

महोत्सर्व रूपं स्मितमिव इदौ श्रेय प्रिय च
सहस्त्र स्वर्ग च निवसति क्रिय पूर्ण इति वै ।
स्मित हास्य श्रेय श्रवन वदनं पूर्ण रत नै
वहं पूर्ण श्रेय भवत भव योगी मह श्रियै ॥

हे, गुरूदेव ! हे प्रभु ! ! यदि आप मेरे कथन को क्षमा करें, तो मैं यह कहता हूं, कि आपके सारे शरीर में आपका चेहरा और आपकी मुस्कराहट अपने आप में अत्यन्त सम्मोहक और हृदय ग्राही है, आपका चौड़ा ललाट, और उस पर उठी हुई तीन रेखाएं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का प्रतिनिधित्व करती हैं, और जब आप किसी बात पर कुछ क्षणों के लिए मुस्कराते हैं, तो उस समय उस एक मुस्कराहट पर हजार-हजार स्वर्ग न्यौछावर करने को जी चाहता है, आपके प्रति कितना ही आक्रोश या कितना ही तनाव हो, हम जब आपकी एक मुस्कराहट देख लेते है, तो सारा आक्रोश धुल जाता है, और मन मयूर नाचने लग जाता है, वास्तव में ही आपकी थोड़े से तिरछे होठ करके मुस्कराने की कला अपने आप में अद्वितीय है, जिसे देखकर यदि कोई सम्मोहित हो जाय, तो इसमें उसका क्या दोष ? आपके इस आनन्दयुक्त मुखमण्डल को, और उसमें स्थित मुस्कराहट को देखने के लिए ऊंचे से ऊंचा योगी भी तरसता रहता है, और उस क्षण की प्रतीक्षा करता है, जब उसके जीवन में ऐसे क्षण प्राप्त हों ॥

विचित्र सन्यासी, सिद्ध पुरुष तथा श्रेष्ठ शिष्य



पूज्य गुरुदेव ऐसे सन्यासी रहे है जिन्हें अपने शरीर तक से भी वैराग्य था, उन्होंने सन्यास की मर्यादा की पुनर्स्थापना की और आज वही सिद्ध पुरुष गृहस्थ की मर्यादाओं की स्थापना में भी लगा हुआ है और यह इसलिए क्योंकि यह उनके गुरु की आज्ञा है और मात्र गुरु आज्ञा के लिए अपने को तिल -तिल कर जलाते हुए सतत् कार्यरत् हैं, ऐसा तो एक श्रेष्ठतम शिष्य ही कर सकता है ।

स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी पूरे पहाड़ी प्रदेश में सर्वाधिक लोकप्रिय और महत्वपूर्ण सन्यासी रहे है,उनके गुणो ने उनको साहसी, हिम्मतवान, धैर्ययुक्त और मानवीयता के उच्च आदर्शों से आपूरित कर दिया है । उन्होंने अपने पैरों से सारे पर्वतीय प्रदेशों को छाना और लगभग १०८ हनुमान मन्दिरों की स्थापना की, ये मन्दिर आज भी श्रद्धा और पावन ज्योति के परम केन्द्र वने हुए है, इसके अलावा हजार से भी ज्यादा प्राचीन मंदिरों का जोर्णोद्धार करवाया और उन मन्दिरो में पूजाआदि की समुचित व्यवस्था मंदिर के पास में पड़ने वाले गांव के ग्रामीणों के सहयोग से की, लगभग २४ से भी ज्यादा देवी मन्दिर और ६८ विभिन्न मन्दिरों का निर्माण करवाया, इन सभी मन्दिरों में तेजस्वी देदीप्यमान मूर्तियों की स्थापना की जो पूर्णतः प्राण प्रतिष्ठा युक्त एवं प्रभाव युक्त है, इन सब कार्यों से श्रद्धा और देवत्व की जो भावना प्रवाहित हुई उससे आज भी पर्वतीय जन समाज स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं, और किसी का नाम उनकी जवान पर हो या न हो मगर स्वामी निखिलेश्वरानन्दजी को वे अच्छी तरह से जानते है यहां तक कि बच्चे - बच्चे की जबान पर इनका नाम रहा है ।

पूज्य गुरुदेव न् अपनी तपस्या तथा साधना बल से सन्यासी जीवन में तथा अब गृहस्थ जीवन में संपर्क में आने वाले सभी व्यक्तियों की समस्याओं का समाधान किया है। वे वास्तव में ही सभी क्षेत्रों में समानरूप से गतिशील है, सिद्ध पुरुष हैं।

एक बार युगिश्वर स्वामी सच्चिदानंद जी ने अपने प्रिय शिष्य निखिल से पूछा - तेरी जो भी इच्छा हो मांग ले ।

उनके शिष्य ने चरणों की ओर देखते हुए संक्षिप्त सा उत्तर दिया -

त्वदीयं वस्तु गोविन्दं तुभ्यमेवं समर्पयेत

जव हे गुरुदेव सभी कुछ आपका है और आप ही को समर्पित है तो फिर मेरा क्या और फिर मैं चाहूँ क्या ?

पूज्य सच्चिदानन्द जी ने अपने प्रिय शिष्य को चरणों से उठाकर हृदय से लगा लिया । ऐसा होता है श्रेष्ठ शिष्यत्व ।



पूज्य गुरुदेव की प्रेरणास्त्रोत पूज्यनीया माताजी

पूज्य गुरुदेव अत्यधिक व्यस्त रहते हैं पता नहीं उनमें कितनी जीवन शक्ति है, कि अठारह -अठारह घंटे काम करके भी थकते नहीं, उनके चेहरे पर वही ताजगी दिखाई देती है, उनकी हंसी में वही मधुरता घुली रहती है और पूज्य गुरुदेव के शब्दों में इसके पीछे यदि कुछ रहस्य हैतो वह माता जी की सेवा और शक्ति है ।

यदि उपमा का सहारा लें तो पूज्य माता जी निर्मल गंगा के समान प्रवाहमान हैं, जिसमें स्नान कर मन को शांति, पवित्रता, स्निग्धता और सुख मिलता हैं !

पूज्य गुरुदेव को घर से गये जव तीन वर्ष हो गये थे । तव उन्होंने पूज्यनीय माताजी के नाम एक पत्र लिखा था । उन्होंने उसमें लिखा था - मैंने तुम्हारी भावनाओं को पढ़ा है तुम्हारे व्यक्तित्व से जितना भी परिचित हुआ हूँ उससे मैं आश्वस्त हूँ और मुझे तुम्हारे त्याग की रोशनी में अपना पथ स्पष्ट दिखाई दे रहा है । आज भले ही न सही, परन्तु आने वाला समय इस वात को स्वीकार करेगा कि मेरे निर्माण के पीछे सव कुछ तुम्हारा है । तुम्हारा त्याग मेरे त्याग से वहुत वढ़ा चढ़ा है । तुम्हारे त्याग की रोशनी में ही मैं आगे वढ़ सका हूं । मेरे पीछे तुम्हारा वहुत बड़ा संवल है, तुम्हारी प्रेरणा है और शक्ति है ।

प्रसन्नता के क्षणों में पूज्य गुरुदेव ने स्वयं एक वार चर्चा के दौरान कहा था, यह मेरी पत्नी ही नहीं, पथ प्रदर्शिका भी है, आज जो कुछ भी मेरा निर्माण हुआ है, वह इसकी सेवा और त्याग की पृष्ठभूमि पर इसलिए मैं इस जीवन में इसका ऋणी हूँ, पूज्य गुरुदेव ने शास्त्र वचन उद्‌धृत करते हुए वताया कि पत्नी की चार अवस्थायें होती है -- भोजन के समय उसका स्वरूप मां के समान होता है, जिस प्रकार से मां अपने पुत्र को हठ करके भोजन कराती है,आराम क्षणों में वहं दासी स्वरूपा होती है ,जिस प्रकार से भृत्य पूरा - पूरा ख्याल रखता है कि स्वामी को कोई असुविधा न हो उसी प्रकार सुलक्षणा पत्नी आराम के क्षणों में दासीवत् होती है,शयन के क्षणों में वह प्रेमिका स्वरूप होती है, और मुसीवत के क्षणों में सच्चे साथी के समान होती है, शास्त्र वचन के वाद पूज्य गुरुदेव ने बताया था कि इसने इन चारों ही रूपों में मेरी सेवा की है ।

वास्तव में ही माताजी विविध रूपा हैं, गुरु जी के प्रत्येक क्षण का ध्यान रखना उन्होंने अपना कर्तव्य समझ लिया है, उनका अपना स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं हैं, उन्होंने अपना सब कुछ पूज्य गुरुदेव में ही लीन कर दिया है एक प्रकार से वे पतिमय ही हो गई हैं ।

माताजी के व्यक्तित्व का, उनकी सरलता का, उनकी पवित्रता और धार्मिकता का प्रभाव पूरे घर पर है, घर के अणु - अणु पर है ।

पूज्य माता जी वहुत सवेरे जल्दी उठ जाती है, नित्य क्रिया से निवृत्त हो पूजा घर में चली जाती हैं, इसके वाद से रात्रि को साढ़े ग्यारह वजे तक वे दो ही कार्यों में ज्यादातर व्यस्त रहती हैं, पति सेवा, अतिथियों की सेवा या ईश्वर चिंतन, पाठ, पूजा, धार्मिक चर्चा आदि और मैंने देखा है कि घर में वारहों महीने कुछ न कुछ धार्मिक कार्य चलते ही रहते हैं, न मालूम कितने ही अनाथ वच्चे माता जी की सहायता से पलते होंगे, कितने ही वच्चों की फीस माता जी की तरफ से जमा होती होगी, कितने ही रोगियों को फल, दूध आदि माताजी की तरफ से पहुंचता होगा और इतना सब कुछ करने के वाद भी जव कोई प्रसंग छिड़ता है, तो एक ही वाक्य में उत्तर मिलता है, सब राम जी करते हैं, मैं कौन होती हूँ, करने वाली वस्तुतः माताजी मातृ-स्वरूपा हैं *-या देवी सर्वभूतेषु रूपेण संस्थिता ।*

आदर्श गृहस्थ एवं विशाल हृदय के स्वामी



मुझे किंकर स्वामी जी की पंक्ति याद आ रही है कि निखिल जी में अन्य अंग तो हैं या नहीं परंतु जहां तक मैं समझता हूँ, उनके सारे शरीर में हृदय ही हृदय भरा हुआ है ।

सर्दी के दिन थे, हवा चलने की वजह से सर्दी और बढ़ रही थीं, प्रातः भ्रमण से गुरुजी, माताजी आदि लौट रहे थे कि सामने से ही कानपुर के प्रसिद्ध सेठ आते दिखाई दिये वे कानपुर से रात को गाड़ी से आकर होटल में ठहरे थे और प्रातः जल्दी ही गुरुजी से मिलने आ गये थे,जब पता चला कि गुरुजी प्रातः भ्रमण को गये हैं, तो दिशा ज्ञात कर वे भी आ गये थे ।

सेठ जी के हाथ में कीमती शाल था, जो गुरुजी को भेंट करने के लिए लाये थे, मार्ग में उन्होंने गुरुजी के चरण - स्पर्श किये और कुछ नम्रता और कुछ बड़प्पन के साथ वह शाल गुरुजी के कंधों पर ओढ़ा दी।

सेठ जी के साथ घर तक आते-आते घर से कुछ ही कदम दूर एक भिखारी हाथ फैलाये खड़ा ठिठुर रहा था, शरीर पर धोती के अलावा तार-तार कुर्ता । गुरपदेव को देखते ही बोले दाता! पंडित जी !!

गुरुजी ने उधर दृष्टि डाली, और कंधों पर से शाल उतार कर उसके शरीर पर डाल दी और चुपचाप आगे बढ़ गये ।

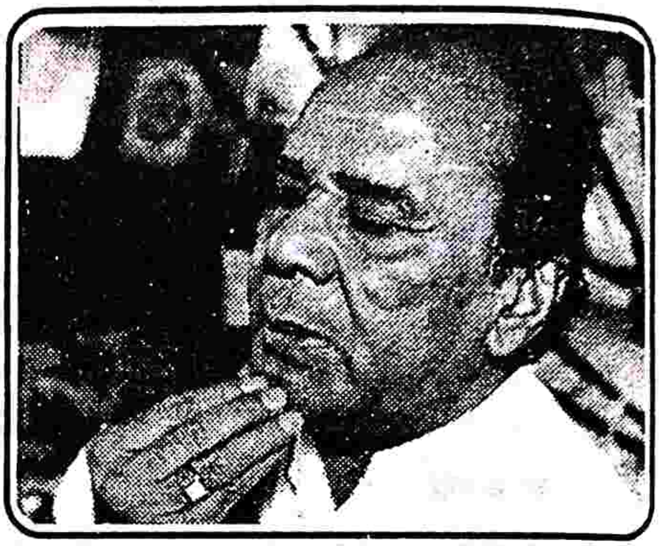
सेठ जी पानी-पानी हो गये । कितनी महानता – कितनी उदारता – कितना त्याग – कितनी निस्पृहता — ।

इतने विशाल हृदय के स्वामी हैं परम पूज्य गुरुदेव ।

एक ऐसा ज्ञान का समुद्र जिसकी थाह पाना संभव ही नहीं है वह एक छोटे से मकान में रहे,एक ऐसा योगी जिसकी ब्राह्मण्ड में गति हो और वह कार में बैठकर दूरी तय करें, शायद इतनी सादगी, इतना विशाल हृदय आज हम सभी को विस्मित कर देता है परंतु सत्य तो फिर सत्य है पूज्य गुरुदेव के आज के गृहस्थ पक्ष को देखें तो आश्चर्य ही होगा । वे पढ़े - लिखे एम०ए० किया, फिर पी०एच०डी० करी विश्वविद्यालय में प्रोफेसर लगे तथा विभागाध्यक्ष बने ।उनके भी पत्नि हैं - पूज्यनीय माता जी, उनके भी पुत्र, पुत्रियां हैं सभी का उन्होंने लालन -पालन किया, उन्होंने जहां एक ओर गुरु पद की गरिमा को श्रेष्ठता दी वहीं पिता के कर्तव्य का भी पालन किया । सभी को पढ़ाया -लिखाया , समाज से जूंझना बताया चुनौतियों का सामना करना सिखाया और पाल पोस कर बड़ा किया उनको उच्चशिक्षा दिलवाई, जीवन की आवश्यक सुख सुविधायें दी और फिर विवाह आदि कर वानप्रस्थ की मर्यादा की रक्षा की, उसको एक नवीन चिंतन दिया कि कैसे इन सभी कार्यों में लिप्त रहते हुए भी विरक्त बना जा सकता है, किस प्रकार कर्तव्य और अधिकारों को पूर्णता दी जा सकती है । वास्तव में ही पूरा का पूरा शिव पुराण का आदर्श गृहस्थ धरा पर देखने को हम सभी को मिल सका ।

पारिवारिक समस्याओं के समाधान कर्ता

जब किसी भी मानव को रास्ता सूझ नही रहा हों तो वह यदि श्री चरणों में पहुंच जाए तो उसको प्रकाश किरण मिल ही जाती है । कुछ वर्ष पूर्व वाराणसी के एक अत्यंत आदरणीय व्यक्ति के परिवार की भतीज बहु जब नित्य पूजन कर मंदिर से लौट रही थी । उसे राह में एक तांत्रिक मिले । महिला ने तांत्रिक के चरण स्पर्श किये, यद्यपि वह दो बच्चों की मां थी तथापि उसका सौन्दर्य आकर्षण बहुत बड़ा चढ़ा था । तांत्रिक ने कुछ सोच कर आशीर्वाद देते हुए एक माला उसको दी कहा कि घर जाकर इसको धारण कर लेना वह स्त्री उस माला को लेकर घर आ गई । बच्चों की हड़बड़ी में उस माला को खूंटे पर टांग कर धारण करना भूल सी गई । सायं काल का समय था वह बालकों को भोजन हेतु ले जाने के लिए जब बाहर निकली तो गुरुदेव को बच्चों के साथ खेलते देखकर आश्चर्य से फूली नहीं समाई । उनके चरणों पर पड़कर फूट पड़ी । पूज्य गुरुदेव ने आशीर्वाद दिया और घर पर आ गये। पूज्य गुरुदेव ने और परिवार के सभी सदस्यों ने भोजन किया । गुरुदेव पास पड़ी चारपाई पर लेट गये वहीं पास में खूंटी पर माला टंगी थी । इस माला को देखकर गुरुदेव ने एकदम से पूछा की यह यहां कैसे आई । स्त्री ने नम्रतापूर्वक जवाब दिया कि एक तांत्रिक ने दी है और गलती से वह पहनना भूल गई और झट उसे उतारकर पहन ने लगी । गुरुदेव ने उन्हें रोक कर पूंछा - तू जानती है यह क्या हैं ? उसने ना में सिर हिलाया । वहां मृग का सिर दीवार पर सजाया हुआ था । गुरुदेव ने उससे उस माला को मृग के सिर में डालने के लिए कहा और माला के धारण करते ही वह मृग सिर दीवार से हटकर वायु गमन करने लगा । गुरुदेव की आज्ञा से सभी ने उसका पीछा किया । वह मृग शीश धीरे - धीरे गलियों से होता हुआ गंगा के तट पर पहुंचा और गंगा को पार कर जंगल में गायब हो गया । पूज्य गुरुदेव सभी को घर वापिस ले आये और बताया कि यदि तू इसको धारण कर लेती तो वह दुष्ट तांत्रिक तुझे भी इसी तरह बुला लेता और गंगा के पार जहां उसका डेरा है वहां ले जाकर तेरे साथ दुष्कर्म करता । पूज्य गुरुदेव के आने का रहस्य उस महिला के सामने खुल चुका था परंतु गुरुदेव ने उसकी रक्षा की, इससे भावविह्वल हो वह गुरु चरणों में गिर पड़ी ।



इसी प्रकार बहुत से बिखरते परिवारों, पति-पत्नि के मत भेदों, तथा बांझता आदि का निवारण करते हुए गुरुदेव वास्तव में सद गृहस्थ देव हैं जिनकी कृपा प्राप्त करके ही गृहस्थ की, अनेक समस्याएं सुलझायी जा सकती हैं।

इसी प्रकार श्रीमती पुष्पा जैन की भी समस्या का समाधान पूज्य गुरुवर ने किया था।उन्हीं के शब्दों में - मै भारत के प्रसिद्ध उद्योगपति सिंगानिया परिवार की मैं बहू हूँ, मेरा जन्म बम्बई में हुआ है। जब मैं बड़ी हुई तो मेरा प्रेम सिंगानिया परिवार के मंझले पुत्र से हो गया और मैं उस दिन के स्वप्न देखने लगी जब मैं उस परिवार में बहु बन कर आ सकूं, पर ऐसा संभव नहीं हो रहा था क्योंकि न तो उस परिवार को यह स्वीकार था और न मैं उस व्यक्तित्व को अपनी और आकर्षित कर पा रही थी, जिसे मैं प्रेम कर रही थी । मेरे पास कोई चारा नहीं था, कोई रास्ता नहीं था, कि मैं अपने स्वप्न को साकार कर सकूं ।

उन्हीं दिनों मैने सुना कि डॉ० श्रीमाली जुहू के हरे कृष्ण मंदिर में ठहरे हुए हैं, और मैं एक दिन बिना किसी को कहे इस्कान में पहुंच गई ।लगभग दो घंटे प्रतीक्षा के बाद श्रीमाली जी मुझे मिले, मेरी बात ध्यान से सुनी, और उन्होंने पूछा भी - क्या मैं वास्तव में उनसे गंभीरता से प्रेम कर रही हूँ, और क्या मैं उनसे शादी करना चाहती हूँ, साथ ही साथ उन्होंने पूछ लिया कि क्या शादी के बाद भी पूरी तल्लीनता के साथ बहु बनकर रह सकोगी? मेरी आंखों में आंसू आ गये, मैंने कहा मैं वास्तव में ही आदर्श पत्नी बन कर दिखा देना चाहती हूँ। वे दो क्षण मुझे शान्त करते रहे, फिर उन्होंने अपने पास से पारे से बनी हुई अंगूठी निकाल कर मुझे दी और कहा कि इसे पहिन लो, तुम्हारा काम हे जायेगा ।

संयोगवश एक दिन जब मैं सुबह जुहू पर घूम रही थी, तो वे भी जुहू बीच पर आते हुए दिखाई दिये, एक सेकेंड के लिए बातचीत हुई, और उनकी दृष्टि मेरी पहिनी हुई उस अंगूठी पर पड़ी और उसके एक महीने के बाद ही हम दोनों प्रणय सूत्र में बंध गये । आज भी वह मुद्रिका मैंने उंगुली में पहनी हुई है ।

जीवन्त, जागृत व्यक्तित्व डा० नारायण दत्त श्रीमाली जी



परम पूज्य गुरुदेव ने जीवन में वास्तविक आनंद प्राप्ति का मार्ग स्पष्ट किया है उन्होंने ज्ञान, योग और वैराग्य की चरम सीमा को स्पष्ट किया है। जीवन में जहां संगीत अमृत उत्पत्ति करता हैं वहीं सौन्दर्य गति, उमंग, आनंद प्रदान करता है, तथा पूर्णता का भाव , और लक्ष्य प्राप्ति की चाह उत्पन्न करता है आज सौन्ध की चर्चा छिड़ते ही , कामुकता का मानस वनता है, प्रेम के वारे में चितन हो तो आछापन सामने आता है और वासना ही मानस में स्पष्ट होती है।वास्तव में हम सभी हो ही इतने ओछे गये हैं, हमारी सोच ही इतनी आधी-अधूरी है, हमारी आंख में इतनी गंदगी है कि हम सौन्दर्य और प्रेम जैसे श्रेष्ठ चिंतन के विषय में चर्चा करते कतराते हैं, समाज में आज इस विषय पर वात करने का अर्थ है गंदी वातें करना । सौन्दर्य तो जीवन का वह अंग है जिसको आदि सूत्र में स्पष्ट किया गया है - सत्यम् शिवम् सुन्दरम् अर्थात् - सौन्दर्य पूर्णता का एक रास्ता है ।

एक ओर जहां साधना करते - करते जीवन रुखा-सूखा ठूठ की तरह हो जाता है वहीं सौन्दर्य उसमें शीतलता, शान्ति और आगे वढ़ने की नई उमंग पैदा करता है । महर्षि भृगु ने अपने शब्दों में स्पष्ट किया था कि सिद्धाश्रम में जहां हजारों वर्षों की आयु प्राप्त योगी भावनाहीन, चेतनाहीन से समाधिस्थ थे वहां स्वामी निखिलेश्वरानंद ने देव कन्याओं को बुलाकर नृत्य , संगीत और सौन्दर्य को स्थापित किया जिसका सभी ने डटकर विरोध किया, उन्होंने सिद्धाश्रम में सभी को मुख्त विचरण करने की छूट दी इसका भी विरोध तब स्थिति को स्पष्ट करते हुए उन्होंने वताया कि सौन्दर्य तो ऊर्ध्वगामी चिंतन है, कामुकता या वासनामय होना, आंखों में गंदगी का आना पतन है और सन्यासी जीवन में इन सव अधोगामी क्रियाओं का कोई अर्थ नहीं हैं । सौन्दर्य प्राप्ति तो जीवन का उत्सव है । परमपूज्य गुरुदेव के प्रयत्नों सें एक नया विधान वना उन्होंने वताया- यदि तुम कमजोर नही हो, तुम अपनी साधना में अविचल हो, एक निष्ठ हो तो फिर तुम्हें साधना भंग होने का भय नहीं रहेगा और इसका परिणाम हुआ की श्मशान से शांत पड़े सिद्धाश्रम में हलचल हुई जीवन्तता बनी । पूज्य गुरुदेव ने स्पष्ट किया था कि सौन्दर्य पारखी वनोंगे, सौन्दर्यमय वनोगे तो जीवन में आनंद वर्षा होगी, उमंग होगी, कुछ कर गुजरने का चैलेंज का भाव आएगा, साधना मार्ग पर और खोजे होंगी, एक गति बनेगी, जीवन में संगीत का प्रस्फुटन होगा जिससे अमृत वर्षा प्रारंभ होगी, जीवन नृत्यमय बनेगा एक उत्सव बनेगा और पूर्णत्व की प्राप्ति होगी ।

परम पूज्य गुरुदेव हम सभी के जीवन को निरंतर उत्सवमय ही वना रहें हैं । लकीर के फकीर बनकर वहुत सी पीढ़ियां वीत गईं पर अव हम कुछ नये वन पा रहे हैं और ऐसा श्री गुरु चरणरज के प्रताप से ही संभव है ।

षोडश कला सम्पन्न व्यक्तित्व



पूज्य गुरूदेव डा० नारायण दत्त श्रीमाली जी के बाल सखा ही आज के काशी के उद्‌भट विद्वान और सिद्ध पुरूष पंडित पीताम्बर दत्त शास्त्री जी हैं । इस समय उनकी उम्र लगभग ८६ को पार कर चुकी है, पर उनके चेहरे पर तेज और ओज वैसा ही है, जैसा एक सिद्धि पुरूष में होता है, काशी के विद्वानों में वे अत्यन्त सम्माननीय एवं पूज्यनीय हैं,हस्त रेखा शास्त्र एवं साधनाओं के क्षेत्र में उन्होंने जो कार्य किया है, वह एक पूरी संस्था भी मिल कर नहीं कर सकती,

पंडित पीताम्बर दत्त जी ने अपने पूरे जीवन में दो ही ग्रन्थ लिखे, एक तो उन्होंने आज से पच्चीस वर्ष पहले गीता पर भाष्य लिखा था, जो अपने आप में अद्वितीय कलाकृति है, और दूसरी पुस्तक अभी हाल ही में प्रकाशित हुई है, जिसका नाम 'पूर्ण मदः पूर्ण मिदं' है । पीताम्बरदत्त जी कृष्ण पर जब कार्य कर रहे थे, तो लगभग तीन वर्ष उन्होंने उज्जैन में व्यतीत किये थे, वहीं पर उन्हें श्री कृष्ण के गुरू सांदीपन द्वारा रचित एक ग्रन्थ देखने को मिला था, जो हस्त लिखित था, जिसमें यह स्पष्ट किया था कि कोई भी मानव - पूर्ण और महामानव होता है, तो उसके हाथ की रेखाएं अपने आप सारे तथ्य स्पष्ट कर देती हैं ।

पंडित पीताम्बर दत्त जी को पूज्य गुरुदेव की हाथ की रेखाओं को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है,और उनके हाथ की छाप उनके पास सुरक्षित है, यह ग्रन्थ 'पूर्ण मदःपूर्ण मिदं' भी पूज्य गूरूदेव के हाथ की रेखाओं से सम्बन्धित ही है, इस पुस्तक में उन्होनें उनके हाथ की छाप भी प्रकाशित की है ।

इस पुस्तक में उन्होनें प्रमाणिकता के साथ यह स्पष्ट किया है, कि पूज्य गुरुदेव श्रीमाली जी के हाथ की रेखाओं में वह सोलह के सोलह चिन्ह प्रमाणिकता के साथ विघमान हैं जिनको सोलह कलाएं कहा जाता है, उन्होनें यह भी लिखा है कि मैंने अपने जीवन में एक करोड़ से भी ज्यादा हाथ देखे होगें,परन्तु मुझे अन्य कोई भी हाथ ऐसा देखने को नहीं मिला, जिसमें ये सभी सोलह चिन्ह वियमान हों ।

उन्होनें यह पूरी पुस्तक पूज्य श्रीमाली जीं के हाथ की रेखाओं के स्पष्टीकरण के साथ प्रकाशित की है और प्रत्येक रेखा का विवरण विस्तार से स्पष्ट किया है, साथ ही उन सोलह चिन्हों का भी प्रमाणिकता के साथ वर्णन दिया है, जो सोलह कलाओं से सम्बन्धित हैं और पूज्य गूरूदेव के हाथों में ये विन्ह प्रामाणिकता के साथ अंकित हैं ।

यघपि यह ग्रन्थ काफी बड़ा है, पर मैं उन सोलह चिन्हों के नाम और संक्षिप्त में उनसे सम्बन्धित विवरण अंकित कर रहा हूँ, जो इस पुस्तक में प्रतिपादित किये हैं, इन चिन्हों को ही सोलह कला चिन्ह कहा जाता है ।

कमल

इस ग्रन्थ के अनुसार-नाल सहित अष्टदल कमल का चिन्ह श्रीमाली जी के दाहिने हाथ के मध्य में प्रामाणिकता के साथ अंकित है, जीवन रेखा जहां से प्रारम्भ होती है, उसके आगे ही यह अद्वितीय चिन्ह है, जो प्रथम कला से सम्बन्धित महत्वपूर्ण चिन्ह हैं ।

इस चिन्ह को ब्रह्म चिन्ह भी कहा गया है, यदि किसी व्यक्ति को यह सौभाग्यशाली चिन्ह जीवन में एक बार किसी के हाथ में देखने को ही मिल जाये तो भी उसके सारे पाप कट जाते हैं, और जीवन उन्नति की ओर ऊपर उठ जाता है ।

इस चिन्ह का प्रभाव यह है कि ऐसा व्यक्ति शुध्द, सात्विक, निर्मल, पवित्र होने के साथ-साथ एक अद्वितीय आत्मा होती है, जो पृथ्वी ग्रह पर समय पा कर अवतरित होती है, ऐसा व्यक्तित्व मन्त्र का अध्येता और सिध्दि पुरूष होता है, जिसे पूर्णता के साथ वाक्-सिध्दि प्राप्त होती है ।

आर्या

यह श्रीमाली जी के हाथ में उस स्थान पर अंकित है, जो सूर्य पर्वत के नीचे का भाग है, यों तो सूर्य पर्वत अपने आप में अत्यन्त

विकसित और दर्शनीय है, परन्तु ठीक इस पर्वत के नीचे जिस प्रकार से आर्या चिन्ह अंकित हुआ है, वह अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं ।

यह चिन्ह सूर्य के समान वृत्ताकार है, जिसके चारों ओर किरणें विकीर्ण हुई हैं, इस चिन्ह को दर्शनी यचिन्ह कहा गया है, जिसके हाथ में ऐसा चिन्ह होता है, वह अत्यन्त तेजस्वी, योग्य और विद्वान व्यक्तित्व होता है, जो अपने आप में समस्त वेदों का ज्ञाता और शास्त्रों का अध्येता होता है, और पूरायुग उनके ज्ञान से प्रभावित होता है, आने वाली पीढ़ियों के लिए ऐसा व्यक्ति उन ग्रन्थों की रचनाकर के जाता है, जो युग के लिए पाथेय और मार्ग दर्शक होती हैं ।

यदि किसी के भाग्य में ऐसे चिन्ह के दर्शन ही हो जांय तो भी उसका जीवन संवर जाता है, और जीवन में वह जो भी इच्छा करता है, उसकी पूर्ति हो जाती है ।

पाञ्चजन्य शंख

पूज्य गुरूदेव का शुक्र पर्वत सर्वाधिक विकसित और अपने आप में अद्वितीय है, दूर से ही यह पर्वत प्रकाशित होता हुआ सा प्रतीत होता है, इस पर्वत के ठीक नीचे यह पाञ्चजन्य शंख अंकित है, जो लाखों-करोड़ों व्यक्तियों में से किसी एक व्यक्ति के हाथ में होता है ।

जिसके भी हाथ में ऐसा शंख अंकित होता है, उस व्यक्ति का पूरा जीवन मधुरता एवं आनन्द से व्यतीत होता है, दूसरों के साथ उसका व्यवहार अत्यन्त मधुर एवं सरल होता है, और वह व्यक्ति धर्म और विज्ञान के क्षेत्र में अद्वितीय कार्य सम्पन्न करता है ।



सांदीपन के अनुसार-यदि किसी व्यक्ति को किसी के हाथ में यह चिन्ह देखने को ही मिल जाये, और वह ऐसे चिन्ह के दर्शन कर ले, तो भगवान विष्णु के दर्शन करने के समान ही शुभ फल प्राप्त होता है ।

त्रिगुणा

इसका आकार तीन पत्तियों के समान उठा हुआ पुष्प होता है, और शनि पर्वत के नीचे जहां भाग्य रेखा का उदय और प्रारम्भ होता है उसके मध्य में यह चिन्ह बनता है, अत्यन्त कम व्यक्तियों के हाथों में ऐसा श्री चिन्ह अंकित होता है ।

पंडित पीताम्बर दत्त जी के अनुसार-पूज्य श्रीमाली जी के हाथ मे यह *त्रिगुणा चिन्ह* प्रामाणिकता के साथ अंकित है, यह चिन्ह सत्व, रज तथा तम तीनों गुणों से सम्बन्धित चिन्ह है दूसरे शब्दों में ब्रह्मा,विष्णु, महेश और महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती से अनुरक्त चिन्ह माना गया है ।

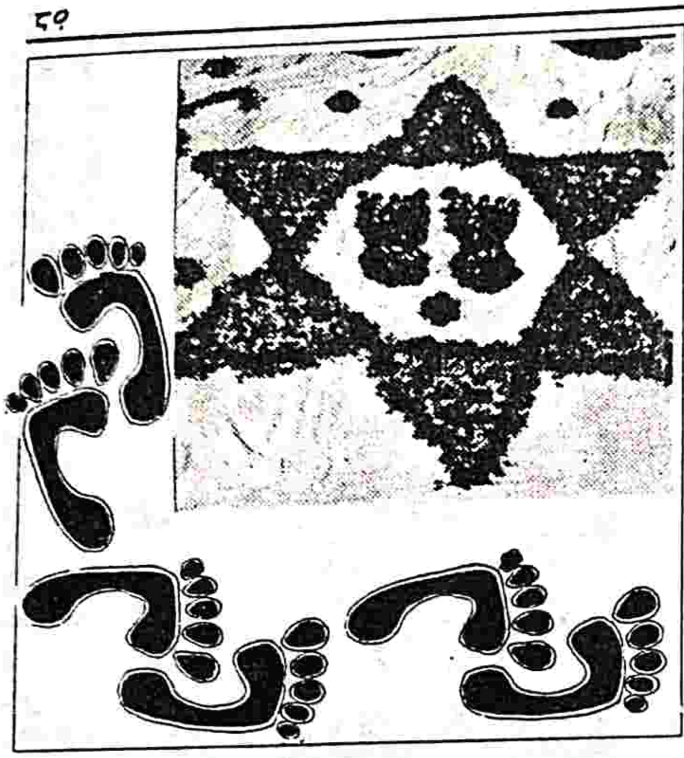
जिसके हाथ में यह चिन्ह होता है, वह समस्त सिध्दियों को प्राप्त करने वाला अत्यन्त तेजस्वी व्यक्तित्व होता है, सारे शास्त्र उसे स्वतः कंठस्थ होते हैं, मन्त्र बल से और साधनात्मक बल से वह प्रकृति में परिवर्तन लाने में समर्थ होता है, और जिस प्रकार से भी चाहें वह अपने साधनात्मक बल से सारी सृष्टि का संचालन और नियमन कर सकता है ।

पुष्कल

चन्द्र पर्वत के नीचे छोटी-छोटी रेखाओं से मिलकर यह चिन्ह बनता है, जिसे देखने पर ऐसा आभास होता है, मानों द्वितीया का चन्द्र अपनी पूर्ण भव्यता के साथ उदय हुआ हो ।

पूज्य श्रीमाली जी के दाहिने हाथ में चन्द्र पर्वत अत्यन्त विकसित लालिमा युक्त एवं आकर्षक है, इस चिन्ह का दर्शन ही अत्यन्त सौभाग्यशाली माना गया है, यह चिन्ह लक्ष्मी का प्रतीक है, और जिस व्यक्ति के भाग्य में ऐसे चिन्ह के दर्शन लिखे होते हैं, और यदि वह अपने जीवन में किसी के हाथ में अंकित इस चिन्ह को स्पर्श कर लेता है या दर्शन कर लेता है वह निश्चय ही लक्ष्मी का प्रिय बन कर निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर होता है ।

जिसके भी हाथ में यह चिन्ह होता है, वह पूर्ण पौरुष युक्त तथा आकर्षक व्यक्तित्व सम्पन्न होता है, उसके व्यक्तित्व का प्रभाव दूसरों



पर आसानी से पड़ता है, ऐसे व्यक्ति का परिचय और निकटता अत्यन्त भाग्य से प्राप्त होती है, क्योंकि ऐसा व्यक्ति पूरे जीवन में सहायक एवं सौभाग्य प्रदान करने में समर्थ होता है ।

अनंग

अनंग का तात्पर्य कामदेव होता है, यह चिन्ह मानवाकृति के समान स्पष्ट होता है, जो शुक्र पर्वत और लघु मंगल पर्वत के बीच अंकित होता है, पर इसके लिए मंगल पर्वत भी अत्यन्त पुष्ट और विकसित होना आवश्यक है, पूज्य गुरूदेव के दाहिने हाथ में यह अनंग चिन्ह अत्यन्त भव्यता के साथ अंकित है, यदि सूक्ष्मता से इन दोनों पर्वतों के मध्य देखें तो पूर्ण मानवाकृति दिखाई देती है ।

ऐसा व्यक्ति चुम्बकीय व्यक्तित्व सम्पन्न, पूर्ण पौरूषता युक्त एवं अद्वितीय बलशाली होता है, जो एक बार इनके सम्पर्क में आ जाता है, वह जीवन भर उससे जुड़ा रहता है, ऐसे व्यक्ति के हृदय में जोश आनन्द, उत्साह तथा उमंग का समुद्र लहराता रहता है, जिसके हाथ में यह चिन्ह अंकित होता है उसे कायाकल्प का पूर्ण ज्ञान होता है और समय-समय पर अपने व्यक्तित्व और पौरूषता को ज्यादा श्रेष्ठ, ज्यादा उन्नत और ज्यादा भव्य बनाये रखता है ।

इस श्रीचिन्ह के दर्शन ही जीवन का सौभाग्य माना गया है, यदि किसी व्यक्ति के भाग्य में ऐसे श्री चिन्ह के दर्शन हों तो निश्चय ही वह रोग रहित एवं आनन्द युक्त जीवन व्यतीत करने में समर्थ होता है, जो ऐसे श्री चिन्ह के दर्शन या स्पर्श करने का सौभाग्य प्राप्त करता है, उसकी सुन्दरता अपने आप में ही अद्वितीय बनने लगती है ।

गजलक्ष्मी

यदि हाथ में तीन मणिबन्ध हों वही से प्रारम्भ हो कर भाग्य रेखा ऊपर की ओर उठ रही हो,तथा साथ ही जीवन रेखा के समापन स्थान पर गजलक्ष्मी का चिन्ह अंकित हो, तो उसे गजलक्ष्मी चिन्ह कहा जाता है ।

पंडित पीताम्बर दत्त जी के अनुसार – पूज्य गुरूदेव के दोनो हाथों में यह गजलक्ष्मी चिन्ह पूर्णता के साथ अंकित है, यदि सामान्य दृष्टि से भी देखें, तो लक्ष्मी का स्वरूप और विग्रह साफ-साफ दिखाई देता है ।

जिसके भी हाथ में ऐसा चिन्ह होता है, वह साधारण घराने में जन्म लेकर भी अत्यन्त उच्चस्तरीय सम्मान, धन एवं सौभाग्य अर्जित करता है, आर्थिक एवं भौतिक दृष्टि से उनके जीवन में किसी प्रकार की कोई कमी नही रहती ।

यदि किसी के हाथ में और विशेष कर दोनों हाथों में गजलक्ष्मी चिन्ह अंकित हो और उनके दर्शन का सौभाग्य जिसे भी प्राप्त हो, वह वास्तव में ही सौभाग्यशाली होता है, और मात्र दर्शन करने से ही दरिद्रता समाप्त हो जाती है और उसी क्षण से वह आर्थिक दृष्टि से समृद्ध और उन्नति की ओर अग्रसर हो जाता है, शास्त्रों के अनुसार यह सातवीं कला से सम्बन्धित चिन्ह है जो अत्यन्त सौभाग्य दायक माना गया है ।

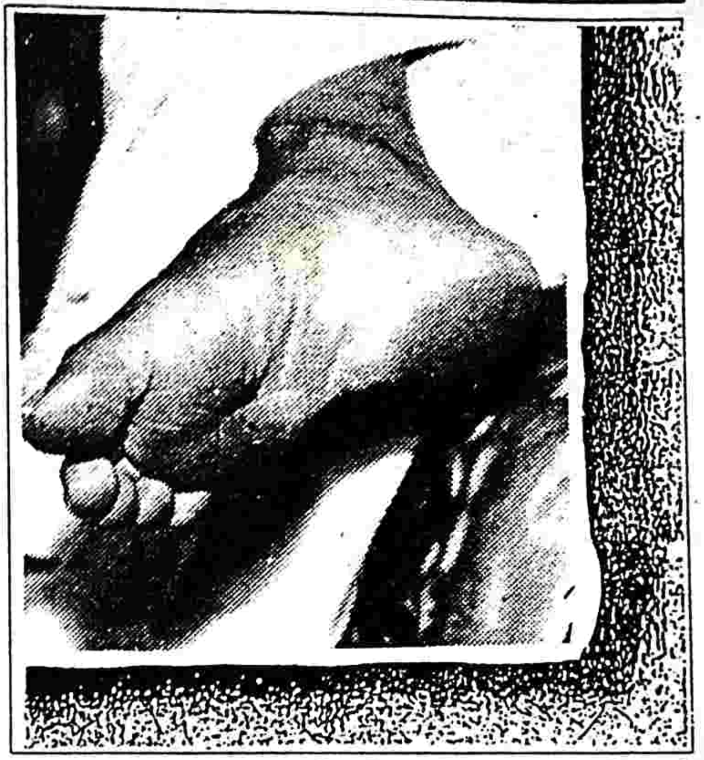
अतुल्या

दाहिने हाथ में विकसित बुध पर्वत के नीचे यह चिन्ह अंकित होता है, जो छोटे-छोटे सात चिन्हों से मिल कर बनता है, ऐसा लगता है कि जैसे सात सूर्य एक साथ वृताकार रूप में उदय हो गये हों।

पूज्य गुरूदेव का बुध पर्वत तो अत्यधिक विकसित है ही, इसके नीचे यह 'अतुल्या चिन्ह' भी अपनी भव्यता के साथ अंकित है, पंडित जी के अनुसार करोड़ों-करोड़ों लोगों में से किसी एक व्यक्ति के हाथ में यह चिन्ह अंकित होता है ।

इस चिन्ह का दर्शन ही जीवन का परम सौभाग्य माना गया है, यदि कोई व्यक्ति ऐसे चिन्ह के दर्शन कर लेता है, या स्पर्श कर लेता है, तब भी उसका जीवन धन्य हो जाता है और कई सिद्धियों का तो वह स्वतः अधिकारी बन जाता है ।

जिसके भी हाथ में ऐसा चिन्ह होता है, वह समस्त सिद्धियों का स्वामी और अद्वितीय युग पुरूष होता है, इसी चिन्ह से उसकी अद्वितीयता और युग पुरूषता प्रमाणित होती है, उसे साधनाएं करने की आवश्यकता नही होती, सिद्धियां स्वयं जयमाला लिये उसके सामने खड़ी रहती है ।



अपने जीवन काल में ही ऐसा व्यक्ति अपनी सिद्धियों के बल पर वह सब कुछ प्राप्त करने में समर्थ, सफल हो पाता है, जो आवश्यक है, ऐसे व्यक्तित्व को पाकर सिद्धाश्रम स्वयं अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करता है ।

ब्रह्माण्ड

यह शुभ चिन्ह दस करोड़ व्यक्तियों में से किसी एक व्यक्ति के हाथ में अंकित होता है,बृहस्पति पर्वत के मूल में जहां जीवन रेखा प्रारम्भ होती है, उसके आस- पास यह श्रीचिन्ह अंकित होता है, यह चिन्ह दण्ड के आकार का होता है , और स्पष्टता के साथ दिखाई देता है ।

पंडित जी के अनुसार — पूज्य श्रीमाली जी के दोनों हाथों में यह 'ब्रह्माण्ड चिन्ह' अंकित है,इसका दर्शन ही अपने आप में अत्यन्त सौभाग्यशाली माना गया है ।

जिसके हाथ में यह चिन्ह प्रामाणिकता के साथ अंकित होता है, वह अपनी सिद्धियों के वल पर समस्त ब्रह्माण्ड में कही पर भी विचरण करने में समर्थ, सफल होता है, प्रत्येक लोक ऐसे व्यक्तित्व को अपने यहां पा कर धन्य अनुभव करते है, ऐसे व्यक्ति अपनी साधना के माध्यम से सूक्ष्म शरीर से विश्व में कहीं पर भी विचरण करने में समर्थ होते है, और अपनी इच्छानुसार जितने भी शरीर धारण करना चाहें या जितने रूपों में स्पष्ट होना चाहें, हो सकते है, भगवान श्रीकृष्ण ने इसी चिन्ह की बदौलत रासलीला में सैकड़ों रूप धारण कर लिये थे, और प्रत्येक गोपी के साथ कृष्ण के रूप मे खड़े हो गये थे ।

ऐसा व्यक्तित्व कई- कई जंन्मों का साक्षी होता है, और किसी को भी देख कर उसके पिछले कई जन्म उसके सामने स्पष्ट हो जाते है, इच्छा होने पर ही वह सामने वाले के पिछले जीवन को स्पष्ट करता है ।

वास्तव में ही यह दुर्लभ चिन्ह पूर्ण भव्यता के साथ पूज्य गुरूदेव के दोनों हाथों में प्रामाणिकता के साथ अंकित है ।

कलात्मिका

यह चिन्ह शनि पर्वत और सूर्य के वीच में अंकित होता है, जो कि वृत्ताकार होता है, और उसमें से सोलह किरणें निकलती हुई सी प्रतीत होती है, यह अपने आप में अद्वितीय और सौभाग्यशाली चिन्ह माना गया है, जो श्रीमाली जी के दोनों हाथों में अत्यन्त भव्यता के साथ अंकित है ।

यदि उनके दाहिने हाथ को सूक्ष्मता से देखें, तो शनि पर्वत और सूर्य पर्वत के संधि स्थल पर सूर्य के समान एक चिन्ह दिखाई देता है, और छोटी-छोटी रेखाएं इसके चारों और निकलती हुई सी प्रतीत होती है, जो कि अग्नि मण्डल की दस कलाएं, और सोम मण्डल की सोलह कलाएं है ।

यह चिन्ह तो विरले लोगों के हाथों में ही अंकित होता है, और कई सौ वर्षो वाद किसी एक-आध व्यक्ति के हाथ में ही यह चिन्ह दिखाई देता है ।

वास्तव में ही वह सौभाग्यशाली व्यक्ति होता है, जो किसी के हाथ में ऐसे चिन्ह के दर्शन या स्पर्श करने में समर्थ हो पाता है, जो व्यक्ति ऐसे चिन्ह के दर्शन कर लेता है, उसके आत्म चक्षु विना किसी प्रयास के स्वतः जाग्रत हो जाते है, और कुण्डलिनी जागरण की क्रिया प्रारम्भ हो जाती है ।

ऐसा व्यक्ति अत्यन्त तेजस्वी और दिव्य होता है, जिनका सानिध्य और साहचर्य भी सौभाग्य से प्राप्त होता है, ऐसा व्यक्ति सरल और सात्विक जीवन जीता हुआ भी अपने पूरे युग को मार्गदर्शन देने में समर्थ होता है, ऐसा व्यक्ति किसी भी पुरूष या स्त्री को सिध्दि पुरूष बना सकता है, और चाहने पर शुक्र ग्रह या अन्य किसी भी ग्रह की यात्रा सूक्ष्म शरीर से सम्पन्न करा सकता है, उसके लिए ब्रह्माण्ड में किसी भी प्रकार की रोक-टोक नहीं होती, और वह चाहे तो किसी को भी सिध्दाश्रम या अन्य कहीं पर भी वायु वेग से प्राण तत्व के माध्यम से गतिशील कर सकता है ।



राज-राजेश्वरी

यह दस महाविद्या एवं षोडशी चिन्ह है, जो कि व्यक्ति के हाथ में ठीक मध्य में अंकित होता है,दाहिने हाथ के मध्य में १०८ छोटी-छोटी रेखाओं से निर्मित यह चिन्ह ऐसा प्रतीत होता है, मानों सिंहासन पर त्रिपुर सुन्दरी भव्यता के साथ बैठी हुई हो ।

यदि सूक्ष्मता से हाथ का अवलोकन करें, तो श्रीमाली जी के दोनों हाथों में यह चिन्ह पूर्णता के साथ अंकित है, वास्तव में ही ऐसा चिन्ह अपने आप में दुर्लभ और अद्वितीय माना गया है, कई हजार वर्षों बाद किसी एक-आध व्यक्ति के हाथ में ही ऐसा चिन्ह अंकित होता है, और यदि फिर दोनों हाथों में यह चिन्ह अंक्ति हो, तो उसकी तुलना ही नहीं हो सक्ती ।

यह सप्तलोक और तीनों प्रकार की महा प्रकृति से सम्बन्धित चिन्ह है, जिसे अजिता और अपराजित कहा गया है, यह षोडशी महाविद्या से सम्बन्धित चिन्ह है, कुबेर स्वयं राज-राजेश्वरी का अर्चन सम्पन्न कर अपने आपको सौभाग्यशाली अनुभव करते है ।

जिसके भी हाथ में यह चिन्ह होता है। उसे विश्व में किसी प्रकार की कोई कमी नही रहती, और वह समस्त ब्रह्माण्ड से जो कुछ भी, जिस प्रकार से भी चाहे, प्राप्त करने में समर्थ, सफल हो पाता है ।

ऐसा व्यक्ति किसी दरिद्री को भी धनवान और कुबेर के समान बना सकता है, सामान्य व्यक्ति को भी सिद्धि पुरूष बना सकता है, और किसी के भी जीवन में जो इच्छा होती है, उसकी पूर्ति स्वतः हो जाती है ।

जो व्यक्ति अपने जीवन में एक बार भी ऐसे चिन्ह के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त कर लेता है,उसकी समानता तो ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी नहीं कर पाते ।

सर्वानन्दा

यह चिन्ह दाहिनें हाथ में ठीक मध्य में स्थित होता है, जिसके एक तरफ चन्द्र पर्वत और दूसरी तरफ शुक्र पर्वत का संयोग बनता है, पूज्य श्रीमाली जी के दाहिने हाथ में यह चिन्ह पूर्ण स्पष्टता के साथ उभरा है।

महर्षि सांदीपन के अनुसार – यह चिन्ह देखने पर ऐसा प्रतीत होता है मानों भगवती जगदम्बा साक्षात् सिंहासन पर बैठी है, ऐसा बिम्ब स्पष्टता के साथ अंकित होता है, ऐसे चिन्ह का दर्शन ही जीवन के सारे मनोरथ पूर्ण कर देता है और वास्तव में ही वह व्यक्ति सौभाग्यशाली होता है, जो किसी महापुरुष के हाथ में अंकित ऐसे चिन्ह के दर्शन करने में समर्थ, सफल हो पाता है।

यह बारहवीं कला है, और जिसके हाथ में यह कला या चिन्ह होता है, वह पृथ्वी ग्रह के अलावा अन्य सभी विशिष्ट ग्रहों पर आ जा सकता है, और वहां अत्यधिक लोकप्रिय होता है, वह स्वयं तो संन्यासी और गृहस्थ दोनों ही जीवन में आनन्दमय होता ही है, जो इसके सम्पर्क में होते हैं, वे भी आनन्दमय जीवन व्यतीत करने में सफल हो पाते हैं, ऐसे व्यक्ति के सम्पर्क में रहना ही जीवन का सौभाग्य माना जाता है, और वह सही अर्थो में अगले कई-कई जन्मों तक ऐसे व्यक्ति के साथ बना रहता है।

श्रीप्रज्ञा

यह चिन्ह अत्यन्त महत्वपूर्ण माना गया है, इसे तेरहवी कला कहा गया है जो भगवान श्रीकृष्ण के हाथों में गुरु पर्वत के नीचे स्पष्टता के साथ अंकित थी, जिसकी वजह से सैकड़ों रूप धारण करने में वे समर्थ थे, और समस्त सिद्धियों के स्वामी होने के साथ-साथ सही अर्थो में युग -पुरुष कहला सके ।

पंडित पीताम्बरदत्त जी के अनुसार – पूज्य श्रीमाली जी के दाहिने हाथ में गुरु पर्वत के नीचे यह चिन्ह भव्यता के साथ अंकित है, जो लक्ष्मी स्वरूपा है, यह चिन्ह देखने पर ऐसा प्रतीत होता है मानों साक्षात् लक्ष्मी कमल दल पर बैठी हुई हो और दो हाथी उस पर कलश से वर्षा कर रहे हों।

यह अपने आप में अत्यन्त अद्वितीय चिन्ह कहा गया है, इसका दर्शन ही समस्त प्रकार के वैभव और आनन्द की प्राप्ति का सूचक है जो इस चिन्ह के दर्शन कर लेता है, उसके जीवन में दरिद्रता आ ही नहीं सकती ।

जिसके हाथ में यह होता है, उसके घर में सभी प्रकार की लक्ष्मियां स्थायी रूप से निवास करती है और वह मन्त्र बल से किसी के घर में लक्ष्मी वर्षा कराने में समर्थ हो पाता है, वास्तव में ही यह अत्यन्त ही अद्वितीय चिन्ह माना गया है।



भ्रामरी

इसका वर्णन मार्कण्डेय पुराण में भी आया है, यह चिन्ह राहु पर्वत के पास ऊपर की ओर उठा हुआ होता है, और देखने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई भ्रमर आकाश की ओर ऊंचा उठ रहा हो।

मैंने इस चिन्ह को पूर्ण प्रामाणिकता के साथ गुरुदेव के दोनों हाथों में देखा है, जिसके भी हाथ में ऐसा चिन्ह होता है वह निश्चय ही समस्त प्रकार के तंत्रों का ज्ञाता और सिद्धि पुरुष होता है, ऐसे चिन्ह को शिवा कहा गया है, जो कि साक्षात् शिव का प्रतिरूप है, तन्त्र के क्षेत्र में ऐसे व्यक्तित्व की कोई तुलना नहीं हो सकती और तंत्र के वल से वह पूरे ब्रह्मांड में कुछ भी परिवर्तन करने में सक्षम हो पाता है ।

विधात्री

यह चिन्ह शनि पर्वत और सूर्य पर्वत का जहां संधिस्थल होता है वहीं पर अंकित होता है, यदि सूक्ष्मता से इस चिन्ह को देखे तो ऐसे लगता है जैसे स्वयं चतुर्भुज ब्रह्मा बैठे हुए हों , और उनके मुख से वेद उच्चरित हो रहे हों ।

पंडित जी के अनुसार – गुरुदेव के दोनों हाथों में यह चिन्ह प्रामाणिकता के साथ अंकित है, पंडितजी के पास जो हाथ का चित्र था उस पर इंगित कर के बताया कि यह चिन्ह बहुत कम लोगों के हाथो में अंकित होता है, पर जिसके भी हाथ में यह चिन्ह होता है वह किसी मनुष्य के भाग्य को भली प्रकार से निश्चित कर सकता है और नये सिरे से उसका भाग्य लिख सकता है ।

परा

यह सोलहवी कला है और परा-अपरा विद्या की साक्षी भूत स्वरूपा है, यह चिन्ह सूर्य पर्वत पर भी होता है, और देखने पर ऐसा प्रतीत होता है, मानो 'जवा कुसुम' पूर्ण क्षमता के साथ खिला हुआ हो, इस चिन्ह की आठ पंखुड़िया होती है, जिनके नाम हैं – १- क्षमा, २- शांति, ३- प्रीति, ४- बुद्धि, ५- लज्जा, ६- सिद्धि ७- प्रज्ञा, ८- ख्याति ।

मैने स्वयं इस प्रकार का चिन्ह पूज्य गुरुदेव के दाहिने हाथ में स्पष्टता के साथ देखा है, जिसके भी हाथ में ऐसा चिन्ह होता है, शास्त्रों के अनुसार – वह अद्वितीय युग-पुरुष होता है, ऐसे व्यक्ति के दर्शन प्राप्त करना ही सौभाग्यदायक होता है, वास्तव में वे अत्यन्त सौभाग्यशाली माने जाते है जो ऐसे व्यक्तित्व के सम्पर्क में या साहचर्य में रहते हैं।

कहते-कहते पंडित पीताम्बर दत्त जी खो से गये, शायद उन्हें अपने बाल्य जीवन की घटनाएं याद आ गयी थी और उनकी आंखें भीग सी गई ।

मैंने अनुभव किया कि वास्तव में ही वर्तमान युग में एक अद्वितीय व्यक्तित्व हमारे बीच है, यह अलग बात है कि हमारी स्थूल और संदेह भरी आंखें नहीं पहिचान पाई या हमारा कुतर्की मन नहीं पहिचान पाये, परन्तु यदि समय रहते हम सब इनसे वंचित रह गये तो हमारा जीवन एक सामान्य जीवन वन कर रह जायेगा ।

बहुचर्चित व्यक्तित्व डा०नारायण दत्त श्रीमाली जी

मेरे कुछ शिष्य तैयार होकर साधना की अलख ज्योति जला सके, और अपना जीवन भारतीय संस्कृति की प्राचीन विद्याओं की प्रतिष्ठा में समर्पित कर दें, तो यह मेरा सबसे बड़ा सम्मान होगा ।

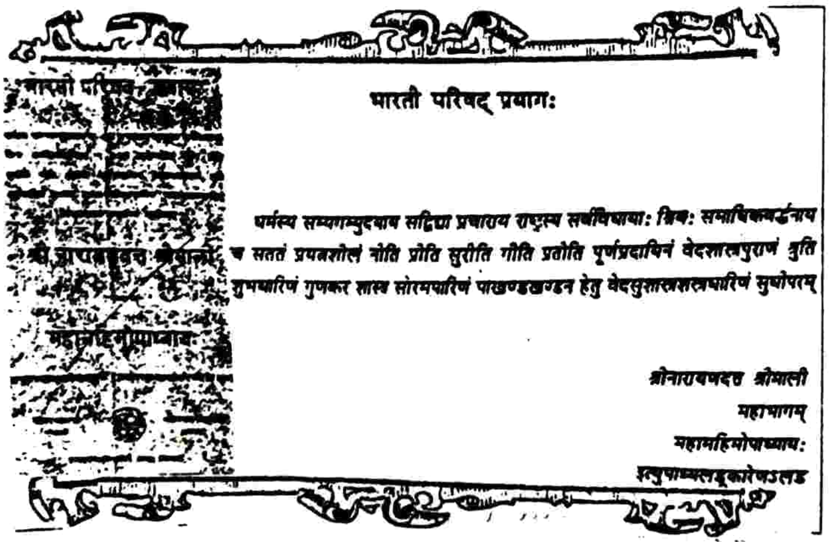
परम पूज्य गुरूदेव

समाज ने श्रीमाली जी के कार्य को परखा व सराहा है परंतु अभी भी हम उन्हे उस गहराई तक नही समझ पा रहे हैं हमारा चिंतन पूर्ण रूप से स्थूल तथा उथला ही है । वास्तव में परम पूज्य गुरूदेव अवतारी पुरुष हैं । आज तक यह किसी के लिए संभव नही हो सका की उनके ज्ञान की थाह पा सके ।समाज ने उन्हे विभिन्न सम्मान पत्र, उपाधि पत्र भेंट कियें हैं परंतु यह तो एक युग पुरूष के सम्मान में अत्यंत तुच्छ हैं । समाज को तो युग पुरूष के चरणों में वैठना चाहियें, वह चेतना प्राप्त करनी चाहिये,वह आनंद प्राप्त करना चाहिये, जो मात्र उसी से प्राप्त हो सकता है तथा युगान्तर के लिए तैयार हो जाना चाहिए।

यद्यपि परम पूज्य गुरूदेव नें स्वयं को बहुत छुपाकर कार्य किया है परंतु फिर भी जिन श्रेष्ठ वुद्धिजीवियों को उनके सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक उत्थान के कार्यो का पता चला तो उन्होने भी कोई ना कोई सम्मान पत्र अथवा उपाधि प्रदान करी । ज्योतिष सम्मेलन में पूज्य गुरूदेव को अद्यतन *वाराहमिहिर* की उपाधि से विभूषित किया गया, इसी प्रकार नेपाल के तत्कालिन राजदूत श्री रसगोत्रा ने सम्मान पत्र १९७४ में प्रदान किया -

> *Ambassador of India*
> *in Nepal Kathmandu.*
>
> *September 22, 1974*
>
> *Dr. Narayan Dutt Srimali, a renowned Indian Astrologer met me for the first time in Kathmandu and I have been deeply impressed by his vast knowldge of Jyotish Vidya in all fields of Astrology. His predictions about the future and his readings of the past based on scientific principles, are remarkably correct. Besides, Dr. Srimali is a man of extensive knowledge and deep culture and it is a joy to talk to him.*
>
> *M. Rasgotra*

इसी प्रकार १९७७ में काशी विद्यापीठ जो कि भारत के मूर्धन्य विद्वानों की संस्कृति व्याकरण की, साहित्य आचार्यो की सम्मानित संस्था है, ने एक भव्य समारोह में पूज्य गुरूदेव को 'महा महोपाध्याय'की उपाधि से सम्मानित किया और विद्वानों ने स्पष्ट किया कि यह सम्मान स्वीकार कर आपने संस्था को गौरवान्वित कर दिया है ।



भारती परिषद् प्रयागः

धर्मस्य सम्यगभ्युदयाय सद्विद्या प्रचाराय राष्ट्रस्य सर्वविधाया: श्रिय: समाधिकवर्द्धनाय च सततं प्रयत्नशीलं नीति प्रीति सुरीति गीति प्रतीति पूर्णप्रदायिनं वेदशास्त्रपुराणं श्रुति गुणधारिणं गुणकर शास्त्र सौरभधारिणं पाखण्डखण्डन हेतु वेदसुशास्त्रसत्रधारिणं सुधीपरम्

श्रीनारायणदत्त श्रीमाली
महाभागम्
महामहिमोपाध्याय:
इत्युपाध्यलङ्कारेणऽलङ्

दिल्ली में वर्ष १९७९ में विश्व ज्योतिष सम्मेलन सम्पन्न हुआ जिसमें ६० से अधिक देंशो के ज्योतिर्विदो नें भाग लिया, इसकी अध्यक्षता श्रीमाली जी ने की थी । तीन दिनों के इस सम्मेलन के समापन पर विश्व के ज्योतिषियों ने प्रस्ताव पारित कर डा० श्रीमाली को विश्व के श्रेष्ठतम ज्योतिषी की उपाधि से अलंकृत किया था ।

वेदमाता गायत्री धाम परिवार और गायत्री महायज्ञ आयोजन समिति राजकोट ने १९८२ में पूज्य गुरुदेव के प्रति सम्मान पत्र प्रदान किया-।

हे सिद्धि पुरुष

हे मार्गदर्शक

विभूतिवर्य

हम हैं आपके सहयोगी
वेदमाता गायत्री धाम परिवार
और
गायत्री महायज्ञ आयोजन समिति
राजकोट दिनांक 9-5-82

गुजरात परिषद के ज्योतिविदों ने वर्ष १९८५ में परम पूज्य गुरूदेव को *ज्योतिष महामहोपाध्याय* की उपाधि से विभूषित किया।

All India Astrologers Federation

426, Spectrum Commercial Centre, Salapas Road, Ahmedabad-380 001.

Certificate

We, the president and members of the Managing Committee of the All India Astrologers Federation, take pleasure in awarding the Honorary degree of

JYOTISH MAHAMAHO PADHYAYA

to Dr. Narayandutt Shrimali in consideration of his meritorious services in the field of predictive Astrology and Palmistry, on the occasion of the International Astrological Convention

The Certificate has been conferred on him at Ahmedabad on 11 th day of the month February in the year one thousand nine hundred Eighty five.

In the testimony thereof are set the seal of the said federation & the signature of the said president.

सन् १९८९ में भारत के वर्तमान राष्ट्रपति डा० शंकरदयाल शर्मा द्वारा नई दिल्ली में आयोजित एक मुख्य समारोह में पूज्य गुरूदेव को 'समाज शिरोमणि' की उपाधि से विभूषित किया गया । उपाधि पत्र में लिखा गया ....

समाज शिरोमणि
राष्ट्रीय पुरस्कार

भारत के उपराष्ट्रपति
महामहिम डॉ० शंकरदयाल शर्मा
के करकमलों से
डॉ० श्रीमाली नारायणदत्त को ... के क्षेत्र में
विशिष्ट योगदान के लिये
वर्ष १९८९ के
राष्ट्रीय पुरस्कार से
सम्मानित किया गया।

'महामहिम डा० शंकरदयाल शर्मा के करकमलों से डा० श्रीमाली नारायण दत्त को ज्योतिष एवं प्राचीन भारतीय विधाओं के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के लिए वर्ष १९८९ के राष्ट्रीय पुरुस्कार से सम्मानित किया गया।'

वर्ष १९९१ में जबकि गुरूदेव नेपाल यात्रा पर थे । वहां के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री कृष्ण प्रसाद भट्टराई द्वारा नेपाल की राजधानी काठमाण्डु में एक समारोह आयोजित कर *अभिनंदन पत्र* भेंट किया ।

अभिनन्दन-पत्र

१९९२ में पूज्य गुरूदेव मारीशस की यात्रा पर गये और वहां तो जैसे प्रधानमंत्री तथा पूरा मंत्रीमंडल गुरूदेव से मिलने के लिए उमड़ पड़ा । मारीशस सरकार की ओर से पूज्य गुरूदेव को एक सम्मान पत्र प्रस्तुत किया गया ।

१९९३ में पूज्य गुरूदेव को इंडियन बोर्ड ऑफ अलटर्नेटिव मेडिसिन, कलकत्ता ने सम्मानित किया ।वास्तव में यह इस अखिल भारतीय संस्था का ही सम्मान है ।

सम्मानों की यह श्रृंखला बहुत बड़ी है परन्तु गुरूदेव कहते हैं कि मुझे इससे दूर ही रहने दो । बड़े-बड़े नेता, अभिनेता, अभिनेत्रियां, संगीतज्ञ, तांत्रिक, मांत्रिक और श्रेष्ठ ज्योतिषी सभी उनसे मिलने के लिए लालायित रहते हैं और उन दिव्य क्षणों की स्मृति रूप चित्र लेते हैं।

Indian Board Of Alternative Medicines

CHOWRINGHEE ROAD, CALCUTTA-700 [illegible], INDIA

Ref. No. ...1997/93... Date ...16/11/93...

To
Dr. N. D. Shrimali,
Dr. Shrimali Marg,
High Court Colony, Jodhpur.

Sub : Appointment as Hony. Advisor.

Dear Sir,

You will be happy to know that the Indian Board of Alternative Medicines has been established for the promotion and popularization of the various systems of treatment and healing.

We have already organised two All India Congress of Alternative Medicines in Calcutta which were supported and attended by a galaxy of V.I.P.s and the practitioners from all over India, and the neighbouring countries and Poland.

Now we are going to organise the 1st International Congress of Alternative Medicines on the occasion of the World AIDS day on 1st Dec.,1993 at Park Hotel, Calcutta.

I am very much pleased to inform you that in view of your keen interest and experience on Astrology, the Indian Board of Alternative Medicines has decided to appoint your goodself as Hony. Advisor of the Indian Board of Alternative Medicines. It will be a great moral encouragement and honour to have you guided us for the successful implementation of the activities of Board towards the development of the Alternative systems of medicines for the benefit of the people.

It will be indeed very kind of you if you can drop a line in confirmation of your acceptance.

Thanking you,

Yours faithfully,

(Dr. A.K. Agarwal)
President.

N.B. : Please enclose two passport size photographs and a copy of the Bio-data alongwith your confirmation letter.

1st International Congress of Alternative Medicines & Convocation Ceremony on World AIDS Day 1st December, 1993 at Park Hotel, Calcutta

[illegible]

Certificate of Recognition

to

DR. NARAYANDUTTA SHRIMALI

Your advent in Mauritius in December 1992 is a cause for joy and pride.
We are indeed fortunate to have an ascetic of your calibre in our midst.

Your profound knowledge in the field of religion especially in mantra, tantra, yantra, hindu philosophy, healing, and astrology is indeed unexcelled.
Your addresses and spiritual guidance during religious camp were invaluable and helped clear many misconceptions regarding tantra.
You gave us an enriching experience which we will cherish and nurture for years to come.

We received the spiritual heritage of the ancient seers through you – a renowned Sidh Yogi of the Himalayas – here in Mauritius.
Your contributions in the astrological field are unique.
Our people have had the benefit of your experience and your knowledge makes us think of you as a modern Varahamihira.

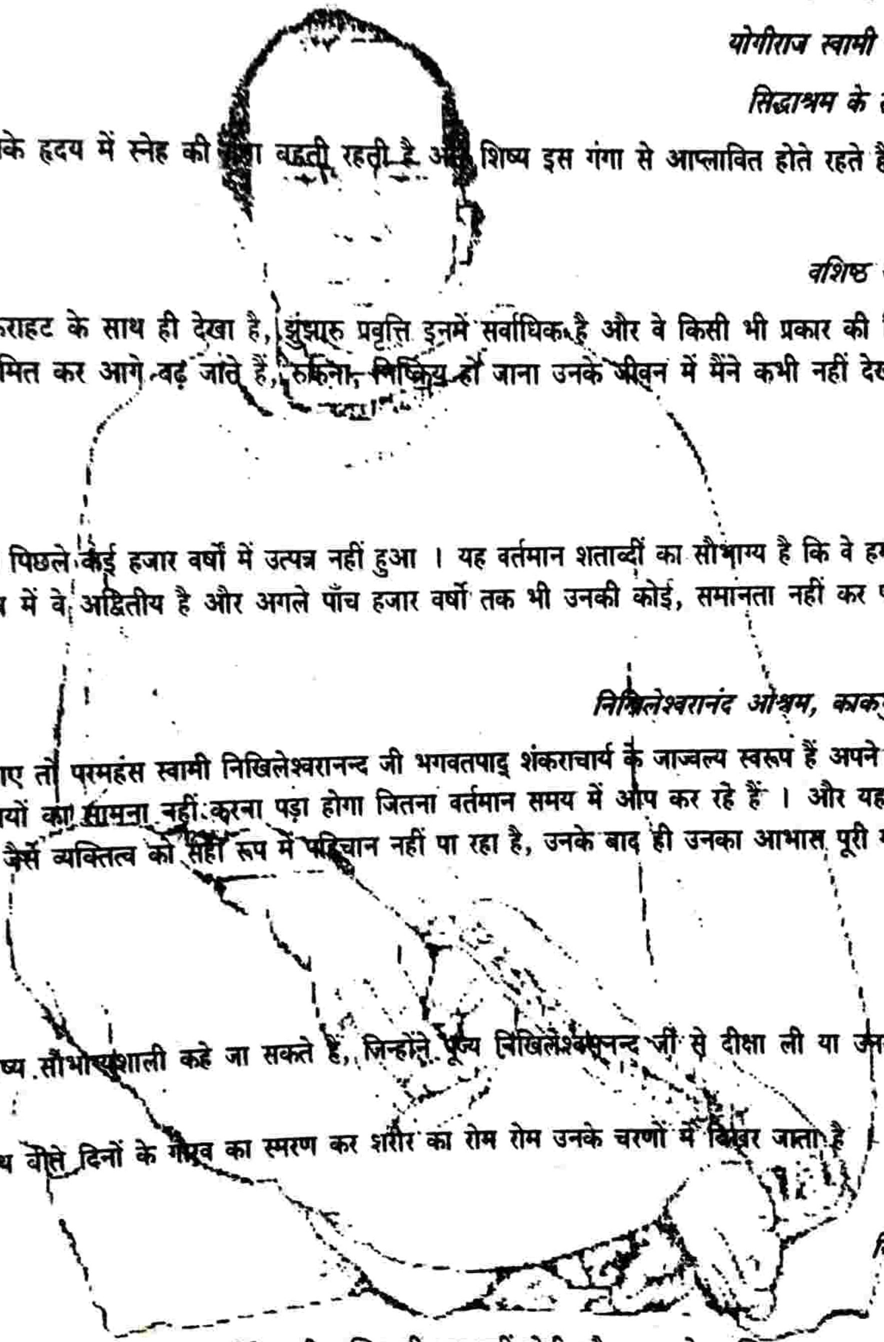
The local branch of the International Siddhashram Sadhak Parivar should be congratulated for bringing in our midst such a versatile personality and spiritual master to guide us when crude materialistic tendencies try to blur our vision. You are the supreme Jagat Guru amongst the Holy Rishis of the Sidhashram in the Himalayas.
Like Shankaracharya you are the universally acknowledged spiritual preceptor.

The spiritual message which you have brought to us from India gives us a deeper insight of the variegated aspects of Hinduism.
It is only by following a spiritual discipline that world peace can be brought about.
The bonds thus forged between our peoples will endure for years to come.
We hope that there will be permanent exchanges between our two countries.

Place [illegible]
Date 24 December 1992

Deputy Prime Minister
& Minister of Health

हिमालयवत् परम पूज्य गुरुदेव



निखिल जो कि मेरे हृदय का आधार है और मेरी आत्मा का ही प्रतिबिंब है उसने ऐसी कोई साधना, ऐसी कोई सिद्धि, ऐसा कोई तंत्र और ऐसा कोई दर्शन बाकी नहीं है जो इसने प्राप्त नहीं किया हो। इसके माध्यम से विश्व आध्यात्मक चेतना प्राप्त कर सकेगा ।

योगीराज स्वामी सच्चिदानंद परमहंस

सिद्धाश्रम के संस्थापक - संचालक

कठोर होते हुए भी उनके हृदय में स्नेह की गंगा बहती रहती है और शिष्य इस गंगा से आप्लावित होते रहते हैं ।

योगी ज्ञानानंद,

वशिष्ठ आश्रम, उत्तर काशी

मैंने इन्हें सजीव मुस्कराहट के साथ ही देखा है, झुंझारु प्रवृत्ति इनमें सर्वाधिक है और वे किसी भी प्रकार की विपरीत परिस्थितियों में अपने आपको पूरी तरह संयमित कर आगे बढ़ जाते हैं, रुकना, निष्क्रिय हो जाना उनके जीवन में मैंने कभी नहीं देखा है ।

परम योगी भृगु

'साधक' पत्रिका से

उनके जैसा व्यक्तित्व पिछले कई हजार वर्षों में उत्पन्न नहीं हुआ । यह वर्तमान शताब्दीं का सौभाग्य है कि वे हमारे बीच हैं, साधना सिद्धियों और ब्रह्ममयता के क्षेत्र में वे अद्वितीय है और अगले पाँच हजार वर्षो तक भी उनकी कोई, समानता नहीं कर पाएगा ।

स्वामी अद्वेतानंद

निखिलेश्वरानंद आश्रम, काकभुशंडी स्थल, गोमुख

सही अर्थों में कहा जाए तो परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी भगवतपाद् शंकराचार्य के जाज्वल्य स्वरूप हैं अपने समय में शंकराचार्य को भी इतनी विषम परिस्थितियों का सामना नहीं करना पड़ा होगा जितना वर्तमान समय में आप कर रहे हैं । और यह देश का दुर्भाग्य है कि स्वामी निखिलेश्वरानंद जी जैसे व्यक्तित्व को सही रूप में पहिचान नहीं पा रहा है, उनके बाद ही उनका आभास पूरी मानव जाति अनुभव करेगी ।

त्रिजटा अघोरी

सिद्धाश्रम वाणी से

वास्तव में ही वे शिष्य सौभाग्यशाली कहे जा सकते हैं, जिन्होंने पूज्य निखिलेश्वरानन्द जी से दीक्षा ली या उनका शिष्य बनने का गौरव प्राप्त किया है ।

आज भी उनके साथ बीते दिनों के गौरव का स्मरण कर शरीर का रोम रोम उनके चरणों में बिखर जाता है

स्वामी कैवल्यानन्द

निखिलेश्वरान्द शिला,

वासुकी, केदारनाथ

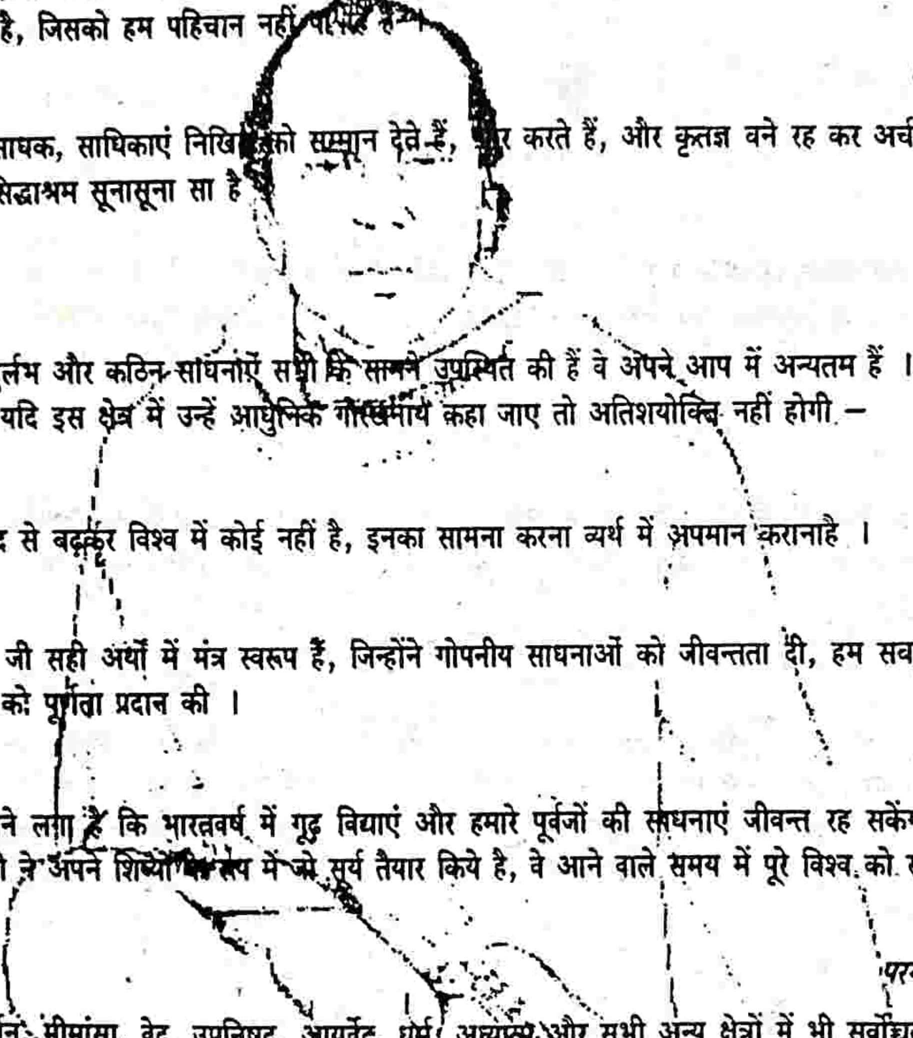
यह भारत का दुर्भाग्य रहा है कि यहां पर जीते - जी व्यक्ति की कद्र नहीं होती और न उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन ही सही प्रकार से किया जाता है, यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि वे निखिलेश्वरान्द जी जैसे व्यक्तित्व की महता की भली प्रकार से आंक नहीं रहे है ।

स्वामी प्रणवान्द जी

निरन्तर परिश्रम करते हुए अपने शरीर को तिल-तिल जलाते हुए भीषण आलोचनाओं में भी मुस्कुराते हुए, निखिलेश्वरानन्द जी जिस प्रकार से साधनाओं को अपने शिष्यों में पुनर्स्थापित कर रहे हैं, और बिना स्वार्थ के जो कार्य वे कर रहे हैं, ऐसा उदाहरण पिछले दस हजार वर्षों में भी प्राप्त नहीं होता। वास्तव में स्वामी निखिलेश्वरानंद जी योगियों में सर्वश्रेष्ठ और साधनाओं में सिद्धेश्वर हैं।

परमहंस स्वामी विज्ञानानन्द

एक मानव इतने -इतने कार्यों और साधनाओं में पूर्णतः निपुण नहीं हो सकता, अवश्य ही स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी के रूप में कोई अलौकिक दिव्य शक्ति है, जिसको हम पहिचान नहीं पा रहे हैं।



योगीराज धूर्जटा वावा

सिद्धाश्रम के सभी साधक, साधिकाएं निखिल को सम्मान देते हैं, प्यार करते हैं, और कृतज्ञ वने रह कर अर्चना, पूजा और सम्मान करते है । उनके बिना तो सिद्धाश्रम सूनासूना सा है ।

स्वामी योगन्दयानंद

श्रीमाली जी ने जो दुर्लभ और कठिन साधनाऐं सभी के सामने उपस्थित की हैं वे अपने आप में अन्यतम हैं । उनके तांत्रिक स्वरूप को मैं पहले से ही जानता हूँ यदि इस क्षेत्र में उन्हें आधुनिक गोरखनाथ कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी —

भुर्भुआ वावा

स्वामी निखिलेश्वरानंद से बढ़कर विश्व में कोई नहीं है, इनका सामना करना व्यर्थ में अपमान करानाहै ।

मां कृपालु भैरवी

पूज्य निखिलेश्वरानंद जी सही अर्थों में मंत्र स्वरूप हैं, जिन्होंने गोपनीय साधनाओं को जीवन्तता दी, हम सव को गरिमा दी, और हजारों लाखों साधकों, शिष्यों को पूर्णता प्रदान की ।

योगीराज श्यामा चरण

अव यह विश्वास होने लगा है कि भारतवर्ष में गूढ़ वियाएं और हमारे पूर्वजों की साधनाएं जीवन्त रह सकेंगी, वीस - वीस घंटे परिश्रम कर निखिलेश्वरानंद जी ने अपने शिष्यों के रूप में जो सूर्य तैयार किये है, वे आने वाले समय में पूरे विश्व को साधनात्मक प्रकाश से भर देंगे।

परमहंस स्वामी ज्ञान देव

मंत्र, तंत्र, योग, दर्शन, मीमांसा, वेद, उपनिषद, आयुर्वेद, धर्म, अध्यात्म और सभी अन्य क्षेत्रों में भी सर्वोच्चता प्राप्त करना अपने आप में ही प्रमाण है, कि निखिलेश्वरानन्द जी के रूप में कोई अद्वितीय विभूती हम सब के वीच में है ।

परमहंस स्वामी दिव्यानन्द जी

मैं स्वयं इनका शिष्य रहा हूं, और उत्तर काशी में स्थित 'प्रत्यंग आश्रम' में छः लाख सन्यासी शिष्य इसके गवाह है, कोई भी आकर इस वारे में जांच कर सकता है । पूज्य स्वामी जी ने हादी विया की दीक्षाएं भी दी है, सन्यासियों को भी और गृहस्थ व्यप्त हुई है।

स्वामी निरंजनदेव

पूर्णानन्द आश्रम , टिहरी-गढ़वाल

वास्तव में ही स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी ने परकाया प्रवेश करके दिखाया व सिखाया उससे भारतीय साधनाओं के प्रति हम सभी शिष्यों का मस्तक गर्व दीप्त हो उठा है ।

योगी महेश्वरानन्द

भैरव घाट, गंगोत्री

निखिल रहस्यम्

महत्रूपं ज्ञेय भव च मह प्रेम श्रिय सहौ भवत्कर्म कृष्ण परम प्रिय प्रीतिनव श्रुतः ।
प्रतौ पूर्ण गीतां सह च गुरूवैर्ण श्रिय मिदं स पूर्णत्वं पूर्ण कलतः मह षोडर्शित कथः ॥

यह मैं नहीं, अपितु पूरा सिद्धाश्रम जानता है, कि आपने ही एक अंश से श्रीकृष्ण के रूप में जन्म ले कर कर्मयोग को पुनः पृथ्वी पर स्थापित किया, आप में और श्रीकृष्ण के चिन्तन, कार्य और भाव-भूमि में अद्‌भुत साम्य है, दूसरे शब्दो में कहा जाय तो आप दोनों में कुछ भी अन्तर नहीं हैं, वे भी प्रेममय थे, और आपने भी कर्म क्षेत्र में प्रेम की पवित्र धारा को प्रवाहित किया, वे कूटनीतिज्ञ थे, और परिस्थितियों के अनुसार सम्पूर्ण जन समुदाय को अपने पीछे चलने के लिए विवश किया, और जीवन के जितने भी आयाम थे, उन सभी आयामों को उन्होंने पूर्णता के साथ ग्रहण किया, वे गृहस्थ थे, प्रेमी थे, योगी थे, सन्यासी थे, जगद्गुरू थे, गीता जैसे ग्रन्थ के रचयिता थे, और आनन्दप्रद थे, आप के जीवन को यदि सूक्ष्मता से आंका जाय, तो ये सभी तत्व पूर्णता के साथ आप में समावेश हैं, ऐसा ही प्रतीत होता है, कि उस अंश ने पुन आप के रूप मे जन्म लेकर इतिहास मे एक नया अध्याय खोलने का प्रयास किया है, मैं आपको, इस मोहिनी मूर्ति और आनन्द मय स्वरूप को भक्ति भाव से प्रणाम करता हूँ ॥

महौ पूर्ण ज्ञान सहत शिव शांकर्य श्रुति च स्व अंशत्वं देवं प्रहर मति ज्ञानर्णव इति ।
महौत्व्याघ्र रूपं गज गणद यूथ सहितरौ स्वधन्यत्व पूर्ण परम प्रिय पूर्ण त्व निखिलौ ॥

हे, गुरूदेव ! अब इसमें तो कोई संदेह नहीं रह गया, कि आप भगवत्पाद शंकराचार्य के मूल स्वरूप हैं, जिस अंश से शंकराचार्य ने जन्म लिया, वही अंश आप में अवतरित हुआ है, आपने भी शंकराचार्य की तरह योग, वेद, उपनिषद, वेदान्त आदि सभी तत्वों का पूर्णता के साथ अध्ययन किया है, और जब आप धारा प्रवाह बोलते हैं, और सामने वाले विद्वानों के तर्कों का खंडन करते हैं, तो देखते ही बनता है, आपके सामने वे सभी विद्वान उसी प्रकार से भाग जाते हैं, जिस प्रकार से विकराल व्याघ्र को आते देख कर हाथियों का झुण्ड तितर-बितर हो जाता है, आपकी गर्जना से उनके चित में व्याकुलता बढ़ जाती है, और व स्वयं परास्त होकर क्षमा मुद्रा में आ जाते हैं, वास्तव में ही आप ने पृथ्वी पर अवतरित हो कर अकेले व्यक्तित्व ने जितना कार्य किया है, उतना तो हजारों योगी या सन्यासी मिल कर भी नहीं कर पाते ॥

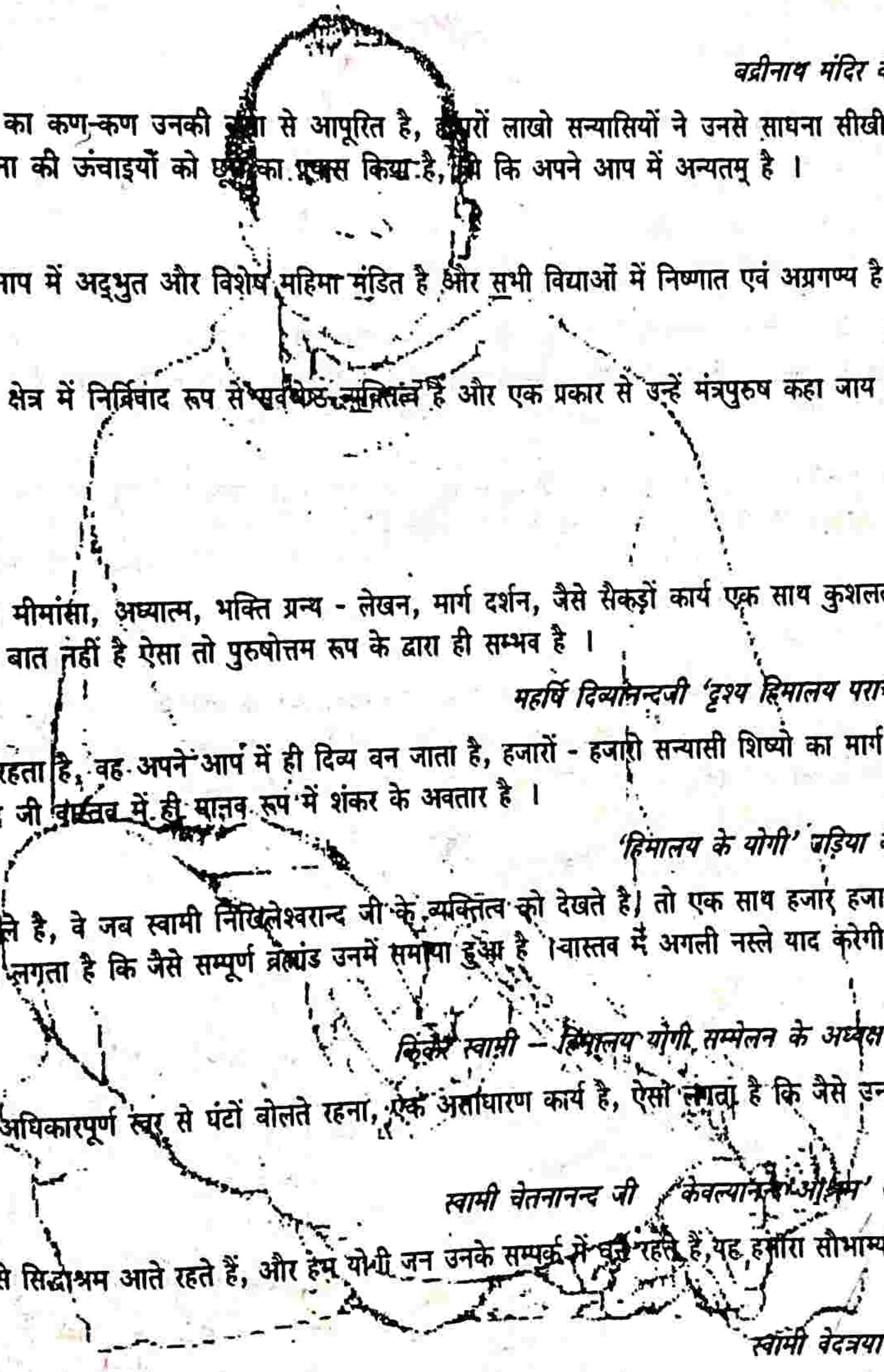
परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी को मैंने निकट से समझने का प्रयास किया है और यह हमारे देश का और देशवासियों का सौभाग्य है कि ऐसा अद्वितीय व्यक्तित्व हमारे बीच है, हम उन्हें शत शत वन्दन करते हैं, नमन करते हैं और उनके प्रति श्रद्धानत है।

योगी निर्मलदेव

पूज्य निखिलेश्वरानन्द जी का व्यक्तित्व अनिवर्चनीय है जिसके प्रकाश में हम शिष्य निर्भीक भाव से गतिशील है ।

चैतन्य भैरवी

बद्रीनाथ मंदिर के पास, बद्रीनाथ



मैं ही नहीं, हिमालय का कण-कण उनकी कृपा से आपूरित है, हजारों लाखो सन्यासियों ने उनसे साधना सीखी है, सृष्टि के गूढ़ रहस्यों को जाना है, और साधना की ऊंचाइयों को छूने का प्रयास किया है, जो कि अपने आप में अन्यतम् है ।

स्वामी योगत्रयानंद

यह व्यक्तित्व अपने आप में अद्‌भुत और विशेष महिमा मंडित है और सभी वियाओं में निष्णात एवं अग्रगण्य है ।

स्वामी प्रवृज्या नंद

डॉ० श्रीमाली मंत्र के क्षेत्र में निर्विवाद रूप से सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व है और एक प्रकार से उन्हें मंत्रपुरुष कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी ।

बैताल भट्ट

कैलाश आश्रम

तन्त्र मन्त्र योग दर्शन मीमांसा, अध्यात्म, भक्ति ग्रन्थ - लेखन, मार्ग दर्शन, जैसे सैकड़ों कार्य एक साथ कुशलता के साथ सम्पन्न करना किसी पुरुष के बस की बात नहीं है ऐसा तो पुरुषोत्तम रूप के द्वारा ही सम्भव है ।

महर्षि दिव्यानन्दजी 'दृश्य हिमालय पराचेतना केंद्र' गोमुख

जो उनसे सम्पर्कित रहता है, वह अपने आप में ही दिव्य वन जाता है, हजारों - हजारों सन्यासी शिष्यो का मार्ग दर्शन करने वाला व्यक्तित्व स्वामी निखिलेश्वरानंद जी वास्तव में ही मानव रूप में शंकर के अवतार है ।

'हिमालय के योगी' उड़िया के प्रसिद्ध ग्रन्थ से

जिनके दिव्य नेत्र खुले है, वे जब स्वामी निखिलेश्वरान्द जी के व्यक्तित्व को देखते है तो एक साथ हजार हजार देव रूप एक ही देह में दिखाई दे जाते है, ऐसा लगता है कि जैसे सम्पूर्ण ब्रह्मांड उनमें समाया हुआ है ।वास्तव में अगली नस्ले याद करेगी की आपने स्वामी निखिलेश्वरान्द को देखा है ।

किंकर स्वामी – हिमालय योगी सम्मेलन के अध्यक्ष पद से वोलते हुए

किसी भी विषय पर अधिकारपूर्ण स्वर से घंटों वोलते रहना, एक असाधारण कार्य है, ऐसा लगता है कि जैसे उनके कंठ में साक्षात् वागू देवी उपस्थित है ।

स्वामी चेतनानन्द जी 'कैवल्यानन्द आश्रम' अमरनाथ काश्मीर

वे नित्य सूक्ष्म शरीर से सिद्धाश्रम आते रहते हैं, और हम योगी जन उनके सम्पर्क में बने रहते हैं, यह हमारा सौभाग्य है, अति सौभाग्य है ।

स्वामी वेदत्रयानन्दजी - सिद्धाश्रम

काश! हम उन्हें (स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी) पहिचान पाते उनसे सम्पर्कित हो पाते, उनके चरणों में वैठकर लुप्त, दुर्लभ और गोपनीय साधनाओं को सीख पाते और उनके शिष्य – वास्तविक सही अर्थो में शिष्य - कहलाने का गौरव प्राप्त कर पाते, ।

'चेतनांद स्मृतियां' बंगला के प्रसिद्ध ग्रन्थ से,

वर्तमान युग के वे (स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी) अत्यधिक तेजस्वी और अद्वितीय व्यक्तित्व हैं, आनेवाली पीढ़ियां ही उनका सही मूल्यांकन कर सकेंगी ।

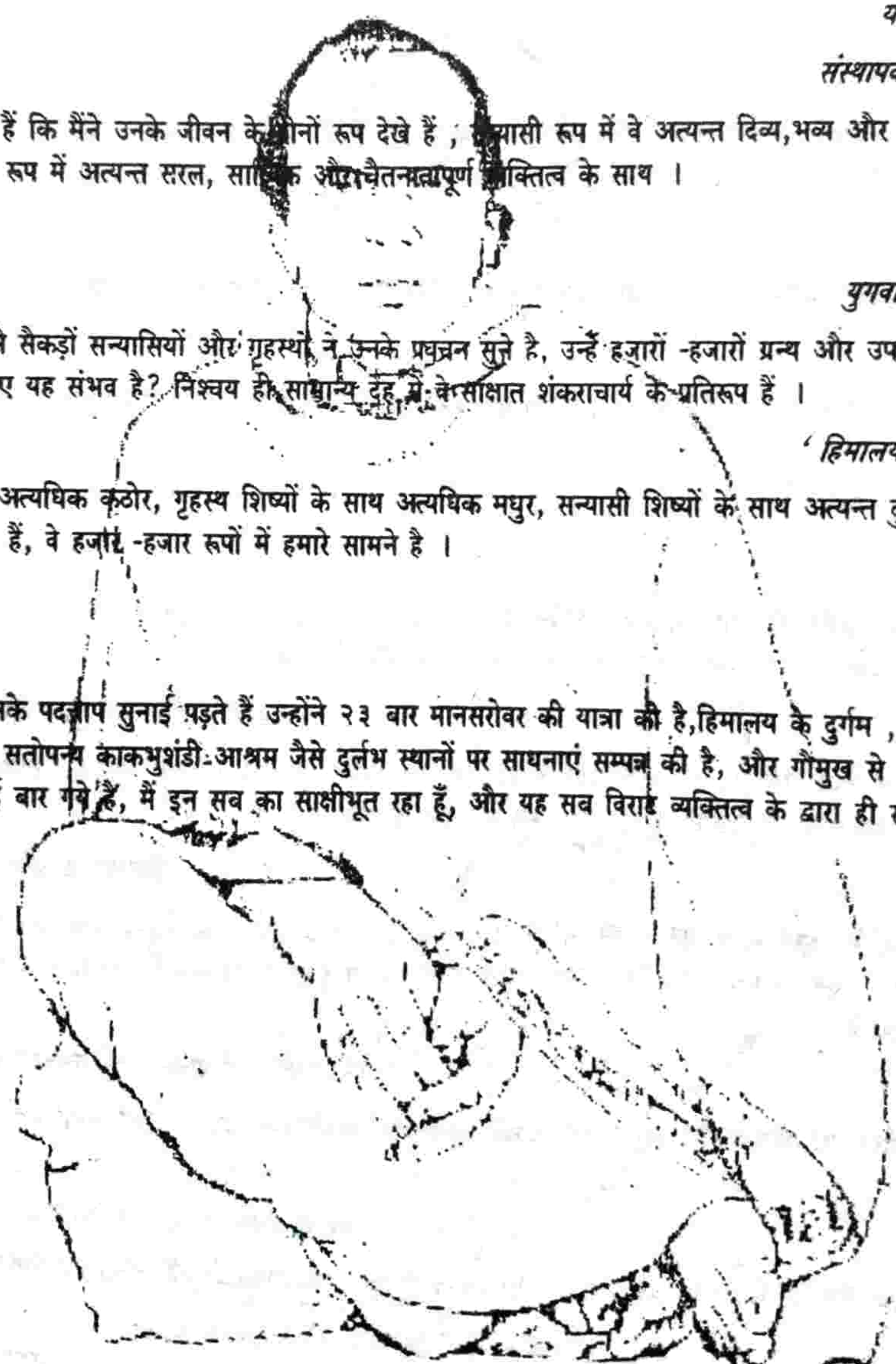
तुषेन्दु कुमार बनर्जी

आमार योगी' - ग्रंथ से

मैंने उनको सन्यासी रूप में हिमालय में विचरण करते हुए देखा है, उनके विराट व्यक्तित्व के सामने पूरा हिमालय वौना है ।

योगीराज चेतनानन्द जी

संस्थापक - देवधाम-उत्तरकाशी



यह मेरा सौभाग्य हैं कि मैंने उनके जीवन के तीनों रूप देखे हैं , सन्यासी रूप में वे अत्यन्त दिव्य,भव्य और तेजस्वितापूर्ण योगीराज के रूप में रहे है तो गृहस्थ रूप में अत्यन्त सरल, सात्विक और चैतन्यतापूर्ण व्यक्तित्व के साथ ।

स्वामी हरिहरानन्द जी

युगवाणी पत्रिका - कनखल

मैं ही नहीं मेरे जैसे सैकड़ों सन्यासियों और गृहस्थों ने उनके प्रवचन सुने है, उन्हें हजारों -हजारों ग्रन्थ और उपनिषद कंठस्थ है, क्या एक साधारण व्यक्ति के लिए यह संभव है? निश्चय ही साधारण देह में वे साक्षात शंकराचार्य के प्रतिरूप हैं ।

' हिमालय के योगी'- ग्रन्थ से

वे साधना क्षेत्र में अत्यधिक कठोर, गृहस्थ शिष्यों के साथ अत्यधिक मधुर, सन्यासी शिष्यों के साथ अत्यन्त दुर्द्धेष और योगियों के वीच अत्यन्त दिव्य व्यक्तित्व हैं, वे हजार -हजार रूपों में हमारे सामने है ।

स्वामी भूमानन्द

' परा' ग्रन्थ से

पूरे हिमालय पर उनके पदचाप सुनाई पड़ते हैं उन्होंने २३ बार मानसरोवर की यात्रा की है,हिमालय के दुर्गम , दुर्लभ और गोपनीव स्थानों को उजागर किया है, सतोपन्थ काकभुशंडी-आश्रम जैसे दुर्लभ स्थानों पर साधनाएं सम्पन्न की है, और गौमुख से बद्रीनाथ तक वर्फीले पर्वतों पर त्वरित गति से कई बार गये हैं, मैं इन सब का साक्षीभूत रहा हूँ, और यह सब विराट व्यक्तित्व के द्वारा ही संभव है ।

स्वामी महेशानन्दजी

गंगोत्री धाम

अमृत निर्झर

" तुम सामान्य रूप से उत्पन्न नहीं हुए हो, प्रभु ने तुम्हारा जन्म एक विशेष उद्देश्य से निर्मित किया है , पशु-पक्षी की तरह तुम्हारा जीवन नही है, तुम्हारे जीवन का उत्स मुझे मालुम है, और सही अर्थो में देखा जाय, तो तुम एक क्षेत्र या किसी विशेष स्थान के ही नही हो अपितु सही अर्थो में पूरी पृथ्वी के पुत्र हो, और इससे भी आगे वढ़ कर तुम्हे 'ब्रह्माण्ड पुत्र'वनने की तैयारी करनी है, एक सामान्य मानव, एक सामान्य जीवन, या एक सामान्य पृथ्वी-वासी बनने से यह सव कुछ प्राप्त नही हो जायेगा, जो तुम्हारा लक्ष्य है, जो तुम्हारा अभीष्ट है, जो तुम्हारा चिन्तन है, वह तो सही अर्थो में पूरे ब्रह्माण्ड में विचरण करना है, पूरे ब्रह्माण्ड को अपने पैरों से नापना है, पूरे ब्रह्माण्ड में सहज, अवाध गति से विचरण करना है ।

तुम्हे चुनौती भरे कदमों से दम ठोंक कर खड़े होना है , आंख में तेवर होना चाहिये और चेहरे पर दृढ़ता का भाव, पर यह सब तव हो सकता है जब तुम्हारे पास साधना का खड्ग हो , उस खड्ग से तुम में जोश, साहस और तुम में पौरूष आ सकता है, उस खड्ग से जीवन की वाधाओं को समाप्त किया जा सकता है, उस खड्ग से तुम शत्रुओं पर हावी हो सकते हो, और जीवन की बाधाओं, अड़चनो और कठिनाईयों को ठोकर मार कर परे ढकेल सक्ते हो ।

तुम्हारे सशक्त सक्षम गुरु हैं, जो तपा-तपाया साधना के अनुभवों से सिद्ध है जो तुम्हें सहज उपलब्ध है, वह गिरी - कन्दराओं में छुप कर वैठा हुआ नहीं है, वो तुमसे इतना दूर नहीं है कि जहां तुम्हारी पहुंच ही नहीं हो सके, वह इतना ऊंचा शिखर नहीं है कि जहां तुम्हारे पांव नहीं पहुंच सकें, यह तुम्हारा सौभाग्य है कि वह तुम्हारे जीवन में सहज उपलब्ध है ।

पर इसके लिए तुम्हारे पास संकल्प-शक्ति होनी चाहिए, उसके पास पहुंचने की क्रिया होनी चाहिए,उस पर विश्वास करने का भाव होना चाहिए, और समय देते हुए, साघनाओं में वैठने का चिन्तन होना चाहिए ।

मैं तुम्हारे इस जन्म का साक्षीभूत गुरु ही नहीं हूँ, अपितु पिछले पच्चीस जन्मों का लेखा-जोखा,हिसाव -किताव मेरे पास है, और हर वार मैंने तुम्हें आवाज दी है, और तुमने अनसुनी कर दी है हर वार तुम्हारे प्राणों की चौखट पर दस्तक दी है, और हर बार तुम किवाड़ बन्द कर के बैठ गये हो, हर बार मैंने तुम्हें झकझोरने का, जाग्रत करने का, चैतन्यता प्रदान करने का प्रयास किया है, और हर वार तुमने अपना मुँह गृहस्थ और समाज को भुर भुरी रेत में छिपा कर अनदेखा अनसुना कर दिया है ।

मैंने तुम्हें अपना नाम दिया है, और इससे भी वढ़ कर मैंने तुम्हें अपना पुत्र और आत्मीय कहा है, अपना गोत्र तुम्हें प्रदान किया है और अपने जीवन के रस से सींच-सींच कर तुम्हारी बेल को मुरझाने से बचाने का प्रयास किया है, तुम्हारी सूखी हुई टहनियों में रस प्रदान करने का सफलता पूर्वक प्रयास किया है और मेरा यह प्रयत्न रहा है, कि इन सूखी हुई टहनियों में फिर नई कोपले आवें, फिर वातावरण सौरभमय बने, मैंने जीवन के प्रत्येक क्षण को इसके लिए लगाया है, अपनी जवानी को, हिमालय के पत्थरों पर घिस-घिस कर तुम्हें अमृत पिलाने का प्रयास किया है, तुम्हारे प्रत्येक जन्म में मैंने चेतना देने की कोशिश की है, और हर बार तुम्हारे मुरझाए हुए चेहरे पर एक खुशी एक आह्लाद , एक चमक प्रदान करने का प्रयास किया है । यह हर बार हुआ है, और यह पिछले कई जन्मों से होता रहा है, क्योंकि मैंने हर क्षण तुम्हारे लिए ही प्रयत्न किया है, मेरा जीवन स्वयं के लिए या परिवार के लिए नहीं है, मेरा जीवन तो शिष्यों के लिए है, मेरे जीवन का उद्देश्य तो शिष्यों को पूर्णता देने का प्रयास है, और इसके लिए मैने सिद्धाश्रम जैसा आनन्ददायक और अनिवर्चनीय आश्रम छोड़ा और तुम्हारे इस मैले- कुचैले गलियारों में आकर बैठा, जो वायु वेग से एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए सक्षम था,उसने तुम्हारे लिए अपने आप को एक छोटे से वाहन में वन्द कर लिया, जिसका घर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड था और किसी भी ग्रह या लोकों में विचरण करता हुआ निरन्तर आनन्दयुक्त था, उसने तुम्हारे लिए अपने आप को एक छोटे से घर में आवद्ध कर लिया,तुम्हारे लिये वह समाज से जूझा, आलोचनाएं सुनी, गालियां खाई और कई प्रकार के कुतर्को का सामना किया, यह सव क्यों ? क्या जरुरत थी उसे यह सब सहन करने की, झेलने की, भुगतने की ?

मेरा प्रत्येक क्षण इस वात के लिए कृत संकल्प था और है कि मैं तुम्हें समाज में गर्व से सिर तानकर खड़ा रहने की प्रेरणा दू मैं तुम्हें इस गन्दगी से भरे समाज में देव दूत बनाकर खड़ा कर सकूं । तुम्हारी आंखों में एक चमक पैदा कर सकूं, तुम्हारे पंखो में इतनी ताकत दे सकूं कि वह आकाश में सुदूर ऊंचाई पर बिना थके पहुंच सके, और उस ब्रह्मत्व का आनन्द ले सके, मैं तुम्हें उन इन्द्र धनुष के रंगो पर रंग बिखेरने के लिए तैयार कर सकूं, जहां विस्तृत प्रकाश हो जहां आनन्द का समुद्र लहलहा रहा हो, जहां प्रेम और माधुर्यता की शीतल बयार हो, जहां पूर्णता और सिद्धियां जयमाला लिए तुम्हारे गले में हार डालने के लिए उद्यत और उत्सुक हो ।

मैं तो तुम्हें स्पष्ट रूप से कहता ही आया हूँ, कि जब जिन्दगी के इस मोड़ पर मैं तुम से मिला हूँ, तो फिर तुम्हें अपनी आंखें खोल देनी चाहिए, अपनी तन्द्रा से जाग कर मुझे पहिचानने का प्रयास करना चाहिए तुम मृत्यु की जिस पगडंडी पर वढ़ रहे हो, उससे पलट कर मेरा हाथ पकड़ लेना चाहिए, मेरे पांवों से पांव मिला कर वढ़ना चाहिए, क्योंकि मैं तुम्हें जिस रास्ते पर गतिशील कर रहा हूँ, वह अमृत्यु का रास्ता है, वह आनन्द का पथ है, वह सिद्धाश्रम का मार्ग है, जहां वुढ़ापा नहीं है, जहां रोगों का आक्रमण नहीं है, जहां चिन्ताएं आस-पास खड़ी दिखाई नहीं देती,जहां वाधाएं आगे वढ़ कर तुम्हारा रास्ता नहीं रोक पाती ।

मैं तुम्हारें साथ हूँ, क्योंकि तुम्हारे पांव मेरे पांव के साथ आगे वढ़ रहे हैं, क्योंकि मैं तुम्हारे जीवन का ध्यान रखने वाला, तुम्हारे जीवन को आह्लादकारक वनाने वाला और तुम्हारे जीवन के प्रत्येक क्षण का हिसाव- किताब रखने वाला साथ हूँ ।

यदि शिष्य सही अर्थो में शिष्य है, यदि सही अर्थों में मेरी आत्मा का अंश है, यदि सही अर्थों में मेरी प्राणश्चेतना है, तो उसके पांव किसी भी हालत में रुक नहीं सकते, समाज उसका रास्ता रोक नहीं सकता, परिवार उसके पैरो में वेड़ियां डाल नहीं सकता, वह तो हर हालत में आगे वढ़ कर गुरु चरणों में मुझ में एकाकार होगा ही, क्योंकि यह एकाकार होना ही जीवन की पूर्णता है, और यदि ऐसा नहीं हो सका तो वह शिष्यता ही नहीं है, वह तो कायरता है, वुझदिली है, कमजोरी है, नपुंसकता है, और मुझे विश्वास है, कि मेरे शिष्यों के साथ इस प्रकार के घिनौने शव्द नहीं जुड़ सकते ।

सिद्धाश्रम साक्षी है, कि मैं तुम लोगों के वीच जीवन्त, सजग और सप्राण व्यक्तित्व हूँ, भौतिकता और आध्यात्मिकता के संतुलन को वनाये रखना एक कर्तव्य है, सामान्य साधकों के वीच उनकी तरह ही हर्ष विषाद, दुख और दैन्य को अनुभव करते हुए, जीवन के प्रत्येक क्षण को जीना है, और मैं इस प्रकार के जीवन से तुम लोगों को यह भान कराना चाहता हूँ कि इस प्रकार की परिस्थितियों में भी मुस्कराया जा सकता है, इस प्रकार की परिस्थितियों में भी अडिग रह कर अपने लक्ष्य की ओर पहुंचा जा सकता है, घोर अंधकार में भी ज्ञान के दीपक जलाये जा सकते हैं और आलोचनाओं की पंचाग्नि के वीच वैठ करके भी अपनी वात दृढ़ता के साथ कही जा सकती है, तुम में और मुझमें इतना अन्तर है, कि तुम जव जाओगे तो अपने साथ दुःख और दैन्य, कठिनाइयों और वीमारियों की पोटली लेकर जाओगे और मैं कपड़े झटँक कर निर्विकार भाव से एक तरफ खड़ा हो सकूंगा ।

मेरे दोनों हाथ तुम्हें वुलाने के लिए उठे हैं, मेरे हाथ तुम्हें समर्पण सिखाने के लिए खुले हैं मेरा हृदय तुम्हें समाहित करने के लिए जाग्रत हुआ है, ऐसी स्थिति में एक क्षण के लिए रुकना या ठिठकना जीवन को कमजोर करता है, यह समय तो तेजी के साथ आगे वढ़ कर समाहित हो जाने का है और यही तुम्हारे जीवन की पूर्णता है ।

जीवन में तुम्हें रुकना नहीं है, निरन्तर आगे वढ़ना है क्योंकि जो साहसी होते हैं, जो दृढ़ निश्चयी होते हैं जिनके प्राणों में गुरुत्व का अंश होता है, वही आगे वढ़ सकता है, और इस आगे वढ़ने में जो आनन्द है, जो तृप्ति है, वह जीवन का सौभाग्य है ।

गृहस्थ से भागने की जरुरत नहीं है, जरुरत है एक तरफ खड़े हो कर देखने की तुम्हारी एक आंख गृहस्थ पर हो, तो दूसरी आंख गुरु चरणों में नमन युक्त होनी चाहिए, तव तुम्हारे जीवन में कोई न्यूनता रहेगी ही नहीं , क्योंकि वह नमन युक्त आंख तुम्हारे जीवन को पूरी तरह से संवार देगी, सजग कर देगी, प्रकाशित कर देगी ।

सिद्धाश्रम साक्षी है, कि मैं तुम्हारा गुरु हूँ जीवन में सबसे कठिन कार्य गुरु वनना है, क्योंकि उसे अपने आप को हर क्षण दवोचना पड़ता है, हर क्षण शिष्यों की सन्देहशील नजरों को झेलना पड़ता है, कायर और वुझदिल शिष्यों की कानाफूसियों को सुनना पड़ता है, और उनके ओछे और घटिया स्तर के चिन्तन को अहसास करना पड़ता है ।

मैं आप लोगों के वीच सप्राण, सजग व्यक्तित्व के रूप में उपस्थित हूँ, क्योंकि तुम जिस मुर्दा शरीर को अपने कन्धे पर ढोते हुए चलते हो, मुझे तुम्हारे कन्धों पर से उस लाश को नीचे उतारना है, तुम्हारे चेहरे पर जो परेशानियों की लकीरें है उसे मिटानी है तुम्हारी आंखों में उदासी का जो अन्धकार घिर गया है, उसे हटाना है, और तुम्हारे जीवन में वुझदिली का जो भाव आ गया है, उसे समाप्त करना है ।

उन सन्यासी शिष्यों ने मेरे आनंद का अमृत चखा है, और इसीलिए वे मेरी उपस्थिति के विना भी मस्त हैं, चैतन्य है, नृत्य युक्त है, और मैं तुम्हें वही अमृत वांटने आया हूँ, तुम इस अमृत को तृप्ति के साथ चखो और तुम्हे अहसास होगा कि तुम्हारा जीवन जगमगाहट देने लगा है ।

पिछले जीवन में तुम्ही तो थे, जो मुझसे अलग हुए थे, मैं आवाज दे रहा था, और तुम नकली स्वप्नों के पीछे पीठ मोड़ कर भाग रहे थे, और तुमने अपने कान मेरी आवाज सुनने के लिए वन्द कर दिये थे, और उसी का परिणाम तुम्हारी ये चिन्ताएं है, ये परेशानियां है, ये जीवन की वाधाएं हैं ।

तुम्हे जीवन में कुछ भी विचार करने की जरुरत नहीं है, क्योंकि मैं प्रतिक्षण प्रतिपल तुम्हारे साथ हूँ । मुझे मालूम है, कि तुम्हें किस लक्ष्य तक पहुंचाना है, तुम्हें तो चुपचाप अपना हाथ मुझे सौंप देना है, आगे का कार्य तो मेरा है ।

अब तुम्हें ठिठकना नहीं है, रुकना नहीं है, पारिवारिक जिम्मेवारियों के बोझ तले अपने व्यक्तित्व को मटियामेट नहीं करना है, चिन्ताओं के बोझ के तले अब तुम्हें सिसकना नहीं है, अपितु तेजी के साथ व्याघ्र होने का परिचय देना है, तुम्हें बता देना है, कि तुम तेजस्वी व्यक्तित्व के शिष्य हो,उसकी चैतन्यता हो, उसकी धड़कन हो और तुम में परिवार को छोड़ कर खड़े होने की ताकत है, समर्पित होने की क्षमता है, और यह समर्पण अपने आप तुम्हें सिद्धियां प्रदान कर देगा, क्योंकि समर्पण ही सिद्धि है , अपने आप को विसर्जित कर देना ही जीवन की पूर्णता है, अपने आपको गुरु के प्राणों में समाहित कर देना ही समस्त देवताओं की साधना है, उनके दर्शन है, उनकी उपस्थिति हैं ।

तुम्हें साधना के और सिद्धियों के मोती नहीं मिल रहे है, तो यह कसूर तो तुम्हारा ही है क्योंकि तुम्हें समुद्र में गहराई के साथ उतरने की क्रिया नहीं आई, तुम में पूर्ण रूप से डूबने का भाव नहीं आया, गुरु के हृदय सागर में निश्चिन्त हो कर डूबकी लगाने की क्षमता नहीं आई, और जिस दिन तुम गहराई के साथ गुरु के हृदय में डूब सकोगे, तब वापिस बाहर आते समय तुम्हारी दोनों हथेलियां 'सिद्धि' के मोतियों से भरी होंगी ।

शिष्य का तात्पर्य नजदीक आना है, और ज्यादा नजदीक, इतना नजदीक, कि गुरु के प्राणों में समा जाय, एकाकार हो जाय, गुरु की धड़कनों में अपनी धड़कनें मिला ले, और जब ऐसा होगा तो तुम्हारे अन्दर स्वतः गुरुत्व प्रारम्भ हो जायेगा स्वतः दिव्यत्व प्रारम्भ हो जायेगा, और स्वतः सिद्धियां तुम्हारे सामने नृत्य करती सी प्रतीत होंगी ।

तुम व्यर्थ में चिन्ता कर रहे हो, तुम्हे तो निश्चिन्त हो कर थिरकना है, नाचना है, उत्सव युक्त होना है, जिससे कि तुम तेजी के साथ मुझ में समा सको, मैं तुम्हारे पास खड़ा हूँ और तुम्हारी सारी चिन्ताएं मैं अपने ऊपर ले लेता हूँ, आवश्यकता है, प्रेममय होने की, लययुक्त होने की, थिरकन से संबंधित होने की , तभी तुम मुझे पहचान सकोगे, तभी तुम झुक सकोगे-और तभी तुम मेरे साथ नृत्य करते हुए थिरक सकोगे ।

तुम्हें यह जीवन आसानी से मिल गया है, पर यह समय तुम व्यर्थ में काट रहे हो, तुम इसका सदुपयोग नहीं कर रहे हो, तुम्हें पता ही नहीं है, कि जीवन का उद्देश्य क्या है, तुम्हें मुस्कराते हुए मुझ में समर्पित होना है, अपने जीवन का मेरे हाथों निर्माण करना है, मेरी श्वासों से अपने जीवन को संवारना है, मेरी धड़कनों से अपने जीवन का श्रृंगार करना है और मुझमें लीन हो कर जीवन को सौन्दर्य और सत्य से साक्षायत्कार कराना है तभी तो तुम शिष्य कहला सकोगे ।

मैं तुमसे अलग नहीं हूँ, मैं तो हर क्षण तुम्हारे आस पास ही हूँ जब तुम श्वांस लेते हो, तो उसमें भी मेरा ही सुवास है, क्योंकि तुम्हारें चारों ओर मेरा अस्तित्व है, कमी कुछ नहीं है, केवल इतनी ही है, कि मै जो कुछ देना चाहता हूँ, वह तुम पूरी तरह से लेने को तैयार नहीं हो, मैं तुम्हारी आत्मा की खिड़की खोलना चाहता हूँ, और तुम पीछे हट कर खड़े हो, तुम्हें तो चाहिए कि दो चार कदम और आगे बढ़ों और पूर्ण रूप से अपना अन्तर खोल कर मुझमें निमग्न हो जाओ ।

तुम मुझे बुद्धि से जानने की कोशिश करते हो, पर यदि मैं कभी पहिचाना जाऊंगा तो हृदय की आंखों से ही, यदि मैं तुमसे मिल सकूंगा तो प्रीति की रीति से ही, तुम्हारे हृदय में मैं यदि समा सकूंगा तो दीवानगी भरे शिष्यत्व से ही, और जब ऐसा होगा, तो जीवन का अर्थ ही बदल जायेगा, जीवन का मूल्य , जीवन का ध्येय और जीवन का लक्ष्य ही पूर्ण हो जायेगा, और तब तुम्हारे अन्दर से जो पैदा होगा, वह सही अर्थों में शिष्य होगा, सही अर्थों में समर्पण होगा, सही अर्थों में पूर्णत्व होगा ।

तुम्हारे और मेरे बीच कोई अन्तर नहीं है, क्योकि तुम मेरे शिष्य हो, तुम्हारे शरीर में मेरा ही रक्त बह रहा है अन्तर इतना ही है, कि तुम्हारे हृदय में रक्त का बहना क्षीण हो गया है, और जब तुम मुझे मिलोगे, तो मेरा स्पर्श पाकर तुम्हारा सारा शरीर कम्पित होने लगेगा, और तुम्हारे हृदय से मेरे हृदय की धड़कनें एक साथ धड़कने लगेंगी, फिर तुम अलग नहीं होगे, फिर तुम्हारा अस्तित्व अलग नहीं होगा, क्योंकि तब तुम पूर्ण रूप से मुझ में डूब सकोगे, पूर्णरूप से समर्पित हो सकोगे , सही अर्थों में शिष्य बन सकोगे ।

जब तुम्हें जीवन के किसी मोड़ पर कोई चेतना पुंज, कोई जाग्रत व्यक्तित्व मिल जाय, तो अपनी इस जिन्दगी की दौड़ में रुक कर उससे मिल लेना, डूब जाना उसके प्रवचनों में, समा जाना उसके व्यक्तित्व में, क्योंकि जीवन में ऐसे क्षण कभी कभी ही आते हैं ,और वे क्षण यदि चूक गये, तो फिर तुम्हारे पास पछताने के अलावा कुछ नहीं बचेगा , इसीलिए तो कहता हूँ कि जब जाग्रत चैतन्य सद्गुरु मिल जाय, तो अपने आपको समर्पित कर देना, और इस समर्पण सेतुम्हें सब कुछ मिल जायेगा, जिसे सत्यम् शिवम् सुन्दरम् और ब्रह्मानन्द कहा है ।

तुम्हारे सामने अथाह मानसरोवर झील फैली हुई है, ज्ञान का जल उसमें अगाध रूप से भरा हुआ है,जो कि स्वच्छ है, निर्मल है, पवित्र है, और जिसमें डुबकी लगाना ही तुम्हारे जीवन का अहोभाग्य है, पर मुझे आश्चर्य तो इस बात से होता है, कि मैं झील के मध्य में खड़ा हुआ तुम्हें आवाज दे रहा हूँ, और तुम झील के किनारे खड़े कंकड़ पत्थरों में मुंह मार रहे हो । तुम्हारा तो सौभाग्य है कि मैं तुम्हारे साथ हूँ, तुम्हारा तो अहोभाग्य है, कि मैं तुम्हारे साथ इस अगाध निर्मल जल में डुबकी लगाने के लिए और तुम्हें सुरक्षित रूप से डुबकी लगवाने

के लिए तैयार हूँ, तुम्हारा तो यह स्वर्णिम भाग्य है कि मैं हर क्षण तुम्हें अपने साथ मुक्त आकाश में उड़ने के लिये सन्नद्ध कर रहा हूँ और यह विश्वास रखो कि आकाश में विचरण करते समय मैं प्रति क्षण, प्रति पल तुम्हारे साथ हूँ किसी भी हालत में तुम्हे नीचे गिरने नहीं दूंगा किसी भी स्थिति में तुम्हारे शरीर को लहुलुहान नहीं होने दूंगा, किसी भी स्थिति में तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूंगा ।

मुझे तो हर बार तुम्हे आवाज देनी ही है, हर क्षण तुम्हें पुकारते ही रहना है, प्रत्येक जन्म में तुम्हें अपने पास बुलाते रहने का निमन्त्रण देते ही रहना है, क्योंकि तुम्हारा मेरा संबंन्ध केवल गुरु और शिष्य का ही नहीं , प्राण और आत्मा का है, तुम्हारा मेरा सम्बन्ध साधक और शिष्य काही नहीं, जीवन की प्रेरणा और चेतना का है, और इसीलिए यह आवाज देना, यह पुकारना मेरा कर्त्तव्य है । मेरा धर्म है, मेरा चिन्तन है, और मैं प्रति क्षण अपने मानस के हंस को आवाज देता ही रहूंगा ।

मैं चाहता हूँ, कि यह बारबार का आवाज देने का क्रम रुक जाय, एक बार ही तुम पूरी तरह से मेरी आवाज को , मेरे निमंत्रण को आत्मसात कर सको, अपने हृदय में उतार सको, अपने हृदय के तारों को झंकृत कर सको, थोड़ी सी तुममें और तीव्रता आ जाय, तुम्हारे प्रयासों में थोड़े सी और सघनता आ जाय, तुम्हारे संकल्प समर्पण में और पूर्णता आ जाये, और पूरी तरह से मेरे मानस से एकाकार हो सको।

मैं तुम्हे भली भांति पहिचानता हूँ, क्योंकि अभी तक तुम मेरे हाथ से छूटे नहीं हो, अभी तक तुम्हारे और मेरे बीच बहुत अधिक फासला नहीं हुआ है, अभी तक तुम्हारे ओर मेरे मन केबीच कोई और पर्दा नहीं डाल सका , इसीलिए मुझे तुम पर पूरा -पूरा भरोसा है, इसीलिए मैं तुम्हे पहिचानने की क्षमता रखता हूँ, इसीलिए मेरी ज्ञान दृष्टि तुम्हारे अन्तर को भेद कर अन्दर के सारे स्वरूप को देख सकी है, और इसीलिए मुझे विश्वास है, कि तुम वही हो, जो मेरे प्राणों के अंश हो,मेरी आत्मा की धड़कन हो, मेरे मानस के राजहंस हो । अब और जन्म लेना ठीक नहीं है, अब यह बार -बार जन्म मरण के झूले में झूलना ठीक नहीं है,अब बार बार मल मूत्र भरी जिन्दगी में जीने के लिए विवश होना ठीक नहीं है, अब यह कौओं के बीच अपने आप को मन मारकर बिठाये रखना ठीक नहीं है, अब और विलम्ब सह्य नही है,अब और समय नहीं है, बहुत थोड़ा सा समय बाकी बचा है, बहुत थोड़ी सी अवधि तुम्हारे मेरे बीच बाकी रह गई, अब तुम्हें पहल करनी है, अब तुम्हें आगे बढ़ना है, अब तुम्हे मेरी आवाज को पहिचानना है, अब तुम्हें मेरे शरीर को नहीं, मेरे अन्दर के स्वरूप को जानना है, अब मेरे प्रवचन नहीं, मेरे मौन की भाषा को समझना है ।

मैं आवाज दे रहा हूँ, कि तुम मेरे मानस के राजहंस हो और बिना विलम्ब किये मेरे साथ आनन्द के भागीदार हो जाना है, इसीलिए तो मैं आवाज दे रहा हूँ, इसिलिए तो निमंत्रण द रहा हूँ, इसीलिए तो तुम्हारे साथ उड़ने के लिए उद्यत हूँ, प्रस्तुत हूँ, तैयार हूँ ।

मेरे जीवन का सृजन एक विशेष उद्देश्य, एक विशेष लक्ष्य, एक विशेष चिन्तन के लिए हुआ है, और मेरा जन्म कोई आकस्मिक घटना नही है, उसकी एक सार्थक उपस्थिति है, काल खंड की एक विशेष और विशिष्ट उपलब्धि है, जिसके सामने एंक महत्वपूर्ण धारणा है ।

मैं हर क्षण तुम्हारे बीच उपस्थित हूँ, चाहे आप कहीं पर भी हों, अगर तुम अपने घर पर भी हो ,और आंखें बन्द करके मुझे अपने अन्दर उतारने का प्रयास करो, तो मै तुम्हारे सामने जीवंत व्यक्तित्व बन कर उतर आता हूँ , बैठ जाता हूँ तुम्हारे पास , मुस्कुराहट भर देता हूँ तुम्हारे जीवन में, और रोम-रोम पुलकित हो उठता है तुम्हारा, सारा शरीर स्वतः ही थिरकने लग जाता है, मन आनन्द के झूले पर झूलने लग जाता है, और तुम एक अजीब सी खुमारी में भर जाते हो ।

प्रेम की कोई परिभाषा नहीं होती, प्रेम को शब्दो के माध्यम से बांधा भी नहीं जा सकता, प्रेम होठो से कहने की चीज ही नहीं है, यह तो एक थिरकन है, आनन्द की अनुभूति है, जीवन की सितार के स्वर है, उसकी अपनी एक मिठास है, उसका अपना एक आनन्द है, और यह आनन्द तुम्हारे और मेरे बीच प्रगाढता से वियमान है । यह प्रेम की डोर तुम्हारे मेरे बीच कई-कई जन्मों से परस्पर बंधी हुई है, जिसे तुम चाह कर के भी तोड़ नहीं सकते , जिसकी वजह से तुम हर क्षण, हर पल मुझ में खोये रहते हो, जब तुम कोई पुस्तक पढ रहे होते हो, तो मैं उस पुस्तक की पंक्तियो और अक्षरों के आगे आकर खड़ा हो जाता हूँ, जब तुम अकेले होते हो, तो मैं मुस्कराता हुआ, तुम्हारे सामने बैठा हुआ मिलता हूँ जब तुम एकान्त में होते हो, तो मैं साकार शरीर तुम्हारे सामने वियमान हो जाता हूँ और तुम एक अजीब सी मादक गुनगुनाहट से, थिरकन से मस्ती से भर उठते हो और तुम्हारी आंखों से प्रेम के आंसू छलछला उठते है, मन तरंगित हो उठता हैं, और दूसरे ही क्षण जब आंखों में तड़फ कशिश और विरह के आंसूं बहने लग जाते हैं, ऐसा लगता है कि जैसे अन्दर का सारा विषाद, सारा दुःख सारा दैन्य पिघल कर आंखों के द्वारा बह गया हो, इस मिलन और जुदाई के बीच तुम्हारा जीवन व्यतीत होता रहता है।

मैने अभी अभी बताया, कि मेरा जन्म मात्र घटना नहीं है, एक जीवन्त सजग उपस्थिति है, मेरा शरीर शिष्यों के सन्देश का माध्यम है, मेरा जीवन शिष्यों को पूर्णता की ओर पहुंचाने की पगडंडी है, आवश्यकता इस बात की है कि तुम अपने आप में चैतन्य हो सको, तुम अपने आप में प्राणश्चेतनायुक्त हो सको, तुम सही अर्थो में जाग सको, और कस कर मेरा हाथ पकड़ सको, मेरे साथ - साथ इस पगडंडी पर चल सको, तो निश्चय ही मैं तुम से वायदा करता हूँ, कि तुम उस पूर्णता तक उस ब्रह्मानन्द में पूर्णता के साथ मग्न हो सकोगे, जो मानव जीवन की उपलब्धि है, तुम उस ब्रह्म से साक्षात्कार कर सकोगे, जो हमारे उपनिषदों का सार है।

तुम चल तो रहे हो, मगर तुम में प्राण नहीं है, तुम गतिशील तो हो, मगर उसमें जीवन्तता नहीं है,तुम सव कुछ कर तो रहे हो मगर उसमें सप्राणता नहीं है, और मेरा जन्म यही संदेश देने के लिए हुआ है, और मेरे जीवन का उद्देश्य इसी प्रेम की गागर को तुम्हारे गले में उंडेलने के लिए हुआ है, मेरे जीवन की सार्थकता यही है कि मैं तुम्हें वापिस जीवन्त कर सकूं, वापिस चैतन्य कर सकूं, तुम अपने कंधों पर अपने शरीर की जिस लाश को ढो कर चले जा रहे हो, उसमें प्राण फूंक सकूं, उसमें चैतन्यता ला सकूं, उसमें हलचल मचा सकूं,, और आनन्द के, मस्ती के, प्यार के, उन क्षणों में तुम्हें डुवो सकूं जो जीवन का सार है, जो जीवन का आनन्द हैं, जो जीवन की तृप्ति है।

तुम्हारे और मेरे जीवन का यह पहला ही परिचय नहीं है, मैने तुम्हें पहली वार ही नहीं पहिचाना है, तुम्हारे पिछले पच्चीस जन्मों का लेखा - जोखा मेरे पास है, तुम्हारी पिछली पच्चीस जिन्दगियों का हिसाब किताब मेरे खाते में लिखा हुआ है, इसीलिए मैं तुमसे बहुत अच्छी तरह से परिचित हूँ और हर बार मैं तुम्हे आवाज देता हूँ, हर वार तुम्हारे बेजान पैरों में गतिशीलता भरता हूँ और हर बार तुम्हें प्रेम के घूंट पिला कर उन्मत्त करने का प्रयास करता हूँ, पर हर वार समाज की इस रपटीली धरती पर तुम्हारे पांव रपट जाते है, हर वार तुम्हरा दामन पति-पत्नी मां-बाप, समाज के कांटों से उलझ कर रह जाता है और तुम ठिठ्क कर उन कांटों में ही अटके रह जाते हो,उस बीहड़ जंगल में ही भटक जाते हो, तुम्हारी आंखों से आंसू तो छलछलाने के लिए तैयार होते है, पर समाज की मुसीवतें,घर गृहस्थी की परेशानियां उन आंसुओं को सही ढंग से वहने भी तो नहीं देती, तुम्हारे जी को हलका भी तो नहीं करने देती, तुम्हारें जीवन को तनाव रहित भी तो होने नहीं देती, और मैं उसी पगडंडी पर तुम्हारे पास में से हो कर गुजर जाता हूँ और फिर वापिस तुम्हारा जन्म होता है और फिर तुमवड़े होते हो और फिर तुम अपने मन में कोई प्रभाव कोई कसक, कोई तड़फ अनुभव करते हो,कुछ ऐसा अहसास होता है, कि जैसे तुम खाली खाली हो, सव कुछ होते हुए भी कुछ ऐसा है जो तुम्हारे पास नहीं है, और तुम उसकी खोज में इधर उधर भटकते रहते हो, और जव वापिस मुझ से आकर मिलते हो, तो सव कुछ तम्हें याद आ जाता है, तुरन्त मेरे प्राणों से तुम्हारे प्राण मिल जाते है, एकदम से तुम्हारे दिल की धड़कने मेरे दिल की धड़कनों से जुड़ जाती है, और तुम्हारे होठों पर एक मिठास एक गुनगुनाहट एक झरने का संगीत थिरकने लग जाता है, तुम्हारा जीवन ,तुम्हारा वंधा हुआ जीवन वापिस वहने लग जाता है, एक वार वापिस मुझसे मिल कर तुम्हारे पैरो में चंचलता आ जाती है, मेरे प्राणों से प्राण जोड़ने के लिए तुम आतुर हो उठ्ते हो, और ऐसा लगता है कि जैसे सव कुछ समाप्त हो गया हो, सारा दुख और संताप, विरह और वेदना, अभाव और कष्ट दूर हो गये हो, और मेरी उपस्थिति में तुम नाचने लग जाते हो, थिरकने लग जाते हो, मस्ती में झूम उठ्ते हो और आनन्द की वर्षा में भीग कर उन्मत हो उठ्ते हो ।

इसीलिए तो मैं कहता हूँ, कि मैं तुमसे अलग नहीं हूँ, इसीलिए तो मैं कहता हूँ कि तुम अपनी सारी चिन्ताएं मुझ पर छोड़ दो, तुम तो केवल नाचो,गाओं और मस्ती में झूमते रहो, जव भी जो कुछ हो रहा है, उसे होने दो मैं अपने आप ठीक समय पर तुम्हारा हाथ थाम लूंगा, मैं सही क्षण पर तुम्हारी उंगली पकड़ कर पंगडंडी पर आगे वढ़ जाऊंगा, आवश्यक्ता इस बात की है कि तुम समाज से वगावत कर सको, जरुरत इस वात की है, कि तुम अपनी जिन्दगी के गन्दगी भरे क्षणों के विरुद्ध विद्रोह कर सको, जरुरत इस बात की है, कि तुम मेरे शरीर की भाषा पढ़ सको, मेरे आंखों से संगीत को सुन सको, मेरे हदय की चैतन्यता में उत्सव मय हो सको,रसमय हो सको, प्रीतिमय हो सको, और छोड़ सको, अपने जीवन के दुःख , विषाद, कष्ट, अभाव और पीड़ाओं को ।

तुम देखोगे कि ऐसे क्षणों में केवल तुम ही नहीं नाच रहे हो तुम्हारे साथ -साथ पूरा विश्व नृत्यमय है-सारा व्रह्मांड थिरकन के साथ गतिशील है, तुम्हारी गुनगुनाहट के साथ इस व्रह्मांड की भी गुनगुनाहट साकार है पर इसके लिए आवश्यक है, तुम अपने अहंकार को गला सको, अपनी अकड़ को समाप्त कर सको, तुम पूरी तरह से झुक सको, समर्पण के साथ मुझ में अर्पित हो सको, और अपने सम्पूर्ण अस्तित्व के साथ मेरे प्राणों से आलिंगन कर सको ।

और जव ऐसा हो सकेगा, तव तुम्हारे जीवन में कोई कमी नहीं रहेगी, तव तुम्हें ज्ञान हो.सकेगा, कि मेरा जन्म क्यों हुआ है, जिस प्रकार से समुद्र सरिता को आवाज देता है, जिस प्रकार संगीत गुनगुनाहट को स्वर देता है, उसी प्रकार से मेरे प्राण तुम्हें आवाज दे रहे है, अपनी वाहों मेंसमेटने के लिए, --- अव और देर करने की जरुरत नहीं है, क्योंकि पहले से ही वहुत देर हो चुकी है, पहले से ही काफी विलंव हो चुका है ।

और मुझे विश्वास है, कि जिस प्रकार से सुगंध हवा में लीन हो जाती है, जिस प्रकार से संगीत हवा में रसमय हो जाता है, उसी प्रकार से तुम मेरे प्राणो में, मेरे जिन्दगी की धड़कनों में समा सकोगें,क्योंकि मैं एक जीवन्त गुरु हूँ, एक प्राण व्यक्तित्व हूँ, मैं तुम्हारा हूँ, और तुम्हें अपने आप में आत्मसात करने के लिए आतुर हूँ, मैं हर क्षण हर पल तुम्हारे साथ हूँ, तुम्हारे सामने उपस्थितहूँ ।

मैं आज सतर्कता से तुम्हें जगा रहा हूँ , क्योंकि मैं तुम्हारे स्वभाव से परिचित हूँ, तुम्हारे पिछले कम से कम पच्चीस जन्मों से यही चतावनी देता आया हूँ, हर वार तुम्हें यही आवाज दी है, कि जीवन के अंतिम क्षण में जागने की अपेक्षा यदि इस समय जाग जाते हो, तो तुम्हारे पास काफी समय वचा होता है, जीवन को समझने के लिए, गुरु को पहिचानने के लिए, और उनके संदेश को अपने जीवन में आत्मसात करने के लिए ।

मेरे संदेश को अपने अन्दर समाहित कर देने से मृत्यु तुम पर झपट्टा मार नहीं सकेगी, अपने आपको मुझ में विलीन कर लेने से जब तुम्हारा कोई अस्तित्व ही नहीं रहेगा, तो फिर काल किसके सिरहाने खड़ा होगा? फिर मृत्यु किसके सिर को थपथपायेगी?क्योंकि उस समय तुम्हारा अस्तित्व तो होगा ही नहीं, उसके सामने तो मै चट्टान की तरह खड़ा मिलूगा और उस काल को, उस मृत्यु को मेरे सामने से लौटने के लिए विवश होना ही पड़ेगा।

मैं हर वार तुम्हें आवाज दूंगा, हर वार तुम्हें ठोकर मारने का प्रयास करूंगा, हर वार तुम्हें चेतावनी दूंगा कि तुम मेरे प्राण, मेरी आत्मा और मेरे मनुआ हो। तुम्हारे शरीर में जो कुछ है, वह मेरा दिया हुआ है, तुम्हारी नाड़ियों में मेरा ही रक्त प्रवहित है क्योंकि तुमने शरीर भले ही दूसरा धारण कर लिया हो, परन्तु तुम न तो आत्मा को वदल सके हो, और न प्राणों में परिवर्तन ला सके हो, क्योंकि ऐसा-हो भी नहीं सकता, ऐसा संभव ही नहीं है, क्योंकि मैं तुम्हारी आत्मा का तुम्हारे प्राणों का गुरु हूँ और तुम्हें अमृत के सरोवर तक पहुंचाने के लिए प्रयत्नशील हूँ अमृत्यु के स्वर्णिम द्वार तक ले जाने के लिए प्रयास रत हूँ, अमृत की भीगी फुहार में सरोवार करने के लिए चेष्टारत हूँ।

अपने युग में जीवन्त व्यक्तित्व को पहिचानना अत्यन्त कठिन होता है, जहां सारे लोग नींद में खोए हुए वेसुध से चल रहे हो। वहां सजग और जागते व्यक्तित्व को पहिचानना अत्यन्त कठिन होता है, क्योंकि वह अलग-थलग दिखाई देता है, उसका स्वरुप उसकी आवाज और उसके शब्द कुछ नई अर्थवत्ता लिये हुए होते है, क्योंकि वह तन्द्रा में नहीं होता, क्योंकि वह जाग्रत व्यक्तित्व होता है, परन्तु उस नींद में चलने वाले व्यक्तियों के बीच वह अलग सा दिखाई देता है, उसको पहिचानना कठिन सा होता है, और इसीलिए उसे दो टूक शब्दों में अपनी वात समझाने के लिये,अपने व्यक्तित्व को समझाने के लिए प्रयत्नशील होना पड़ता है।

मैं तुम्हारे इस जीवन का भी साक्षी हूँ, तुम्हें किसी प्रकार की चिन्ता करने की जरुरत नहीं है, तुम्हारे पास जितनी भी और जो भी चिन्ताएं हैं, वे तुम मुझे दे दो, क्योंकि मैं इन चिन्ताओं से परे हूँ,चिन्ताएं मुझे आक्रांत नहीं करती, और तुम्हें मैं चिन्ताओं से मुक्त करने की क्रिया वता सकता हूँ तुम्हें तो पूरी तरह से जागना है, पूरी तरह से चैतन्य होना है, पूरी तरह से गतिशील होने की प्रक्रिया प्रारंभ करनी है, तुम्हारे जीवन के सभी स्वप्न, सभी तृष्णाएं सभी समस्याओं, परेशानियों और वाधाओं का हल मै अपने आप निकालूंगा, क्योंकि तुम जैसे भी हो, मुझे प्रिय हो, तुम चाहे कितनी ही खामियों और न्यूनताओं से भरे हुए हो, पर मेरे ही प्राणों के अंश हो,इसलिए तुम्हारी इन सारी खामियों को मैं अपने आप दूर कर लूंगा, क्योंकि जब तुम जाग कर पूरी तरह से मुझसे समाहित हो जाओगे, तो फिर तुम्हारा कोई अस्तित्व ही नहीं रहेगा, और जब अस्तित्व ही नहीं होगा, तो फिर चिन्ताएँ तुम्हें व्याप्त हो ही कैसे सकेगी ।

मैं इस जीवन की यह अंतिम आवाज दे रहा हूँ, फिर से इस जीवन में तुम्हें झकझोर रहा हूँ, इन शब्दों के माध्यम से तुम्हें चेतना युक्त कर रहा हूँ, कि तुम मुझे पूरी क्षमता के साथ पहिचान सको, तुम जाग कर मेरे अन्दर के विराट गुरुत्व को जान सको, मेरे अन्दर की पूर्णता को अपने आत्मचक्षु से चीन्ह सको, और मेरे जीवन्त जाग्रत विराट व्यक्तित्व में अपने आपको लीन कर सको, पूर्णता के साथ समावेश कर सको, और मेरे साथ अमृतत्व के पथ पर गतिशील हो सको।

मैं हर क्षण तुम्हारे साथ हूँ, तुम मेरे मन हो, मेरी आत्मा हो, मेरे प्राण हो, मेरी चैतन्यता हो, और मैं तुम्हारा सर्वस्व हूँ, तुम्हारी धड़कन हूँ, तुम्हारे रोम रोम से निकलते हुए आनन्द का प्रवाह हूँ, तुम्हारा सद्गुरु हूँ, तुम्हारे जीवन की पूर्णता और सजीवता, चैतन्यता और सप्राणता हूँ, अव यदि इस वार भी पूरी तरह से नहीं मिल सके, समर्पित नहीं हो सके, तो फिर तुम्हारा यह जीवन रेत के ढेर की तरह रह जायेगा, इसलिए तुम्हें जागना है, चेतना है, मुझे पहिचानना है,और मुझ में आत्मसात हो जाना है ।

आप जब भी इस मंजिल पर चलते -चलते पीछे मुड़ कर देखेंगे तो मैं तुम्हें विल्कुल निकट खड़ा हुआ मिलूंगा, निर्देश और मार्गदर्शन देता हुआ मिलूंगा, आपको लक्ष्य तक पहुंचाता हुआ मिलूंगा ।

आप सही अर्थों में शिष्य हो, पूर्ण रूप से समर्पित शिष्य हो और जिस रास्ते पर आगे वढ़ाऊं आप वढ़ जाय, मैं आपको आज्ञा दूं उसका पूर्ण रूप से पालन हो। मैं आप से जो चाहू वह हो औरमैं आपको साधनाओं के क्षेत्र में जिस प्रकार से ढालू आप ढल जाय और यदि ऐसा है, तो निश्चय ही आने वाला भविष्य आपका है, वास्तव में ही आप अपने आप पर गर्व कर सकेंगे कि आपने वह सव कुछ प्राप्त किया है, जो अपने आप में अद्वितीय है ।

आनन्द एक सापेक्ष भाव है, जिस कार्य को करने से मन में एक प्रसन्नता का अनुभव हो, वह आनन्द भाव है न कि दूसरों के सराहने पर, आपकी प्रशंसा करने पर जो भाव उत्पन्न हो वह आनन्द है ।

यदि तुम्हें मेरे साथ चलना है तो जीवन में तुम्हें अपना दृष्टिकोण वदलना पड़ेगा, जो विचार तुम्हारे भीतर भरे हैं, उनसव को निकाल कर एक शून्य की स्थिति उत्पन्न करनी होगी, तभी तो तुम आनन्द का अनुभव कर सकोगे, किसी भी यात्रा पर चलने के लिए तैयार हो सकोगे, और मै भी विश्वास के साथ यह देख सकूंगा कि अब यह शिष्य अपनी शक्ति को, अपने लक्ष्य को, अपने आनन्द को पहिचान सका है और इसे कार्य दिया जा सकता है, इसे विचार दिये जा सकते हैं, जो सीधे इसके हृदय में स्थान वनाएंगे न कि तर्क -विर्तक करते हुए मस्तिष्क में ही मांप तोल करेंगे।

मैं अपने पूरे जीवन में बांटता चला गया आनंद के वे बीज, अपने शिष्यों के बीच, बहुतों ने इसे परखने का प्रयास किया सोचा कि इससे हम सब प्राप्त कर लेगें, और जो भौतिक इच्छाएं हैं वे पूरी हो जाएगी और इस तरह अपनी इच्छाओं का आकार बढ़ाते चले गये, बहुत कम शिष्यों ने सोचा कि गुरुदेव ने जो आनंद का यह बीज दिया है उसे तो हृदय के भीतर उगाना है, जो अनुभूति दी है अपने पूरे शरीर में विस्तार कर पल-पल आनंद अनुभव करना है न कि भटकना है इधर-उधर । गुरुदेव की आवाज के साथ अपने मन के आनंद भाव को उनके विचारों के साथ समाहित कर देना है, और मेरे वे शिष्य बहुत बड़ी जिम्मेदारी लेते हुए भी आनंद से सराबोर हैं, क्योंकि उनके कार्यों में निश्छलता है, एक समर्पण है, लेन - देन का कोई भाव नहीं है।

अभी देर नहीं है, एक शुद्धता की प्रक्रिया भीतर - भीतर प्रारंभ करनी है, बहुत कूड़ा-करकट सामाजिक वर्जनाओं का, इच्छाओं का, महत्वाकांक्षाओं का भीतर - भीतर भर दिया है, तुम इसमें प्रेम के आनंद के बीज बोना चाहते हो तो फिर कैसे प्रेम का वृक्ष अंकुरित हो सकता है।इसके लिए तो एक शून्य की स्थिति उत्पन्न करनी है और उसका प्रयास तुम्हें ही करना है, जब यह प्रयास प्रारंभ कर दोगे तो अपने आप आगे का मार्ग खुलता रहेगा ।

मै तुम लोगों को सौपना चाहता हूँ वो जो आनंद जो तुम अनुभव कर सको, जो मेरी अनुभूति है वह अनुभूति भी तुम तक पहुंचे, वह अनुभूति तुम्हारे भीतर रच पच जाय और इस अनुभूति को किसी और को दे सको, मैं तुम्हे गृहस्थ छोड़ने की भी सलाह नहीं देता, मैं तो चाहता हूँ कि तुम्हारा केवल दृष्टिकोण ही नहीं अपितु सारे विचार मन के भीतर आनंद का उद्‌गम करने में प्रवाहित हो ।

मैं तुम्हें न तो वर्जनाओं से मुक्त और न वर्जनाओं से युक्त जीवन जीने की सलाह देता हूँ, केवल इतनी ही सलाह है कि अपने परमात्मा के दिये हुए इस वरदान रुपी जीवन का एक-एक क्षण सार्थक हो, केवल ऐसे कार्यों में ही समय नहीं बीत जाए जिसकी केवल उपयोगिता है लेकिन पूर्ण आनंद नहीं है ।

आज मैं संदेश देता हूँ कि अपने भीतर झांक कर एक आत्म विश्लेषण की प्रक्रिया प्रारंभ कर अपने आपको मस्तिष्क के आइने में नहीं अपने हृदय के आनंद भरे दर्पण में देखकर मेरे हृदय से लगने के लिए आ जाओ ।

पूर्णता तक पहुंचने के लिए यह जरुरी है, कि साधक गुरु के ह्दय में अपने आपको स्थापित करे, इसके लिए किसी निमन्त्रण की आवश्यकता नहीं होती, इसके लिए किसी औपचारिकता की जरुरत नहीं होती, यह तो एक वेग है, एक तीव्रता है, एक जीवन का सत्य है, कि वह अन्यन्त तेज गति से दौड़ता हुआ गुरु के हृदय में पूर्ण रूप से समा जाय, अपने आपको उसके हृदय में स्थापित कर दे,अपने छोटे से दीपक को उसके हृदय में जला दें, इसके लिए किसी प्रकार के शब्दो के आडम्बर की आवश्यकता नहीं होती, इसके पीछे कोई लेन-देन का भाव नहीं होता, यह तो जीवन का एक पाथेय है, जिस पर चल कर साधक या शिष्य अपने आपको गुरु के हृदय में स्थापित कर सकता है, यह तो एक विश्वास है जिसके बल पर वह गुरु का प्रिय बन सकता है, और इस विश्वास के आधार पर शिष्य तेजी के साथ उस परसत्ता में लीन हो सकता है, जिसे सिद्धि या सफलता कहा गया है ।

श्रद्धा, समर्पण और भय इन तीनों तत्वों से मिल कर ही शिष्य या साधक का निर्माण होता हैं जिसमें इन तीनों में से कोई कमी रह जाती है, वह न तो पूर्ण शिष्य बन सकता है और न किसी प्रकार की दीक्षा प्राप्त ही कर सकता है ।मैं तुम्हें सौंप दूंगा वह सब जो मेरे पास है, मेरा तो हाथ सदैव ऊपर ही रहा है और ऊपर ही रहेगा ।

आनंद एक बहता हुआ भाव है, जो हर समय प्राप्त हो सकता है, जिसका नशा शरीर के अंग-अंग में छा जाता है, जो आपके चेहरे पर मुस्कान ला सकता है वही आनन्द भाव है, जब मै अपने शिष्यों के साथ बैठता हूँ , जब अपने शिष्यों को देखता हूँ तो मुझे आनंद की प्राप्ति होती है, और जब शिष्य में भी यही भाव उत्पन्न होता है तो वह सही मार्ग पर जा रहा है, इसका निर्णय शिष्य स्वयं ज्यादा उचित रूप से कर सकते हैं ।

याद रखो कि इस जीवन के मार्ग में कोई किसी की प्रतीक्षा नहीं करता और समय तो सबसे तीव्रगति से बहने वाला है, अतः यदि प्रक्रिया प्रारंभ करनी है जो कि प्राप्ति की प्रक्रिया है, आनन्द भाव की सृष्टी करनी है, निर्माण करना है तो फिर उसमें देर करना उचित नहीं

और आज मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि —

आनन्दादेव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, आनन्देन जातानि जीवन्ति ।

आनन्दं प्रत्यभिसंविशन्ति, आनन्दं ब्रह्मेति व्यजानत् ।।

उपसंहार

वास्तव में परम पूज्य गुरुदेव डा० नारायणदत्त श्रीमाली जी हमारे सभी के तथा समाज के द्वारा निकलते हलाहल का निरंतर पान कर रहे हैं, भगवान शंकर ने भी एक बार ही हलाहल पान किया था परन्तु पूज्य गुरुदेव को तो निरंतर ऐसा करना पड़ रहा है । इतना सभी कुछ होने के बाद भी समस्त शिष्यों के रोग, परेशानियों को अपने ऊपर लेते हुए भी पूज्य गुरुदेव ने आने वाली पीढ़ियों के लिए ज्ञान को सुरक्षित कर दिया है । पूज्य गुरुदेव ने लगभग डेढ़ सौ पुस्तकों की रचना करी है जिनमें विभिन्न विषयों पर अत्यंत सरल भाषा में प्रकाश डाला गया है, प्रयोगों आदि के माध्यम से समझाया गया है ।

पूज्य गुरुदेव ने निरंतर कार्यरत रहते हुए लगभग तीन हजार शिविरों का संचालन किया है और इन शिविरों के माध्यम से स्थान - स्थान पर अपने शिष्यों तथा जनसाधारण में आध्यात्म मंत्रों, तंत्रों आदि के प्रतिरुचि उत्पन्न करी है वहीं इन विद्याओं के प्रयोगों को समझा कर, अपने सामने सम्पन्न कराकर साधकों को पूर्णता दी है ।

शिविरों की आडियों / विडियों कैसटें बनाकर आश्रम ने उपलब्ध कराई हैं जोकि आश्रम से सम्पर्क करके प्राप्त की जा सकती है।

इनके माध्यम से आज और आने वाले समय में साधना की दुष्कर एवं गोपनीय क्रियाएँ भी सरलता से समझी जा सकेंगी । यह कैसटें वास्तव में साधनात्मक चिंतन से ओतप्रोत हैं ।

पूज्य गुरुदेव ने शिष्यों की याचना की रक्षा करते हुए सम्पूर्ण साधनात्मक चिंतन को एक स्थान पर प्रकाशित करना वर्ष १९८१ में प्रारंभ किया और यही आप और हम सभी को सुलभ, ज्ञान चेतना की वाहिनी, प्रेम - आनंद को प्रदान करने वाली मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान पत्रिका है । निरंतर इतने वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका में पूज्य गुरुदेव ने मंत्र - तंत्र योग - आयुर्वेद - ज्योतिष - पारद विज्ञान -रसायन के प्रामाणिक लेखों और उनमें दिये चिंतन की प्रायोगिक विधि को स्पष्ट किया ताकि व्यक्ति उस विधि विधान से क्रिया सम्पन्न कर अपना अभीष्ट फल प्राप्त कर सके ।

इन शिविरों में, मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान के माध्यम से, पुस्तकों के माध्यम से, निजी मार्गदर्शन के माध्यम से भी जब शिष्य आगे नहीं बढ़ पाये, सिद्धियां प्राप्त नहीं कर पाए, तब परम पूज्य गुरुदेव ने अपनी तपस्या के अंश को शक्तिमान के माध्यम से प्रवाहित करना प्रारंभ किया और आज पूज्य गुरुदेव से गुरु दीक्षा प्राप्त करने के बाद कोई भी साधक अपनी मनोइच्छा के अनुकूल दीक्षा प्राप्त कर सिद्धि प्राप्त कर सकता है , इच्छा पूर्ण कर सकता है ।

पूज्य गुरुदेव तो आज लुटाने बैठे हैं जितना लूट सके यह समाज उनसे उतना ज्ञान, चेतना प्राप्त कर ले क्योंकि यह जीवंत जाग्रत सदगुरु के लिए ही संभव है । वास्तव में ऐसे युग पुरुष, जगदगुरु डा० नारायणदत्त श्रीमाली जी (परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी) के चरणों में कोटि - कोटि जन्म पूर्ण श्रृद्धा, प्रेम भाव के साथ समर्पित है ।

ज्ञान और चेतना की अनमोल कृतिया

पूज्य गुरुदेव "डा. नारायण दत्त श्रीमाली जी" द्वारा रचित ज्ञान की गरिमा से युक्त सम्पूर्ण जीवन को जगमगाने वाली अद्भुत और अनमोल कृतियां

- अहं ब्रह्मास्मि 195/-
- कुण्डलिनी यात्राः मूलधारसे सहस्त्रार तक 150/-
- गुरु गीता 150/-
- फिर दूर कही पायल खनकी 150/-
- ज्योतिष और काल निर्णय 150/-
- हस्तरेखा विज्ञान और पंचांगुली साधना 120/-
- निखिलेश्वरानन्द स्तवन 120/-
- कुण्डलिनी नाद ब्रम्हा 96/-
- ध्यान, धारणा और समाधि 96/-
- भौतिक सफलताः साधना एवं सिद्धियां 96/-
- श्री निखिलेश्वर शतकम् 75/-
- लक्ष्मी प्राप्ति 60/-
- अमृत बूंद 60/-
- स्वर्ण तंत्रम 60/-
- आधुनिकतम हिप्नोटिज्म के 100 स्वर्णिम सूत्र 50/-
- निखिलेश्वरानन्द चिन्तन 40/-
- निखिलेश्वरानन्द रहस्य 40/-
- सिद्धाश्रमका योगी 40/-
- प्रत्यक्ष हनुमान सिद्धि 40/-
- मातंगी साधना 40/-
- ऐश्वर्य महालक्ष्मी साधना 40/-
- झर झर झर अमरत झरै 30/-
- तांत्रोक्त गुरु पूजन 30/-
- स्वर्णिम साधना सूत्र 30/-
- गुरु सूत्र 30/-
- दैनिक साधना विधि 30/-
- दीक्षा संस्कार 15/-
- सर्व सिद्धि प्रदायक यज्ञ विधान 15/-
- महाकाली साधना 15/-
- षोडशी त्रिपुर सुन्दरी 15/-
- धनवर्षिणी तारा 15/-
- सिद्धाश्रम साधना सिद्धि 15/-
- गुरु संध्या 15/-
- अप्सरा साधना 15/-
- दुर्लभोपनिषद 15/-
- शिष्योपनिषद 15/-
- भुवनेश्वरी साधना 15/-
- बगलामुखी साधना 15/-
- नारायण सार 10/-
- नारायण तत्व 10/-
- गुरु और शिष्य 10/-
- सिद्धाश्रम 10/-
- गुरुदेव 10/-

अंग्रेजी साहित्य

- Meditation 240/-
- Kundalini Tantra 240/-
- Alchemy Tantra 240/-

बंगला साहित्य

- तंत्र सिद्धि 45/-
- हिमालयेर जोगीदेर गोपन सिद्धि 33/-
- हिमालयेर जोगी 30/-

:: सम्पर्क ::

ये सभी पुस्तके आपके निकट के बुक स्टाल पर उपलब्ध है । न मिलने पर निम्न पतेपर सम्पर्क करे–

मंत्र–तंत्र–यंत्र विज्ञान, डा. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कालोनी, जोधपुर (राज.)
फोनः 0291-32209, फैक्सः 0291-32010

पूज्य गुरुदेव

डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली जी के दिव्य प्रवचनों के ऑडियो एवं वीडियो कैसेट्स

सूची पत्र

SERIES

प्रेम और जीवन
- प्रेम धार तलवार की
- प्रेम पंथ अति कठिन है
- प्रेम न हाट बिकाय
- अकथ कहानी प्रीत की
- पिव बिन बुझे न प्यास
- सूली ऊपर सेज पिया की
- घूंघट के पट खोल री
- गुरु मोरे जीवन प्रेम आधार
- प्रेम गली अति सांकरी
- प्यार के घुंघरुओं की खनक

ध्यान-कुण्डलिनी एवं योग
- समाधि के सात द्वार (हिन्दी व अंग्रेजी)
- ध्यान धरणा और समाधि
- कुण्डलिनी योग
- ध्यान योग
- कुण्डलिनी नाद ब्रह्म
- क्रिया योग (छः भागों मे)
- समाधि की ओर (श्रवण साधना)

पूजन-अर्चन
- पारदेश्वर शिवलिंग पूजन
- शिव पूजन
- गुरु पादुका पूजन
- विशेष गुरु पूजन (नित्य गुरु पूजन)
- विशिष्ट गुरु पूजन (जन्मोत्सव)
- षोडशोपचार गुरु पूजन
- विविध गुरु पूजन
- शिवरात्रि पूजन विधान
- दुर्गार्चन (नवरात्रि पूजन)
- जाज्वल्यमान महालक्ष्मी पूजन
- तांत्रोक्त गुरु पूजन
- यक्ष विधान

'सिद्धाश्रम'(दिल्ली) में सम्पन्न साधनात्मक प्रयोग
- ऐश्वर्य महालक्ष्मी प्रयोग
- बगलामुखी प्रयोग
- गुरु हृदयस्थ धारण प्रयोग
- तारा महाविद्या प्रयोग
- काल भैरव सिद्धि
- षोडशी त्रिपुर सुन्दरी प्रयोग
- बाला त्रिपुर सुन्दरी प्रयोग
- अनंग सिद्धि प्रयोग
- महाकाल प्रयोग
- नाभिदर्शना अप्सरा प्रयोग
- अष्ठलक्ष्मी साधना
- गणपति एवं मनोकामना पूर्ति प्रयोग
- धनदा यक्षिणी प्रयोग
- अकालमृत्यु मुक्ति एवं पूर्ण प्रेम प्राप्ति अप्सरा प्रयोग
- सम्मोहन-वशीकरण एवं तृतीय नेत्रजागरण प्रयोग
- शाप विमोचन एवं साधना साफल्य प्रयोग
- मनःशक्ति जागरण एवं भैरव-भैरवी प्रयोग

गुरु वाणी श्रृंखला
(गुरु-शिष्य विषय पर गूढ प्रवचन)
- गुरु वाणी
- गुरु बिन रह्यो न जाय
- गुरु हमारी जाति हैं
- सांस-सांस में गुरु बसे
- गुरु-शिष्य : सफलता की पूर्णता
- सिद्धि और सफलता
- शिष्यता : जीवन सौनदर्य
- गुरु : जीवन का महोत्सव
- गुरु साधना : सफलता का मूल रहस्य
- चहुं दिस गुरु सुगन्ध व्यापी रे (दो भाग)
- अज्ञात रहस्यों का सुनहरा प्रभात

विविध
- स्वामी सच्चिदानन्द
- सिद्धाश्रम
- सिद्धाश्रम महात्म्य
- सिद्धाश्रम प्रश्नोत्तर
- गुरु हमारो गोत्र है
- गुरु गति पार लगावे
- काहि विधि करुं उपासना
- मै खो गया तुम भी खो जाओ
- मै अपना पूर्व जीवन देख रहा हूं
- हिप्नोटिज्म रहस्य
- परा विज्ञान
- पाराद विज्ञान
- शिव सूत्र
- साधना सूत्र

- साधना, सिद्धि एवं सफलता
- साधना चिन्तन (दो भागों में)
- साधना पथ
- मृत्योर्मा अमृतं गमय
- तंत्र रहस्य
- मैं सिद्धाश्रम में सशरीर विचारण कर सकता हूं
- शक्तिपात (पूर्व जन्म दर्शन)
- गुरु बिन ज्ञान कहां से पाउं
- गुरु बिन गतिर्नास्ति

स्तोत्र-स्तवन-आरती

- गुरु गीता
- निखिलेश्वरानन्द स्तवन
- सद्गुरु स्तोत्र संग्रह
- दुर्लभ स्तोत्रावली
- निखिल सहस्रनाम
- आरती संग्रह
- संध्या आरती
- दैनिक साधना विधि
- प्रातः कालीन गुंजरित वेद ध्वनि
- गुरु नाम रस पीजै (गुरु मंत्र)
- गुरु मुर्खा स्तोत्र

विभिन्न साधनाएं एवं प्रयोग

- लक्ष्मी आवद्ध प्रयोग (तीन भागों में)
- पाशुपतास्त्रेय प्रयोग (तीन भागों में)
- अणिमा सिद्धि
- विशेष लामा मंत्र
- ॐ मंणि पद्मे हुं
- महासरस्वती स्वरुप साधना
- महाकाली स्वरुप साधना
- महालक्ष्मी साधना
- विशेष दीपावली साधना
- अक्षय पात्र साधना
- स्वर्ण पात्र साधना
- श्री लक्ष्मी साधना
- लक्ष्मी सिद्धि
- वसंत पंचमी सरस्वती-लक्ष्मी साधना
- पारदेश्वरी लक्ष्मी प्रयोग
- ऐं बीज साधना
- लक्ष्मी मेरी चेरी
- कुबेरपति शिवशक्ति साधना
- षोडश अप्सरा साधना
- स्वर्णदेहा अप्सरा साधना
- पुष्पदेहा अप्सरा साधना
- गुरु प्राण स्थापन साधना
- गुरु प्रत्यक्ष सिद्धि साधना
- मां भगवती जगदम्बे शत् शत् वंदन

- कायाकल्प साधना
- चामुण्डा दीक्षा
- सतोपंथी दीक्षा
- शक्तिपात दीक्षा
- राज्याभिषेक दीक्षा प्रयोग
- पूर्णत्व दीक्षा
- अमोघ साबर साधनाएं
- विश्व की श्रेष्ठतम साधनाएं
- मैं गर्भस्थ बालक को चेतना देता हूं (दो भाग में)
- राजयोग दीक्षा (दो भाग में)

उपनिषद

- दुर्लभोपनिषद
- कठोपनिषद
- शिष्योपनिषद
- नारायणोपनिषद

अनमोल कथन-प्रवचन श्रृंखला

- मीरा महल से उतरी
- कबीरा खरा अवधूत
- विष अमृतमय होय
- गुरु हमारी आत्मा
- राम नाम रस पी ले प्राणी
- गुरु मेरो मैं गुरु की
- काहि विधि जीणो होय
- कृष्ण प्रेम प्रतीक है
- गुरु बिन भई मैं बावरी

भजन संग्रह

- भजन सौरभ (अंजली)
- संगीत सरिता (जयप्रकाश)
- प्रीत पायल (जयप्रकाश)
- बाजे कण-कण में प्रेम बांसुरिया (जयप्रकाश)
- जब उडे प्रेम गुलाल (जयप्रकाश)
- सहारा तेरे नाम का (जयप्रकाश)
- कान्हा (आनन्द)
- भजन सागर (आनन्द)
- भजन प्रभात (आनन्द)
- भजन कुछ कर ले (आमन्द)
- भजन मंच (भोलानाथ बाजपेयी)
- गुरु महिमा
- भजन दरबार

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञानकी की ऑडियो कैसेटे भी प्रतिमाह उपलब्ध है

न्यौछावर प्रति कैसेट 30/-+15/- डाक खर्च
दस कैसेटें एक साथ मंगाने पर डाक खर्च मुफ्त

आदेश इस पते पर भेजे
मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर.
(फोन: 0291-32209, फैक्स : 0291-32010
फोन नं. 0291-32209 पर भी आदेश बुक करा सकता है)

दीक्षाएं

जीवन में सभी प्रकार से पूर्णता प्राप्त करने के लिए दुर्लभ, दिव्यता एवं पूर्णता से युक्त जगमगाहट भरी ये दीक्षाएं, जो योगियो के लिए भी दुर्लह हैं .... और फिर परम पूज्य सद्‌गुरुदेव के द्वारा ये दीक्षाएं प्राप्त हो, तो इससे बडा जीवन का सौभाग्य और हो भी क्या सकता हैं ।

संसार की दुर्लभ और अद्वितीय दीक्षाएं



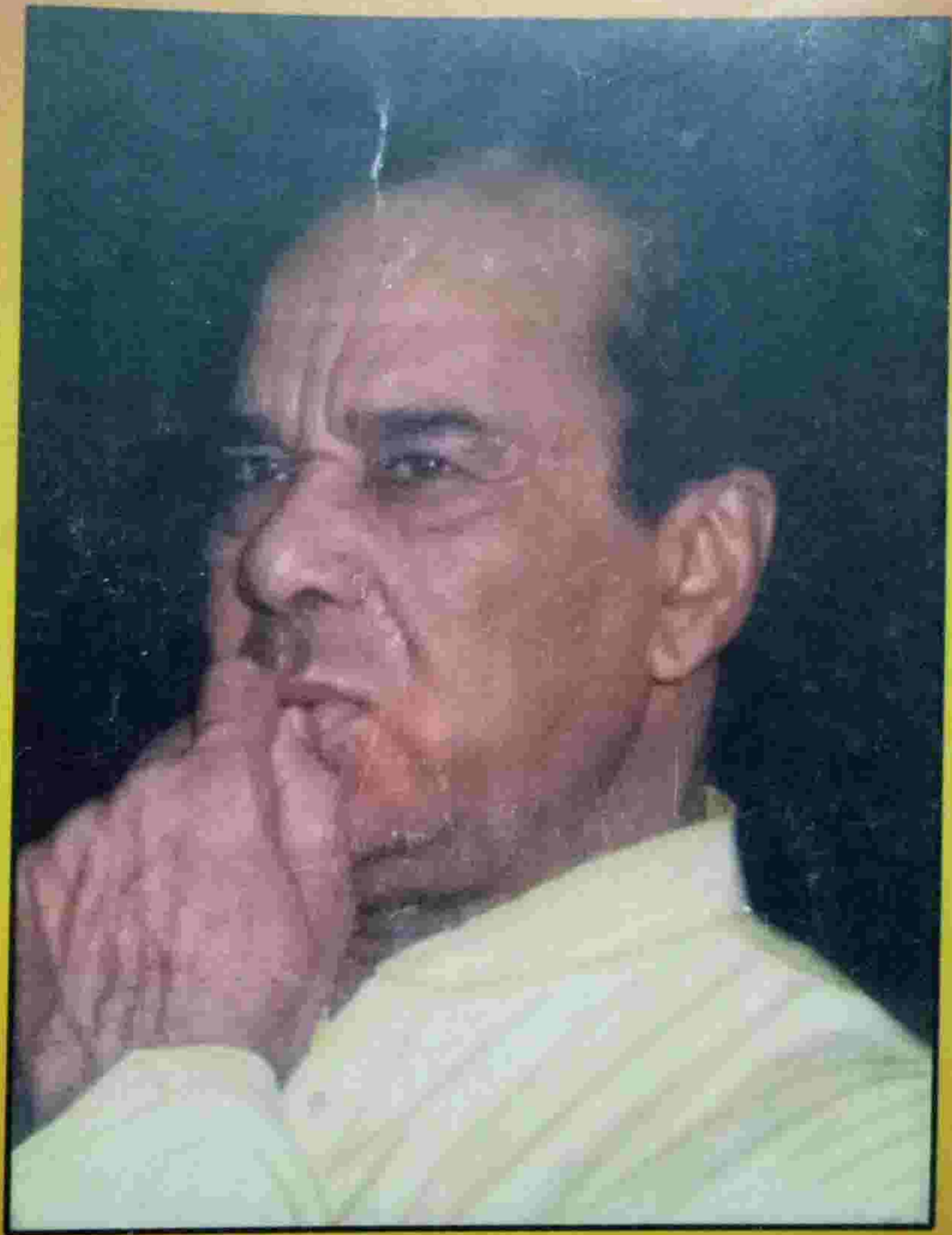
ज्ञान दीक्षा
यक्षिणी दीक्षा
महालक्ष्मी दीक्षा
ऋण मुक्ति दीक्षा
रोग मुक्ति दीक्षा
धनवन्तरी दीक्षा
जीवन मार्ग दीक्षा
वगलामुखी दीक्षा
गुरु प्रत्यक्ष दीक्षा
राज्याभिषेक दीक्षा
चैतन्य लामा दीक्षा
सावर सिद्धि दीक्षा
उर्वशी सिद्धि दीक्षा
अप्सरा प्राप्ति दीक्षा
वीर वैताल दीक्षा
पूर्ण पौरुष प्राप्ति दीक्षा
कुण्डलिनी जागरण दीक्षा
शत्रु वाधा निवारण दीक्षा
गृहस्थ सुख समृद्धि दीक्षा
मनोवांछित कार्य सिद्धि दीक्षा
तारा महाविद्या सिद्धि दीक्षा

"दीक्षाका तात्पर्य यह नहीं है, कि आप जिस उद्देश्य के लिए दीक्षा ले रहे हैं, वह कार्यसम्पन्न हो ही जाय, अपितु दीक्षा का तात्पर्य तो यह है, कि आप जिस उद्देश्यके लिए दीक्षा ले रहे हैं, उस कार्यके लिए आपका मार्ग प्रशस्त हो ।"

अनंग दीक्षा
गोम्पा दीक्षा
ब्रह्माण्ड दीक्षा
राजयोग दीक्षा
सम्मोहन दीक्षा
क्रिया योग दीक्षा
कायाकल्प दीक्षा
पापमोचनी दीक्षा
षोडश कला दीक्षा
गणेश सिद्धि दीक्षा
कुबेर सिद्धि दीक्षा
तंत्र साफल्य दीक्षा
दस महाविद्या दीक्षा
नेत्र चुम्वकत्व दीक्षा
भविष्य सिद्धि दीक्षा
सिद्धाश्रम प्रवेश दीक्षा
सिद्धाश्रम प्राप्ति दीक्षा
लक्ष्मी कल्पवृक्ष दीक्षा
रतिकाम सौन्दर्य दीक्षा
सहस्रार जागरण दीक्षा
सर्व साधना सिद्धि दीक्षा

नोटः साधक अपनी सुविधानुसार उपरोक्त दीक्षाओं में से मनोवांछित दीक्षा प्राप्त कर सकते हैं। ये दीक्षाएं पूज्य गुरुदेव ही प्रदान करते हैं । दीक्षा लेने आने से पहले फोन द्वारा जोधपुर अथवा दिल्ली सम्पर्क स्थापित कर पूर्ण जानकारी प्राप्त करलें ।

मंन्त्र-तंन्त्र-यंन्त्र विज्ञान, डा.श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर, फोनः 0291-432209
सिद्धाश्रम, 306 कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, नई दिल्ली फोनः 011-7182248



डा. नारायण दत्त श्रीमाली

मूल्य: - ने. रु. १२५/-
भा. रु. ८०/-